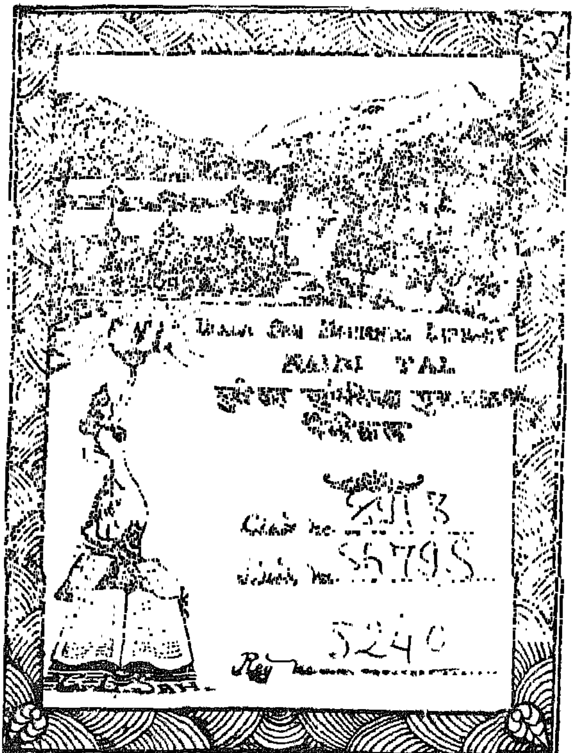

Durga Sah Municipal Library
NAINI TAL
दुर्गासाह म्युनिसिपल लाइब्रेरी
नैनीताल
Class No.
Book No. 55795
Reg No. 5240

साँच को आँच

देश के बटवारे के परिणाम स्वरूप एक नाई पाकिस्तान चला जाता है। वहाँ उसे किसी हिन्दु का बहुत बड़ा मकान और बहुत साधन हाथ लगता है। अब वह अपने परिवार के साथ बड़ी शान-शौकत से रहने लगता है और जाहिर करता है कि वह खानदानी नवाब है। अपनी असलिल को छुपाने और इस खान-दानी नवाबी के ढोंग को कायम रखने की कोशिश में उसे अजीब-अजीब घटनाओं का सामना करना पड़ता है।

हर समय उसे यही खटका लगा रहता है कि कहीं उसकी असलियत का भेद न खुल जाये किन्तु हर प्रकार से सतर्क रहने पर भी उसकी असलियत का भांडा चौराहे में फूट [illegible] है।

[illegible] थानवी का यह उपन्यास कथानक [illegible]थ व्यंग और हास्यरस के दृष्टि [illegible]जोड़ है।

साँच को आँच

शौकत थानवी

प्रकाशक

नारायण दत्त सहगल एण्ड सन्ज़

दिल्ली

प्रकाशक :—
नारायण दत्त सहगल एण्ड संज,
दरीबा कलाँ, दिल्ली

द्वितीय संस्करण १९६१

मूल्य—तीन रुपये पिचहत्तर नये पैसे

मुद्रक:—
नूतन प्रेस
चाँदनी चौक, दिल्ली

SANCH KO ANCH SHOKAT THANVI : RS. 3

दो शब्द

हास्य और व्यंग्य उर्दू साहित्य की एक विशेषता है। उन्नीसवीं सदी के अंत ...जब साहित्य में यथार्थवाद का प्रादुर्भाव हुआ, जब देश में सामाजिक और ...जनीतिक चेतना फैली और जब अंध-विश्वास और रूढ़िवाद के मुकाबले में ...द्धिवाद का विकास होने लगा तो हास्य और व्यंग्य ने पुराने पर प्रहार करने ... नये को प्रोत्साहन देने के लिए एक प्रभावशाली शस्त्र का काम दिया। ...ऊ का 'अवध पंच' इस बात के लिए प्रसिद्ध था। उसने अच्छे-अच्छे ... देश को दिये। पंडित रतननाथ सरशार को, जिन्होंने 'फ़साना-ए-आज़ाद' ...और जिसका मुन्शी प्रेमचन्द ने 'आजाद कथा' के नाम से हिन्दी ... किया, कौन नहीं जानता? अकबर इलाहाबादी की कविताएँ देश-भर ... हैं। उन्होंने उच्च पदाधिकारी होते हुए भी ब्रिटिश सरकार पर गहरे ...पूर्ण व्यंग्य-प्रहार किये हैं और मज़हब की कट्टरता और रूढ़िवाद पर ...याँ कसी हैं। दोनों का सम्बन्ध 'अवध पंच' से था।

कहानी हो या कविता, दोनों में यह परम्परा विकसित होती रही है। गम्भीर लिखने वालों की कृतियों में भी हास्य और व्यंग्य की पुट रहती है। लेकिन कुछ लेखकों ने हास्यपूर्ण और व्यंग्यात्मक साहित्य की रचना ही में विशेषता प्राप्त की है। उन में अज़ीम बेग चग़ताई, मौलाना अब्दुल मजीद सालिक, चरागहसन हसरत, रशीद अहमद सदीकी पितरस (ए०एन०बुख़ारी), ... जाफ़री, मजीद लाहौरी, शफ़ीकुल रहमान और कन्हैयालाल कपूर ...द्ध हैं। शफ़ीकुल रहमान और कन्हैयालाल कपूर सिर्फ़ कहानियाँ ... ...स के लेखक शौकत थानवी भी हास्यपूर्ण और व्यंग्यात्मक ... की रचना करते हैं। उन्होंने कहानियों के अतिरिक्त 'मौलाना', 'दामाद', 'बकवास', 'चारसौ बीस' और 'सांच को आँच' आदि कई उपन्यास लिखे हैं, जिन्हें उर्दू और हिन्दी के साधारण पाठक शौक से पढ़ते हैं।

शौकत थानवी बटवारे से पहले लखनऊ में रहते थे। उनका सम्बन्ध भी 'अवध पंच' से रहा है और शुरू-शुरू में उसके द्वारा ही ख्याति प्राप्त की है। देश के बटवारे के बाद वह पाकिस्तान चले गए हैं और अब लाहौर में रहते हैं और रेडियो पर मुलाजिम हैं।

बटवारे ने हमारे जीवन को अस्त-व्यस्त कर दिया; बहुत से भयानक और दुःखप्रद दृश्य देखने में आये और लाखों आदमी अपने घरबार छोड़ कर उधर से इधर और इधर से उधर जाने पर मजबूर हुए। दुनिया के इतिहास में इतनी बड़ी आबादी का परिवर्तन पहले कभी नहीं हुआ और न लोगों को अकारण इतनी यातनाएँ सहन करनी पड़ीं। इस पर बहुत कुछ लिखा जा चुका है और उन में हमें निरपराधों का दुःख, दर्द और आँसू मिलते हैं। शौकत थानवी के प्रस्तुत उपन्यास का विषय भी यही बटवारा है; लेकिन उन्होंने दुःख, कराहों और आँसुओं में भी व्यंग्य का पहलू ढूंढ निकाला है।

उपन्यास की कहानी संक्षेप में यह है कि इस बटवारे के कारण एक नाई हिन्दुस्तान से पाकिस्तान जाता है। वहाँ उसे किसी हिन्दू का बहुत बड़ा मकान और बहुत-सा धन हाथ लगता है। वह, उसकी पत्नी और उसका एकमात्र लड़का फ़रहत इस मकान में शान से रहते हैं और यह महाशय अब नवाब अजमतुल्ला खाँ बन बैठते हैं और अपने-आपको ख़ानदानी नवाब सिद्ध करते हैं। उन्हें डर है कि कहीं लोगों को उनकी असल जाति का पता न चल जाय और उनकी नवाबी का भांडा चौराहे में न फूट जाये; इसलिए वह हर तरह से टीप-टाप बनाये रखते हैं। उनकी पत्नी घामड़ है, उसे पढ़ाने और सभ्य बनाने के लिए एक ईसाई महिला मिस पाल को मुलाजिम रखते हैं। फिर भी उन्हें खटका लगा रहता है कि भेद इसी औरत की जबानी खुलेगा; इसलिए वह उसे पास पड़ोस में पागल प्रसिद्ध कर देते हैं। पड़ोस में एक ख़ान बहादुर रहते हैं, उनकी इकलौती लड़की रअना से इनके लड़के फ़रहतुल्ला का रोमांस चलता है और रिश्ता तय हो जाता है। भेद खुल जाने के भय से नवाब अजमतुल्ला खाँ चाहते हैं कि निकाह चुपके-चुपके हो जाए, बाद में अगर असल जाति मालूम भी हो जायेगी तो कुछ नहीं बनेगा। लेकिन यह भेद पहले ही खुल जाता है। होता यों है कि उनकी बीवी चाहती है कि लड़के की शादी उनके भाई की बेटी

नज्जो से हो, जिसका वादा वह पहले से कर चुकी है। वह ख़त लिख कर अपने भाई, भावज और उस लड़की को बुला लेती है। झगड़ा बढ़ता है और नवाब अज़मतुल्ला के साले की ज़बानी ख़ान बहादुर को सारा भेद मालूम हो जाता है। लेकिन अब बात यों बनती है कि ख़ान बहादुर साहब ख़ुद जाति के कनमैलिया थे और अपनी जगह डर रहे थे कि कहीं नवाब अज़मतुल्ला को उनकी असल जाति मालूम न हो जाये। भेद खुलने से दोनों ओर का भय दूर हो जाता है और ख़ुशी-ख़ुशी विवाह सम्पन्न हो जाता है।

शौकत थानवी ने इस कथा को बड़ी अच्छी तरह निबाहा है। जैसे-जैसे कहानी आगे बढ़ती है, वह और भी रोचक होती चली जाती है। आगे चलकर ख़ान बहादुर के भतीजे शिब्बू मियाँ आ जाते हैं, जो एक विचित्र व्यक्ति हैं और उपन्यास की रौनक को और बढ़ा देते हैं। उपन्यास के दूसरे पात्र तो साधारण बन पड़े हैं; लेकिन इस शिब्बू मियाँ, मिस पाल और रअना के पात्र ऐसे हैं जो मस्तिष्क पर अंकित रहते हैं। शुरू से अंत तक लेखक की शैली हल्की-फुल्की है। उसने कहीं भी गम्भीर सामाजिक विश्लेषण अथवा जीवन की गहराइयों में जाकर कथानक को बोझल बनाने का प्रयत्न नहीं किया।

उपन्यास में एक बात अवश्य खटकती है कि इस अज़मतुल्ला नाई को एक हिन्दू के घर में नवाबी ठाठ का सामान कैसे मिल गया, जिस में शेरवानियाँ और मुस्लिम पहरावे के दूसरे वस्त्र भी शामिल हैं। कहीं-कहीं परिहास और व्यंग्य का स्तर भी कुछ ऊँचा नहीं रहता। अज़मतुल्ला के नाईपन को ज़रूरत से अधिक उछाला गया है। इसका कारण शायद यह हो कि शौकत थानवी हमेशा साधारण कोटि के पाठकों को दृष्टि में रखकर अपने साहित्य की रचना करते हैं। बहर हाल उनके इस उपन्यास से जाति-अभिमान और विडम्बना पर गहरा व्यंग्यप्रहार होता है और बीच में वह हास्य की ऐसी फुलझड़ियाँ छोड़ते हैं कि गम्भीर-से-गम्भीर पाठक भी चौंक उठता है और उनकी प्रतिभा का कायल हो जाता है।

शौकत थानवी बहुत ही सरल और सुबोध भाषा लिखते हैं। वह हिन्दी से बहुत विभिन्न नहीं है लेकिन उर्दू मुहावरा और ख़ास तौर पर शेरों का यत्र-तत्र प्रयोग करते हैं, जिन्हें छोड़ा भी नहीं जा सकता और जिनका अनुवाद

भी कठिन है। फिर उपन्यास का वातावरण मुस्लिम घराने का वातावरण है, उसमें जो भाषा प्रयोग होती है, अगर उसे बदल दिया जाए तो उपन्यास की आत्मा ही नष्ट हो जाती है। इसलिए हमने अनुवाद को असल के अधिक-से-अधिक निकट रखने का प्रयत्न किया है और इस बात का भी ध्यान रखा है कि हिन्दी पाठक उसे सहज में समझ सकें। उर्दू और हिन्दी का व्याकरण एक है, सिर्फ़ शैली में भेद है और यह तभी मिट सकता है जब दोनों को सरल सुबोध बनाने का प्रयत्न किया जाये। उर्दू से हिन्दी में अनुवाद करने के बजाय ज़रूरत इस बात की है कि उर्दू की सरल और सुबोध पुस्तकों को देवनागरी लिपि में लिखा जाये।

आशा है कि हिन्दी के पाठक शौकत थानवी की दूसरी रचनाओं की भाँति इस उपन्यास का भी हृदय से स्वागत करेंगे।

अकबर मंज़िल
उर्दू बाजार, दिल्ली
१२ दिसम्बर, १९५६

हंसराज 'रहबर'

: १ :

हुज़ूर, मैं एक मुहाजिर हूँ और असलियत मेरी यह है कि जाति का पता तो ख़ैर वालिद साहब को होगा लेकिन अगर पेशे का कोई सम्बन्ध जाति से समझा जाता है, तो मैं अर्ज़ करूँ कि हिजरत से पहले हम लोगों का एक हेयर कटिंग सैलून शहर के मुख्य बाज़ार में था, जिसमें बाल कटवाने साधारण लोग नहीं बल्कि वे बड़े लोग आया करते थे, जो बाल कटाई एक रुपये से कम ख़ैर देते ही न थे मगर कभी-कभी पाँच रुपये तक मिल जाते थे। बड़े-बड़े मोटर वाले हमारे यहाँ आते थे और हम भी बाल बनाने में उनके साथ अजीब-अजीब चोंचले बरता करते थे। भाँति-भाँति के बिजली के यन्त्र लगा रखे थे। एक गीले बालों को सुखाने का टोप, बालों में घूँघर पैदा करने के विभिन्न यन्त्र थे और इस सिलसिले में बड़े-बड़े परिवारों की बेगमात, साहबज़ादियाँ भी आया करती थीं बल्कि बहुत सी लड़कियाँ तो बाल भी कटाती थीं। सारांश यह कि हमारा हेयर कटिंग सैलून खूब चल रहा था। मुझको अच्छी तरह याद है कि वालिद साहब कभी-कभी घर में कहा करते थे कि उन्होंने कैसी साधारण स्थिति से यह उन्नति की है। उन्हीं से हमको भी मालूम हुआ कि दादा जान रेलवे स्टेशन के बाहर अपने उस्तरे और कैंचियाँ एक छोटे से टीन के सन्दूकचे पर रख कर बैठा करते थे—और अपने ग्राहकों के लिए दो ईंटें जोड़कर सामने रख ली थीं। उन्हीं पर आकर ग्राहक बैठ जाते थे और दादा जान उनकी दाढ़ी मूँड दिया करते थे या सिर पर उस्तरा फेर दिया करते थे। वालिद साहब ने उन्नति की तो पहले स्टेशन के प्लेटफ़ार्म पर हर आने-वाली ट्रेन के समय पहुँच जाते थे और मुसाफ़िरों की शेव बनाया करते थे। इस काम में ख़ुदा ने इतनी बरकत दी कि कुछ ही दिनों के बाद उन्होंने एक दरवाज़े वाली एक दुकान किराये पर लेकर बाल बनाना शुरू कर दिया और इसी दुकान पर उनका काम ऐसा चला कि आख़िर शहर के सब से बड़े बाज़ार में एक बढ़िया

हेयर कटिंग सैलून खोलकर दो-तीन नाई नौकर रख लिये। वालिद साहब को व्यापार की बड़ी अच्छी सूझ-बूझ थी। वह अपनी दुकान की आमदनी दुकान पर ही लगा दिया करते थे और घर में चाहे जैसे भी रहें; मगर दुकान पर सदा पतलून पहन कर जाते थे और जो नाई नौकर रखे थे उनको भी बड़ा फ़ैशनेबल बनाए रखते थे। धीरे-धीरे उन्हें यह भी महसूस होने लगा कि जिस उच्च वर्ग से उनको आये दिन वास्ता पड़ता है, उसके लिए यह आवश्यक है कि वह या खुद अंग्रेज़ी में बात करें या कोई अंग्रेज़ी जानने वाला उनके सैलून में हो इसलिए कि अकसर साहब लोग भी सैलून में आ जाया करते थे। खैर काम निकालने भर की अंग्रेजी वालिद साहब भी बोल लेते थे, जैसे 'यस-सर' और 'नो-सर'। मगर मुसीबत यह थी कि अंग्रेज़ औरतों से भी जब 'यस-सर' और 'नो सर' कहा करते थे तो वे मुसकराया करती थीं। और कई बार वे साहब लोगों के बड़े-बड़े अंग्रेज़ी वाक्यों पर महज़ अटकल से 'यस सर' और 'नो सर' कहा करते थे, इसलिए उनका विचार यह था कि उनका यह कारोबार और भी चमक सकता था बशर्ते कि वह अंग्रेजी जानते होते। इस अभाव की पूर्ति के लिए वालिद साहब ने हमें अपने कारोबार में हिस्सा लेने के अलावा स्कूल में भर्ती कर रखा था। शाम को हम अपने हेयर कटिंग सैलून में चले जाते और दिन-भर स्कूल में रहते। बाल बनाना आदि तो खैर आ ही चुका था; मगर पढ़ने-लिखने के सिलसिले में भी हम पीछे न रहे और मैट्रिक पास करने के बाद वालिद साहब का इरादा यह भी था कि हमें कालिज में दाखिल कर दें; मगर यह फ़साद ही शुरू हो गया और हम लोग सब कुछ छोड़-छाड़ इधर आ गए।

यहाँ आकर मालूम नहीं वालिद साहब ने क्या चाल चली कि हमको तुरन्त एक बन्द मकान पर कब्जा मिल गया और इस बन्द मकान में हमें ऐसी-ऐसी चीज़ें हाथ लगीं कि जिनका अनुमान भी न था। ज़ेवर और कपड़ा, फर्नीचर और बर्तन। गर्ज़ कि एक भरा हुआ घर, जिसमें एक उच्च [illegible] की आवश्यकता की हर चीज़ मौजूद थी और तो और नकद रुपया भी इतना मिल गया कि अब हमारे लिए हेयर कटिंग सैलून खोलने और बाल [illegible]कर पेट पालने की ज़रूरत बाकी न रही, बल्कि वालिद साहब ने हम सबको [illegible]-

बार ताकीद की कि ख़बरदार ! जो किसी से यह कहा भी कि हम लोग हजामत बनाया करते थे। फलस्वरूप कुछ ही दिनों में वालिद साहब बजाए मास्टर अज़मत या ख़लीफ़ा अज़मत के नवाब अज़मतुल्लाह ख़ाँ और हम साहबज़ादे फ़रहतुल्लाह ख़ाँ के नाम से मशहूर हो गये। और वालिद साहब ने पास-पड़ौस के लोगों को सहज ही में इस बात का यक़ीन दिला दिया कि हम बड़ी दौलत छोड़कर आये हैं। धरती में गड़े ख़ज़ाने, सोने की ईंटें, बैंक का रुपया, घर-बार, गाँव-गिरांव, गाड़ी-मोटर, नौकर-चाकर सब कुछ छोड़कर इधर आना पड़ा है। घर में जो लाख, सवा लाख रुपया नकद था, बस वही साथ आ सका। महल्ले वाले उनकी शिष्टता और शालीनता से सहज ही में प्रभावित हो गये। इस उदारता से चन्दे दिये कि अफ़सर भी खुश। जो कोई भी कुछ सवाल लेकर आ गया उसे प्रसन्न ही कर दिया। यही बातें हुआ करती हैं एक व्यक्ति को लोकप्रिय बनाने के लिए। फिर यह कि आये दिन उनकी दावतें, कभी कोई अफ़सर चला आ रहा है, कभी कोई बड़ा आदमी हमारे घर में खाने पर मौजूद है और हाल यह है कि कभी मोटर पर सौ-दो-सौ कम्बल लेकर शरणार्थियों के कैम्प पर पहुँच गये और अफ़सरों द्वारा उनको बाँट दिया। कभी खाने को अपने हल्के के थाने में भिजवा दिया कि कैम्प में भिजवा दिया जाये। जब कभी कोई फ़ंड खोला गया आप उसमें पेश-पेश। सात-आठ शरणार्थियों को खुद अपने यहाँ ले आए और उनका सब खर्च सहन करने लगे। सारांश यह कि अब हर किसी की ज़बान पर नवाब अज़मतुल्लाह ख़ाँ का नाम था।

मगर साहब एक बात है कि वालिद साहब अगर ज़रा भी पढ़े-लिखे होते तो जाने क्या करते जबकि अपढ़ होते हुए उनका यह हाल था कि जिस समय वह किसी विषय पर बात शुरू कर देते थे, अपने सामने किसी का चिराग़ न जलने देते थे। वह आकर्षण था उनकी भाषा में और उच्चारण भी ऐसा शुद्ध कि किसी को संदेह भी नहीं हो सकता था कि यह महाशय कभी नाई भी रहे होंगे। और यह जो कुछ हो रहा है यह भी तो हजामत ही का ढंग है। अलबत्ता घर पर आकर जब वह भीतर जाते थे तो कभी-कभी अपना वास्तविक रूप प्रकट करते थे, विशेषतया ऐसी स्थिति में जब कोई पारिवारिक समस्या सम्मुख हो।

अतएव आज भी एक समस्या सामने थी। हमारी वर्षगाँठ हर साल इस प्रकार हुआ करती थी कि बिरादरी का खाना होता था, जिसमें एक-से-एक खलीफ़ा नज़र आता था और औरतें ढोलक पर रात-भर गाने गाकर सुबह करती थीं। सुबह यही औरतें गुलगुले और चिरागी के पैसे लेकर किसी मस्जिद में जाती थीं और ताक भर आती थीं। अतएव स्त्रियों का इस बार भी यही विचार था कि बिरादरी का भोजन होगा और रतजगा होगा; मगर वालिद साहब ने इसका कड़ा विरोध किया और एक मोटी सी गाली वालिदा साहिबा की शान में इरशाद फ़रमाने के बाद बोले—

वही मिसल कि नाली के कीड़े को सुगन्ध की डिब्बियों में बन्द कर दो तो उसका फड़-फड़ा कर दम निकल जाएगा। हो न आखिर असल नस्ल की नाइन! तुम भला अपना नाईपन भूल सकती हो? हज़ार मर्तबा मना किया कि अब कोई ऐसी बात मत करो जिसमें अपनी असलियत का पता चले। हम यहाँ उच्च जाति के शरीफ़ज़ादे बने हुए हैं, कोशिश कर रहे हैं कि किसी बड़े परिवार में लौंडे का ब्याह करके शरीफ़ों में शामिल हो जायें और वे हैं कि अपनी असलियत उछालती फिरती हैं। रतजगा करेंगी! ढोलक ठुनकायेंगी! गाने गाये जायेंगे!"

वालिदा ने जलकर कहा—"ऐ सुना कि नहीं? तुम भूल जाओ अपने बाप-दादों को, मुझसे तो यह नहीं हो सकता कि मैं बड़ों के रीति-रिवाज भूल कर बैठ रहूँ। तो क्या तुम्हारा मतलब यह है कि वर्षगाँठ ही न मनाई जाय?"

वालिद साहब ने हुक्के का कश लेते हुए फ़रमाया—"यह कौन कह रहा है मगर अब वर्षगाँठ होगी इस तरह कि जिस तरह बड़े आदमियों की होती है। दावत होगी ठाठदार! बड़े-बड़े रईस, हाकिम, वकील, डाक्टर, सौदागर, ये लोग आयेंगे। अब यह थोड़े ही हो सकता है कि मैं नाइयों को जमा कर लूँ, दूसरे यहाँ अपनी बिरादरी का है कौन?"

वालिदा ने पूछा—"और रतजगा?"

वालिद साहब ने तुरन्त असलियत पर आते हुए कहा—"तेरे दिमाग़ में तो भरा है भूसा रतजगा की बच्ची! रतजगा कहीं शरीफ़ आदमियों में होता

है ? ऐसा ही गाने का शौक है तो मुजरा करा लो।"

वालिदा साहिबा ने आश्चर्य से पूछा—'वह क्या बला है ?'

वालिद साहब ने क़हा—"रंडी का नाच ! अब समझीं ? नाक में दम कर दिया है इस औरत ने ! मुझे यह ख़बर होती तो नाक काटकर उधर ही छोड़ आता।"

वालिदा साहिबा इस प्रकार के व्यवहार की आदी हो चुकी थी। उनके लिए यह कोई बुरा मानने की बात न थी। अलबत्ता खीझ होती थी हमें कि हम मैंट्रिक पास करके अपनी औकात से बाहर हो चुके थे। मगर कहते तो क्या कहते। अभी दो हजार गालियाँ हमको भी सुना दी जातीं; इसलिए ऐसे अवसरों पर चुप ही हो जाते थे। अब वालिद साहब वालिदा साहिबा को समझा रहे थे—

"तुम्हें क्या मालूम कि मैं किस फ़िक्र में हूँ। अल्लाह ने रुपया दिया है, पैसा दिया है, इज़्ज़त दी है। अपनी एक बात है जो हर जगह बनी हुई है। बस जरा कमी है तो यह कि जाति का मामला ज़रा गड़बड़ है। सो इस का भी उपाय यह है कि लौंडे को किसी ऊँचे शरीफ घराने में ब्याहेँ देंगे तो ज़ाहिर है कि शरीफ़ ही हो सकता है किसी शरीफ का समधी। मेरी नजर में हैं ख़ान बहादुर साहब जो अकसर आया करते हैं मोटर पर—वे जो सामने वाली सफेद कोठी में रहते है न ?"

वालिदा साहिबा ने कहा—"हाँ, हाँ, समझ गई अली हुसैन ख़ाँ को कह रहे हो न ?"

वालिद साहब करीब खिसक कर बोले—"हाँ, वही। लखपति है बुड्ढा और बड़ा खरा पठान है। लड़की भी उसकी ऐसी है—चन्दे आफ़ताब, चन्दे माहताब, देखो तो नजर जम कर रह जाये। इकलौती लड़की है और इसी का सब कुछ है। अगर इसके साथ हो जाये बातचीत पक्की, तो समझो कि हो गये हम भी हमेशा के लिए शरीफ। फिर धन की तो कोई कमी ही नहीं और लौंडिया पढ़ी-लिखी, शक्ल-सूरत की अच्छी, बाइस्कल पर वह बैठ ले, मोटर वह चला ले, परों वाली गेंद का खेल तो इस सफ़ाई से खेलती है कि वाह ! जी वाह !"

वालिदा साहिबा ने कहा—"हाँ, मैं देख चुकी हूँ इस लड़की को। मगर कहाँ वे, कहाँ हम!"

वालिद साहब ने आँखें निकाल कर घूरते हुए कहा—"यह क्या बात हुई। अरे भई, यह तो हमको मालूम है न कि हम जाति के क्या हैं? उनको तो यही मालूम है कि हम भी उच्च परिवार के खरे पठान हैं। रह गया धन, तो हम लखपति न सही मगर यह तो उनको भी मालूम है कि खाते-पीते रईस हैं, हम भी। यह क्या तुमने कहा कि कहाँ वे, कहाँ हम। तुम्हें पता भी है कि मैं इस ज़िक्र को छेड़ भी चुका हूँ अब तुम जानो, लड़की वाले एकदम से तो 'हाँ' कर नहीं देते। हँसकर कहने लगे कि देखा जायेगा और फिर बोले कि अब वह ज़माना है कि लड़की और लड़के दोनों की मर्ज़ी भी देख लेनी चाहिये।"

वालिदा साहिबा ने कहा—"लो, और सुना। तो क्या अब वे लड़की से पूछेंगे?"

वालिद साहब ने कहा—"तुम नहीं जानतीं, बड़े आदमियों में यही होता है, और पढ़ी-लिखी लड़कियाँ तो अपनी पसन्द के बिना शादी होने ही नहीं देतीं। कहीं हमारी-तुम्हारी तरह थोड़े ही कि न मैंने तुमको देखा था न तुमने मुझको। अन्धा जुआ खेला गया था और जब पहले-पहल तुमको देखा था तो दिल धड़क रहा था कि कहीं कानी-खतरी हुई तो क्या करूँगा मैं? मालूम नहीं आँखें दोनों हैं कि एक है?"

वालिदा साहिबा ने कहा—"कहीं भी नहीं। तुम्हारे यहाँ से आई तो थीं औरतें मुझे देखने।'

वालिद साहब ने कहा—"एक तो औरतें इस मुआमले में झूठ बोला करती हैं, दूसरे मारे शर्म के तुमने आँखें बन्द भी तो कर ली थीं। अब किसे खबर कि इन बन्द आँखों में आँखें हैं भी या इलाका ही गायब है कोई सा। मतलब यह कि उच्च परिवार में ये बातें नहीं होतीं। अब तो लड़का लड़की को अच्छी तरह देख-भाल सकता है, लड़की लड़के को बल्कि माँ, बाप तो बाद में शादी करते रहते हैं पर कौल-करार तो पहले ही हो चुके होते हैं और मेल-जोल भी पहले ही बढ़ा लेते हैं।"

वालिदा साहिबा ने कहा—"बड़े आदमियों की बड़ी ही बात ! मगर मैं यह पूछती हूँ कि अगर शादी के बाद उनको यह पता चला कि हमारी असलियत क्या है तो क्या होगा ?"

वालिद साहब ने कहा—"पता भला कैसे चल सकता है ? ये पते चला करते हैं अपनी ही बिरादरी के लोगों से या उनसे जो अपनी असलियत खुद उछालते फिरते हों। अब तुम्हीं बताओ कि मुझे या फ़रहत को देखकर कौन कह सकता है कि ये नाई हैं। अलबत्ता डर लगता है मुझको तुमसे कि तुम कोई ऐसी बात न कर बैठो, जिससे यह भाँडा फूट जाये और बना-बनाया खेल बिगड़ जाये। अब जो तुम यह रतजगे और ताक भरने की-सी बात करोगी तो नतीजा यही होगा कि हमारी शराफ़त की तरफ़ से लोगों के शक बढ़ेंगे। दूसरे अपना यह तौर-तरीका भी बदलो कि कड़वा तेल सिर में डालकर पट्टियाँ चिपका ली या कंघी करने जा बैठी तो कंघी के दनदानों से जुएँ निकाल-निकालकर मारना शुरू कर दीं।

वालिदा साहिबा ने विस्मय से कहा—"उई ! तो क्या जुएँ मारना भी गुनाह है ? चाहे जुएँ मुई सिर मैं हुड़दंगें मारती फिरें।"

वालिद साहब ने कहा—"बड़े आदमियों की बेगमों के सिर में जुएँ पड़ती ही नहीं हैं। वे इस कद्र सिर की सफ़ाई रखती हैं कि जुएँ पैदा ही नहीं होतीं। तुमको चाहिए कि रोज़ नहाओ, अच्छे से अच्छा तेल इस्तेमाल करो, बल्कि मैं तो इस फ़िक्र में हूँ कि तुम्हारे लिए कोई ढंग की उस्तादनी मिल जाये तो रख लूँ, जो तुमको कुछ तो आदमी बनाये। फ़िलहाल तो यह मालूम होता है कि न जाने कहाँ से पकड़ कर लाई गई हो। न मैं तुमको किसी से मिला सकता हूँ, न किसी को अपने घर बुला सकता हूँ। अच्छा देखो, मैं जल्दी ही किसी औरत का इन्तजाम करता हूँ, जो तुम्हारे जैसे जानवर को भी आदमी बना सके।"

और वाकई वालिद साहब ने गम्भीरता से एक ऐसी औरत की खोज शुरू की, जो वालिदा साहिबा को हर प्रकार से निखार और सँवार सके।

: २ :

जिन साहबजादी का वालिद साहब ने वालिदा साहिबा से ज़िक्र किया था, उनके बारे में अब इससे अधिक हम और क्या अर्ज़ कर सकते हैं कि जब से हम यहाँ आये हैं हमारी दृष्टि सब ओर से सिमट कर सिर्फ़ इन्हीं साहबजादी पर जम गई है। संयोग से हमारी कोठी का जो भाग विशेष रूप से हमारे अधिकार में है, उसके बिलकुल सामने है खाँ साहब की कोठी का वह भाग, जिसके सामने के कमरों में यह साहबजादी रहती हैं। और इन कमरों के सामने ही कभी बैडमिंटन का जाल लग जाता है और वह खेल शुरू हो जाता है, जिसको वालिद साहब परों वाली गेंद का खेल कह रहे थे। कभी साइकिल पोलो होने लगती है, कभी योंही दौड़-धूप शुरू हो जाती है, जिसमें हिरनियों की-सी किलोलें शामिल होती हैं। और हमने अपने कमरे में लिखने की मेज़ ऐसे कोने में लगा ली है कि इस मेज़ के करीब बैठ कर हम यह सब-कुछ जब तक देख सकते हैं देखा करते हैं। और इस लिखने-पढ़ने की मेज़ पर एक विचित्र अध्ययन का सिलसिला जारी है।

सुनहरे रंग के रेशम का अम्बार सिर पर लिए, अपनी बादाम-जैसी आँखों में चंचलता भरे, पतले-पतले गुलाबी होंठों पर मधुर मुसकान की लहरों में सुबह से शाम तक यह लड़की थपेड़े खाया करती है कभी किसी बात पर खिलखिलाकर हँस दी तो वातावरण मुखरित हो उठा। कभी किसी सहेली को इस प्रकार आवाज़ दी कि हमको ऐसा लगा कि हमारे सीने में दिल नहीं बल्कि एक बड़ा कान है, जो धड़क रहा है, अथवा इस आवाज़ को भरने की रिकार्डिंग मशीन है जो चल रही है; कभी वह अपने लॉन पर बड़ा-सा छाता गाड़ कर उसके नीचे बैठी पढ़ती है और चश्मा लगाए हुए एक मेम साहब उसको पढ़ा रही हैं। और तो और एकाध मर्तबा तो उसको हमसे बात करने की भी आवश्यकता आ पड़ी। मिसाल के लिए उसका वही परों वाला गेंद

चिड़िया की भाँति उड़ कर हमारे कम्पाउंड के किसी पेड़ पर आ गया और उसको विवश कहना पड़ा हमको देख कर—"ए, जनाब, मैंने कहा—मिस्टर, हमारा शटिल कॉक आ गया है उधर।"

और हम इस प्रकार मानो बड़ा परोपकार कर रहे हों, अँगूर की बेल हिलाकर या अगर किसी पेड़ पर चढ़ने की ज़रूरत हुई तो चढ़कर शटिल कॉक उतार दिया और उसने समधुर मुसकराहट के साथ कहा—"थैंक्यू।" यही एक शब्द हमारे मन और मस्तिष्क में मानो गूँज कर रह गया।

बात यह है कि इस प्रकार का जब आमना-सामना हो तो मनुष्य, हमारा मतलब उस मनुष्य से है, जो हमारे सदृश उच्च वर्ग का न हो, अजीब-अजीब छिछोरपन किया करता है। जैसे टहल रहे हैं, खामखाह कभी अपनी चाल में अल्हड़पन पैदा करके, कभी बड़े-बड़े कलाकार बनते, बाल कुछ उलझाए, कमीज़ का कालर कुछ खोले हुए और टाई कुछ ढीली बाँधे हुए। कभी विचित्र ढंग से सिगरेट पी रहे हैं, कभी धुएँ से छल्ले बना रहे हैं, तो कभी इस प्रकार के कश ले रहे हैं, जैसे कोई महान् विचारक किसी अन्तर्राष्ट्रीय समस्या को सुलझा रहा हो। कभी सिगरेट के बजाय पाइप सुलगा लिया है और समझ रहे हैं कि जो आजकल की लड़कियाँ होती हैं पाइप देखकर तो अपने दिल पर वे काबू रख ही नहीं सकतीं। कभी पूरा सूट पहने हुए अपनी छवि दिखा रहे हैं तो कभी सिर्फ़ कमीज़ और पतलून में शरीर और वस्त्र दोनों का प्रदर्शन हो रहा है कभी रेशमी ड्रेस-गाउन में सिर्फ़ स्लीपर पहने टहल रहे हैं तो कभी जालीदार बनियान पर तनज़ेब का बारीक कुर्ता है, ढीला पायजामा है, जयपुरी जूता है; हाथ में एक पुस्तक है और टहल-टहलकर मानो पढ़ रहे हैं, हालाँकि मकसद सिर्फ़ यह है कि अपने को दिखायें और उनको देखें, और कभी उधर से एक-आध रसीद भी मिल जाये फिर तो कयामत ही समझिये। अतएव कुछ इस प्रकार की कयामत गुज़र चुकी थी।

हुआ यह कि एक दिन हम कुछ अपने को बड़ा कलाकार बनाये हुए बाल बिखेरे, ढीला काश्मीरी पायजामा और निहायत नफ़ीस मलमल का कढ़ा हुआ लखनवी कुर्ता पहने एक पुस्तक हाथ में लिए टहल रहे थे कि सहसा कानों में जैसे जल-तरंग बज उठा। नज़र उठाकर जो देखते हैं तो वह अकेली न थी

बल्कि अपनी बहुत-सी हमजोलियों के साथ अपने लॉन पर मौजूद थी। और हमको ऐसा महसूस हुआ कि हमारे नज़र उठाते ही उन सबने हँसकर नज़रें चुरा लीं। वरना वे इसी ओर देख रही थीं और अब उनकी हँसी कुछ और बढ़ गई थी। हम फिर मानो पुस्तक पढ़ने में मग्न हो गये।

तभी एक आवाज़ आई।

"वनस्पति शास्त्र के विद्यार्थी आमतौर पर बाग़ ही में पढ़ा करते हैं।"

और उसके बाद सब हँस दीं। जाहिर है कि यह व्यंग्य हमीं पर था, जिसका प्रमाण यह है कि हमारा दिल तेजी से धड़कने लगा। मगर अभी इस वाक्य की गूँज ख़त्म नहीं हुई थी कि दूसरी आवाज़ आई।

"इसे पढ़ने का टहलना कहते हैं।"

सब की हँसी में एक महीन-सी आवाज़ आई—"यह क्या कर रही हो जमीला ?"

अब हमने टहलना छोड़कर, एक पेड़ के नीचे बैठकर पढ़ना शुरू कर दिया इस बीच में कुछ हँसी की आवाजें आती रहीं और कनखियों से हमने देखा कि हमारी पड़ोसिन हँसने वालियों को आँख के इशारे से मना कर रही है, मगर उसके मना करने के बावजूद एक आवाज़ आई—

"हम जहाँ बैठ के पढ़ लें वहीं कालिज बन जाये।"

और इस पर वह ठहाका लगा कि हम उठकर अन्दर चले आए और वहाँ अपनी सफलता का जश्न बड़ी धूम-धाम से मनाया गया, जिसको हमने उसी मेज़ से देखा जो इसी काम के लिए उस रुख पर लगाई गई थी। मगर इसके साथ हमने यह भी देखा कि हमारी पड़ोसिन के तेवरों से यह बात बरस रही थी कि मानो उसको यह ढंग पसन्द नहीं आया है। एक लड़की ने, जो सबसे कुरूप थी मगर सबसे अधिक चहक रही थी हमारी पड़ोसिन के करीब आकर कहा, "भई रअना, हमको अफ़सोस है कि हमने तुम्हारे पड़ोसी को नाराज़ कर दिया।"

मालूम हुआ कि शुभ नाम रअना है। इस शुभ नाम पर अभी हम झूम ही रहे थे कि रअना की आवाज़ आई—"बात यह है कि आज तक इस प्रकार की छेड़-छाड़ कभी इधर से हुई न उधर से।"

एक नेवले के शक्ल की, मगर बड़ी फ़ैशनेबल लड़की ने कहा—"यह आप सफ़ाई पेश कर रही हैं तो हमको पहले ही कब शुबह था ?"

एक डबलरोटी-नुमा लड़की ने कहा—"मगर आदमी बेचारा शरीफ़ है, चुपके-से चला गया।"

रश्ना ने कहा—"ख़ैर शरीफ़ तो वह है ही। इतने दिनों से हम लोग पड़ोसी हैं और आज तक कभी कोई ऐसी बात नहीं की कि जिस पर कोई ऐतराज़ किया जा सके।"

शराफ़त की यह सनद मिलते ही हमारी आँखों के सामने अपना हेयर कटिंग सैलून घूम गया, जिसमें हम एक हाथ में कैंची और एक हाथ में कंघा लेकर कच-कच कच-कच किया करते थे। इस विचार के साथ ही हम एकदम सहम कर रह गये कि खुदा न-खास्ता अगर इन लोगों को मालूम हो जाय कि हम लोग कौन हैं तो क्या हो ? इस ख़याल में हम ऐसे खोये कि अब जो नज़र उठाकर देखते हैं, तो वहाँ बैडमिंटन् खेलने की तैयारियाँ हो रही थीं। जाल लगाया जा चुका था, बल्ले सम्भाले जा चुके थे। एक तरफ़ रश्ना और वह नेवले के मुँह वाली फैशनेबल लड़की थी, दूसरी ओर वह सबसे कुरूप लड़की और एक और लड़की थी जो अल्लाह मियाँ की नहीं बल्कि अब्दुल रहमान चुगताई की कृति मालूम होती थी और वह डबलरोटी-नुमा लड़की कोर्ट के बाहर एक और लड़की के साथ खड़ी हुई बातें कर रही थी।

ज़रा हिमाकत तो देखिये अभी अपनी हँसी उड़वाकर आए थे और फिर बाहर जाने को जी चाहने लगा। जल्दी से मुँह धोया, चेहरे पर स्नो रगड़ी, धूप का चश्मा लगाया और बड़ी शान से टहलते हुए उस स्टेज पर आ गए, जहाँ अभी हूटिंग कराकर गए थे वहाँ खेल पूरी तेज़ी से जारी था कि हमारे पहुँचते ही फिर एक आवाज़ आई—

"ऐ आम्दनत बायसे आबादी मा।"

(तेरा आना हमारे लिए प्रसन्नता का कारण है।)

और रश्ना ने डाँटा—"यह क्या वाहियात है ?"

उस कुरूप लड़की ने कहा—"इसीलिए तो हम फ़ारसी में कह रहे हैं कि कोई समझे नहीं।"

डबलरोटी बोली—"हाँ, और क्या वरना वह न कहते कि—

"इन काली ऐनक वालों से ज़रा बच कर रहना जी।"

रअना एकदम चीख़ पड़ी—"ओ कम्बख़्त, अच्छा ठहर तो ज़रा।"

एक दम वह चिड़िया हमारे सामने आ गिरी; इसलिए कि उस चुगताई की कृति ने जानबूझकर हाथ ही ऐसा मारा था।

रअना ने लगभग रो देने के अन्दाज़ से कहा—"भई यह क्या कर रही हो। तुम लोग अब बताओ, भला शटिल कॉक कैसे आयेगा?"

बहुत आसान था कि हम शटिल कॉक उस ओर फेंक देते; मगर हमने भी कहा—कि हमको क्या गर्ज़ है!

नेवले की शक्ल की लड़की ने कहा—"माँग लो न जाकर रअना!"

रअना ने कहा—"हरगिज़ नहीं, मैं तो कभी न माँगूँगी, वाह! यह भी कोई बात है।"

वह कुरूप लड़की भी बोली—"मेरे ख़याल में खुद फेंक देंगे इधर।"

और हमने दिल में कहा—कभी जो हम फेंकें तो कौम का नाई न कहना।

डबलरोटी ने कहा—"अच्छा देखो, मैं जाती हूँ, शटिल कॉक लेने।"

रअना ने कहा—"खुदा के लिए बख़्शिये! मैं आप खुद माँगे लेती हूँ।" और रअना को अपनी ओर आते देखकर हम टहलते हुए दो कदम और बढ़ गए।

रअना ने अपनी सीमा तक आते हुए कहा—"सुनिये, मैंने कहा मिस्टर, देखिये ज़रा!"

हमने मानो चौंक कर कहा—"जी, मुझसे कहा?"

रअना बोली—"जी हाँ, हमारा शटिल कॉक आ गया है इधर।"

हमने कहा—"बहुत अच्छा, अभी लीजिये।"

और शटिल कॉक उठाकर बजाय उधर उछालने के, लिये हुए खुद रअना के पास जाकर कहा—"आज तो आपके यहाँ बड़ी चहल-पहल है!"

रअना बोली—"जी हाँ मेरी कुछ सहेलियाँ आई हुई हैं।"

शटिल कॉक देते हुए हमने कहा—'मेरे बारे में आपकी सहेलियों ने जो शायरी फ़रमाई है, उसका मेरी ओर से शुक्रिया अदा कर दीजिये।"

रअना ने कहा—"जी नहीं, मुआफ़ कीजिये, आप तो खुद विद्यार्थी होंगे

और जानते होंगे कि स्कूल और कालिज के विद्यार्थी इसी प्रकार की बातें करते हैं, खर उनकी ओर से मैं मुआफी चाहती हूँ।"

हमने हँसकर कहा—"मैं बुरा नहीं माना हूँ बल्कि दाद दे रहा हूँ उनके चुभते वाक्यों की, और ख़ास तौर पर इस मिसरे की—

"हम जहाँ बैठ के पढ़ लें वहीं कालिज बन जाये।"

रअना ने मुसकरा कर कहा—"जी हाँ, यह सरवर थीं, बड़ी शायर बनी फिरती हैं।"

और वह शटिल कॉक लेकर उधर गई और हम जान-बूझकर अन्दर चले आए ताकि इस वार्त्तालाप पर इनकी सहेलियों का तमाशा देख सकें। रअना के लौटते ही सब ने उसको घेर लिया।

डबलरोटी ने कहा—"तो यह कहिये कि बड़ी तफ़सीली गुफ़्तगू हुआ करती है, खुदा मुबारिक करे।"

रअना ने कहा—"आप लोगों की वजह से यह नौबत सिर्फ़ आज आई है।"

कुरूप लड़की बोली—"क्या मैं पूछ सकती हूँ जनाब से कि उनसे क्या बात हो रही थी ?"

रअना ने कहा—"बात का विषय आपका मिसरा था।"

'हम जहाँ बैठ के पढ़ लें वहीं कालिज बन जाये।'

उसने और भी कुरूपता से कहा—"मैं किस काबिल हूँ ? उनकी जर्रानवाज़ी है।"

रअना बोली—"शुक्रिया अदा कर रहे थे और कह रहे थे कि मेरे बारे में जो कुछ कहा गया है उसका मैं शुक्रगुजार हूँ।"

चुग़ताई की कृति बोली—"सच ?"

मालूम नहीं इसका रअना ने क्या उत्तर दिया जो फ़ासले के कारण हम स्पष्ट सुन न सके; मगर इस बातचीत का नतीजा यह हुआ कि बैडमिंटन ख़त्म, और सब लड़कियाँ कमरे में चली गईं। अलबत्ता हम इसी इंतज़ार में देर तक मेज़ पर बैठे रहे कि शायद उनका रुख़ फिर इधर हो जाए; मगर हमारी आशा पूरी न हुई।

यह थी वह पहली बातचीत जिसके बाद अब यह होने लगा कि जब कभी उनका सामना हो जाता तो हम पूछ लिया करते थे कि कहिये आज क्या हो रहा है ? और उधर से इसका रस्मी जवाब मिल जाया करता था। एकाध बार हमने जान-बूझकर अखबार माँग लिया। फिर किसी किताब की उनसे सिफ़ारिश कर दी कि मैं पढ़ रहा हूँ आप भी ज़रूर पढ़िये। नतीजा यह हुआ कि किताबों का लेन-देन शुरू हो गया। और इसके बाद इन किताबों पर विचार-विनिमय होने लगा। वह कभी-कभी टहलती हुई इधर आ जातीं और कभी हम कोई बहाना ढूंढकर और उनके भयंकर कुत्ते से, जो घोड़ा बनते-बनते जाने क्यों कुत्ता बनकर रह गया था, डरते हुए उनकी ओर चले जाते थे। मगर अब तक कोई नियमित मेल-जोल न था और इस मेल-जोल में उनकी मोटी-सी निहायत खुश्क वालिदा साहबा बाधा थी।

: ३ :

वालिद साहब ने वाकई दो-तीन दिन के भीतर-ही-भीतर खुदा जाने कहाँ से एक क्रिश्चियन महिला का प्रबन्ध कर लिया, जो स्थायी रूप से हमारे यहाँ तशरीफ़ ले आईं, और वालिदा साहिबा की शिक्षा के अलावा घर को अपटूडेट बनाने की ख़िदमत उनके सुपुर्द कर दी गई। उस महिला की आयु होगी कोई बीस-बाईस साल, शक्ल-सूरत तो ख़ैर वाजबी-सी ही थी, मगर चूँकि बेहद हंसमुख, मिलनसार और मीठा बोलने वाली थीं इसलिये कोई मनुष्य उनसे विरक्त नहीं हो सकता था। इन महिला ने तशरीफ़ लाते ही घर का नक्शा ही बदल कर रख दिया। उस समय के अलावा, जो वह वालिदा की शिक्षा पर लगाती थी, बाकी सारा समय घर की सफ़ाई और घर के प्रबन्ध को नियमित बनाने में लगाती थी। हद यह है कि अब हमारे यहाँ बजाये नाश्ता के छोटी-बड़ी हाज़िरी और बजाये खाने के 'डिनर' और 'लंच' होने लगा। वालिद साहब अब 'साहब' कहलाते थे और हम 'छोटे साहब!' वह तो कहिये कि हमने बड़े यत्न से वालिदा साहिबा को बेगम ही रहने दिया, वरना इन मिस साहिबा ने तो उन्हें भी 'मेम साहब' बना ही दिया था।

इन महिला का नाम मिस पाल था। और सच तो यह है कि बला की औरत थी। हर वक्त किसी-न-किसी काम में व्यस्त और हरदम ताज़ा। क्या मजाल कि किसी समय ज़रा भी थकान या उदासी उसके चेहरे पर नज़र तो आ जाये। अभी वालिदा साहिबा को पढ़ा रही हैं, तो अभी खाने की मेज सजाने में व्यस्त हैं। अभी वालिदा साहिबा का लिबास दुरुस्त कर रही हैं, तो अभी 'ड्राइंग-रूम' में माली से गुलदस्ते लगवा रही हैं, ड्राइंग-रूम से जो चली तो खानसामा के सिर पर सवार है और उसको केक बनाने के नुस्खे समझाने में व्यस्त है, वहाँ से रवाना हुई, तो अपनी देख-रेख में वालिद साहब के सूट पर इस्तरी कराना शुरू कर दी। कुछ ही दिन में इस महिला ने घर का यह हाल

कर दिया कि सुबह आँख खुलते ही हमको अपने बूट पालिश से जगमगाते हुए मिलने लगे, और नौकरों की ये आवाजें कान में पड़ने लगीं कि हुजूर गुसल लगा दिया है, हुजूर चाय लगा दी है, हुजूर नाश्ता लगा दिया है। अब से पहले ये चीजें कभी न लगती थीं। खुद हमारे कमरों का यह हाल कि शीशे की तरह चमकने लगे। एक-से-एक मेजपोश हर मेज पर नजर आने लगा। क्या मजाल कि किसी दिन भी गुलदान बासी फूलों से मुरझाया नजर आये और सबसे बढ़कर यह कि वालिदा साहिबा तो अब पहचानी न जाती थीं। उनके बालों की कैफ़ियत ही अब कुछ और थी, लिबास का सलीका ही कुछ दूसरा था। कपड़े वह पहले भी एक-से-एक कीमती पहना करती थीं, खुद अपने घर में इतने कीमती कपड़े निकले थे कि उन्हें चिरकाल तक नए बनवाने की आवश्यकता ही न थी। मगर उन कपड़ों में पहले की बात न थी, जो अब नज़र आती थी। रंगों का सम्मिश्रण और किस कपड़े के साथ कौन सा कपड़ा पहना जाए, इसका सलीका तो अब कहीं मिस पाल के कारण प्राप्त हुआ था। फल वह पहले भी खाया करती थीं, मगर इस प्रकार कि उठा लिया एक सेब और सिर खुजाती जाती हैं और उस सेब को भंभोड़ती जाती हैं, भोजन का हाल यह था कि बरतनों की खुदा के फ़जल से इस घर में कोई कमी न थी, मगर वे हमेशा रोटी पर सालन डालकर मुट्ठी में दबोच लेती थीं और उकड़ूँ बैठ कर खा लिया करती थीं। अब वही वालिदा साहिबा चम्मचें इस्तेमाल करती थीं, फल छुरी से काट कर खाती थीं, भोजन के उपरान्त जो हाथ कमीज़ के पल्ले, दुपट्टे के सिरे, या कभी-कभी पायजामा के पाँयचों से पोंछ लिये जाते थे अब साबुन और तौलिया से साफ़ होने लगे। कुर्सी पर खुद बैठ कर और मेज पर खाना रखकर खाने में उनको कष्ट अवश्य हुआ बल्कि उनके अपने कथनानुसार खाने का मजा न आया, न पेट भरा, मगर धीरे-धीरे खाने लगीं। कौर तोड़कर जहाँ उन्होंने डोंगे की ओर बढ़ाया और मिस पाल ने टोका, "न बेगम साहिबा, अपनी प्लेट में खाइये, डोंगे से निकाल लीजिए जितना जी चाहे, मगर डोंगे में हाथ न डालिए।"

शुरू-शुरू में अकसर खाली चमचा उनके मुँह में जाता था और चमचे की हर चीज प्लेट में गिर पड़ती थी। मगर आखिर चमचे से खाने लगीं, और

मिस पाल के ध्यान के कारण अब सिर खुजाने की जरूरत भी न पड़ती थी, बड़े सुन्दर बाल हर समय बने रहते थे, और इन बालों को कभी फूलों से कभी रिबन से और कभी काँटों से मिस पाल सजाया करती थीं। वालिद साहब की प्रसन्नता की बात कुछ न पूछिये। मालूम होता था कि उन्हें मुँह माँगी मुराद मिल गई। मिस पाल वालिदा साहबा को फ़िल्म दिखाने ले जातीं और उन्हें सैर भी कराती थीं। इसका नतीजा यह हुआ कि थोड़े ही दिनों में उन्हें वाकई सभ्य समाज में बैठने का न सिर्फ़ ढंग आ गया, बल्कि उनकी बातचीत भी इतनी मंज गई कि किसी को यह सन्देह हो ही नहीं सकता था कि यह कोई नाइन है।

शुक्र है कि मिस पाल की भाषा बहुत साफ़ थी अर्थात् उर्दू बोलने में वह आम क्रिश्चियन औरतों की तरह "कहने लक्टा है" और "जाना माँगटा है" आदि वाक्यों का प्रयोग न करती थीं, बल्कि बहुत ही सरल और मुहावरेदार भाषा बोलती थीं। इसके अलावा वह जानती थीं कि यह घर पूर्वी सभ्यता लिये हुए होना चाहिये, अतएव वह पूर्वीपन की भी उपेक्षा न होने देती थीं अर्थात् इस घर से पानदान और उसके महत्त्व को खत्म कराने की कभी चेष्टा न की, बल्कि खुद अपनी देख-रेख में बढ़िया किस्म के पानदान, पानों के झूमरन तम्बाकू और इलायची आदि की हल्की डिबियाँ बनवाईं, और बड़े शौक के साथ खुद वालिदा साहिबा से छालियाँ काटने की कला सीखी।

और-तो-और सबसे बड़ी बात तो यह हुई कि वालिद साहब किबला की सरल-सुबोध गालियों का सिलसिला खत्म हो गया और मिस पाल के कारण अब उन्हें हर वक्त ज़बान सम्भाले रखनी पड़ी, वरना घर के भीतर आकर तो वह बिना गाली के बात ही न कर सकते थे। ख़ास तौर पर वालिदा साहिबा से तो इसी भाषा में विनियम किया करते थे। मगर मिस पाल की उपस्थिति में खुद निहायत ख़ामोशी के साथ शरीफ़ बनने की कोशिश कर रहे थे।

वास्तव में वालिद साहब की यह बहुत बड़ी कूटनीति थी कि वह मिस पाल को इस काम के लिये घर में लाये, अगर वह किसी मुस्लिम ख़ातून का प्रबन्ध करते तो हमारी जाति का भाँडा हर वक्त फूट सकता था। रह गईं मिस पाल, उनके यहाँ जाति-पाँति का झगड़ा ही न था और खुदा जाने वो खुद किस

खान्दान से थीं। मुसलमान औरत होती तो वह आते ही पीढ़ियों की खोज लगाती और वालिदा साहबा के रंग-ढंग देख कर तो झट समझ लेती कि यह मिट्टी किस भूमि की है। फिर लगाई-बुझाई का सिलसिला शुरू हो जाता और आख़िर यह भेद जंगल की आग की तरह सारे शहर में फैल जाता और हर एक को मालूम हो जाता कि हमारी शराफ़त की असलियत क्या है। मगर मिस पाल का ध्यान इस ओर जाता ही न था, वे अपने काम को जिस तन्मयता और दयानतदारी से कर रही थीं उसका यह चमत्कार समझना चाहिये कि अब वालिदा साहिबा अख़बार कुछ-कुछ टटोलने लगी थीं।

मिस पाल यों तो सारे घर पर अपना सलीका ख़र्च करती थीं, मगर हमारे कमरों पर उनकी कुछ विशेष दृष्टि थी, और जब कभी हमारी ओर तशरीफ़ लाती थीं तो उनका अन्दाज़ ही कुछ और होता था। हँसमुख तो ख़ैर वह यों भी थीं मगर हमारे कमरों का जलवायु उनको कुछ अधिक ही रास आता था और उनकी विनोदशीलता ख़ास तौर से बढ़ जाया करती थी।

आज अभी हम रात के लिबास में बैठे अख़बार ही पढ़ रहे थे कि आप तशरीफ़ ले आईं और अपनी आवाज़ में जान-बूझ कर कुछ अधिक मिठास पैदा करके बोलीं—"साहबजादे साहब, मैं सुबह का सलाम दोपहर से कुछ ही पहले अर्ज़ करती हूँ।"

हमने घड़ी देखते हुए कहा—"मिस पाल, अभी से दोपहर? अभी दस बजने में भी कुछ मिनट बाकी हैं।"

मिस पाल ने कहा—"मगर आप बहुत तंग करते हैं मुझको। अभी तक 'ब्रेक फ़ास्ट' आपने नहीं लिया!"

हमने कहा—"देखिये मिस पाल, आज आपने फिर योरोपियन उर्दू बोली—'ब्रेक फ़ास्ट' नहीं लिया, यह ख़ालिस गोरा शाही उर्दू है।"

मिस पाल ने हँस कर कहा—"बड़े शरीर हैं आप साहबज़ादे साहब, मेरी बात का उत्तर देने के बजाये आपने उल्टा एक ऐतराज़ मुझ पर जड़ दिया। ख़ैर आपके इस ऐतराज का शुक्रिया। मगर आपने अभी तक नाशता 'नोश' नहीं फ़रमाया। इसके बारे में आप क्या फ़रमाते हैं? क्या दस बजे तक सब को नाश्ते में उलझाये रखना मुनासिब है?"

हमने कहा—"हाँ, अब आप ने सही ज़बान बोली है, नाश्ता 'नोश' फ़रमाना बिलकुल ठीक है।"

मिस पाल ने तुनक कर पैर पटकते हुए कहा—"अब भी आप अपनी ही बात कहे जाते हैं। मैं क्या पूछ रही हूँ······?"

हमने कहा—"बात यह है मिस पाल, कि आपसे ज़्यादा इस बात पर मेरी आत्मा खुद मुझको धिक्कार रही है, मगर मैं आज एक ऐसा लम्बा ख़्वाब देख रहा था, जो साढ़े नौ बजे के करीब ख़त्म हो सका। इसलिये मैं मजबूरन साढ़े नौ बजे सोकर उठा।"

मिस पाल ने कहा—"माई गाड! किस क़द्र बातें बनाना जानते हैं आप! अच्छा अब तो वह ख़्वाब ख़त्म हो गया है अब तो नाश्ते के लिये तैयार हो जाइये।"

हमने कहा—"अच्छा, एक रियायत चाहते हैं कि आज बिना नहाये नाश्ते की इज़ाजत मिल जाये तो···"

मिस पाल ने कहा—"नहीं, नहीं, नहीं, यह कभी नहीं हो सकता। आज तो नहाना बड़ा जरूरी है। मैंने आज आपके लिये खुद कपड़े निकाले हैं और बेग़म साहब से पूछ-पूछ कर आपके कुरते की आस्तीनें चुनी हैं।"

हमने उठते हुए कहा—"अच्छा साहब, अच्छा! नहा भी लेते हैं। आप मुझको तैयार समझ कर नाश्ता लगवाइये मेज पर।"

नाश्ते आदि से निबट कर हम नियमपूर्वक एक पुस्तक लिये टहलने के लिये बाहर निकल आये। सामने ही रश्ना एक 'गार्डन चेयर' पर बैठी हुई अपने नौकरों से झूला लगवा रही थी। इस झूले में बेंत का बना हुआ गद्देदार सोफ़ा टाँगा जा रहा था, ताकि झूल-झूलकर अध्ययन किया जा सके। अथवा सखियों के संग पैंग चढ़ाकर गप्पबाज़ी हो सके, या फिल्मी धुनें अलापी जायें। मालूम नहीं क्यों हमारी आँखें इस निर्णय की प्रतीक्षा करने लगीं कि देखें कि सोफ़ा का रुख़ क्या रखा जाता है। एक सूरत तो यह हो सकती थी कि इसे इस प्रकार टाँगा जाये कि हमारी ओर उसकी पुश्त हो और दूसरी सूरत वही थी जो हम चाहते थे। अर्थात् इस प्रकार उसको टाँगा जाये कि हमारी ओर उसका सामना हो।

रअना हमको देख तो चुकी ही थी; इसलिये उसने नौकरों को जान-बूझ कर हुक्म दिया कि सोफ़ा को इस तरह टाँगें कि हमारी तरफ़ सामना न हो। और जब नौकर उसे इस प्रकार टाँग चुके, तो उसने कनखियों से हमारी ओर देखा, तनिक मुसकराई और फिर नौकरों से कहा—"नहीं, यह ग़लत है। इसका रुख़ बदल दो।"

और अब हमारी तरफ़ सामना था, जी चाहा कि शुक्रिया अदा करें; लेकिन कानों में आवाज़ गूँजी, "साहबज़ादे साहब !"

मिस पाल ऊँची एड़ी के सफ़ेद जूतों पर तैरती हुई हमारी ओर बढ़ रही थीं।

हमने कहा—"कहिये मिस पाल क्या बात है ?"

मिस पाल ने करीब आकर कहा—"आप यहाँ हैं ? मैं न जाने कहाँ-कहाँ आपको ढूँढ आई !"

हमने कहा—"जी हाँ, मैं ज़रा यह किताब पढ़ रहा हूँ।"

मिस पाल ने बड़ी शरारत से कहा—"यह किताब या वह किताब ?" उसने रअना की ओर आँख का संकेत किया।

हमने अपने को गम्भीर बनाकर कहा—"क्या मतलब है आपका ?"

मिस पाल ने कहा—"किताब पढ़ने के लिये कैसी अच्छी जगह निकाली है आपने। हाथ में किताब हो और आँख के आगे तस्वीर। मगर वाकई साहब-ज़ादा साहब यह लड़की है बड़ी ख़ूबसूरत। क्यों है न ?"

हमने कहा, "जी हाँ, है तो सही, मगर आपका मतलब क्या है आख़िर ?"

मिस पाल ने कहा—"बाबा, मैं तो एक बात कह रही हूँ, यों ही कुछ ख़याल आ गया था मुझको कि कितनी अच्छी रहेगी यह जोड़ी अगर···"

हमने बात काट कर कहा—"किसी-किसी वक्त आप अजीब बातें करने लगती हैं, मिस पाल !"

मिस पाल ने कहा—"जी हाँ, अजीब बेवकूफ़ हूँ मैं। जो बातें बेग़म साहिबा और नवाब सहाब से करने की हैं, वे मैं आपसे करने लगी।"

हमने घबरा कर कहा—"क्या कहा ? कौन सी बातें ?"

मिस पाल ने कहा—"यही कि साहबज़ादे साहब, मूर्ति सामने रख कर

खुदा को याद करने लगे हैं, अब इनकी शादी जल्दी से कर दी जाये।"

हमने वाकई सटपटा कर कहा—"खुदा के वास्ते यह क्या गज़ब कर रही हैं आप ? आपको शुबह हुआ है शायद कुछ ?"

मिस पाल ने कहा—"शुबह तो क्या हुआ था, ज़रा आपको इसी तरह लड़की को घूरते हुए देखा था। आज तो विश्वास हो गया है, और वह लड़की भी आपमें दिलचस्पी रखती है। मुझे आपके करीब देखकर बड़ी हैरानी हो रही थी उसे। ख़ैर मैं, उसे समझा दूँगी कि मैं कोई 'और' नहीं, साहबज़ादे साहब की नौकरानी हूँ।"

अब हमने दूसरा रुख़ इस्तेमाल करते हुए कहा—"बड़ी शरीर हैं आप मिस पाल। बात का बतंगड़ बनाने में आपको कमाल हासिल है।"

मिस पाल ने कहा—"जी, ठीक फ़रमाया आपने, ख़ैर इस वक्त तो तशरीफ़ ले चलिये, नवाब साहब याद कर रहे हैं।"

: ४ :

वालिद साहब किबला इस समय अपना दरबार लगाये बैठे थे कि हम भी पहुँच गए। हमें देखकर बड़े गर्व से बोले—"इधर आओ, बेटे, इनको सलाम करो। ये हैं तुम्हारे चचा ख़ान बहादुर अली हुसैन ख़ाँ साहब, अपने पड़ोसी, तुमको पूछ रहे थे।"

हमने नम्रतापूर्वक ख़ान बहादुर को सलाम किया तो वालिद साहब ने हमें बैठने का संकेत करते हुए ख़ान बहादुर साहब से कहना शुरू किया—"माशा अल्लाह, बेहद ज़हीन हैं! मेरा कतई इरादा हो चुका था कि इन्हें विलायत भेज दूँ। तमाम इन्तज़ाम हो चुका था कि यह कयामत आ गई और साहब अब तो ऐसे-ऐसे भयानक सीन देखे हैं कि एक मिनट के लिए भी इनको अपने से अलग करने का हौसला नहीं होता। लाख इनको समझाता हूँ कि तुम्हें आख़िर किस चीज़ की कमी है? अल्लाह ने दौलत दी है, इज्ज़त दी है, न सही ऊँची तालीम, मगर साहबज़ादे किसी तरह मानते ही नहीं। अब आप ही इन्हें किसी तरह समझाइये भाई साहब, तो शायद वह कुछ मानें।"

ख़ान बहादुर साहब से पहले ही एक और साहब, जो खीसें निकाले बैठे थे, बोल उठे "माशा अल्लाह, पेशानी पर बुलन्दी-ए-कमाल का सितारा भी रोशन है। हुज़ूर वाला, कान पकड़ कर अर्ज़ करता हूँ, कि आदमी पहचानने में इस गुलाम ने आज तक धोखा नहीं खाया। अगर मेरा अंदाज़ा दुरुस्त है तो साहब-ज़ादे को बहुत बड़ा आदमी बनना है। बेटे, अपना हाथ इधर बढ़ाना।"

ख़ान बहादुर साहब ने हँसकर कहा—"हमारे मिर्ज़ा साहब भी अजीब चीज़ हैं, पामिस्ट्री का शौक जनून की हद को पहुँचा हुआ है।"

ख़ैर, हमने हाथ पेश कर दिया हालाँकि हाथ रसीद करने को जी चाह रहा था। मिर्ज़ा साहब ने हाथ को अपने हाथ में लेकर ध्यान से देखा, फिर आप ही 'हुम-हुम' करते रहे और दो-तीन मिनट की ख़ामोशी और विचार के बाद एक

विचित्र मुसकराहट के साथ बोले—"हुज़ूर वाला, मेरी यह बात गिरह में बाँध लीजिये कि आपके ख़ानदान का नाम यही साहबज़ादे रोशन करेंगे। इल्म तो ख़ैर है ही, मगर दौलत की भी हद नहीं है। अगर दौलत वाली लकीर को ये छोटी-छोटी लकारें काट न देतीं तो यह हाथ बादशाह का हाथ होना चाहिए। यह लकीर शुरू से बहुत उम्दा चली है। मगर आख़िर में आकर कुछ कैंची-सी बन गई है।"

कैंची का नाम सुनकर हमने तो ख़ैर हाथ खींच ही लिया कि कहीं इस कम्बख़्त को उस्तरा और फिर नहन्ना भी नज़र न आ जाये। मगर इस कैंची के शब्द ने वालिद साहब को भी कुछ परेशान-सा कर दिया और हमने देखा कि उनके चेहरे पर भी एक रंग आया और एक गया। मगर वह बड़े हाज़िर, दिमाग़ बुज़ुर्ग हैं, बात काट कर बोले—"ख़ैर, यह तो विश्वास की बात है, मैं इन बातों को नहीं मानता, किस्मत का लिखा न किसी ने पढ़ा है और न कोई पढ़ सकता है।"

वह मानें या न मानें; लेकिन हम तो मिर्ज़ा साहब के कायल हो गये कि उनको हाथ में नज़र भी आई तो कैंची। उनके अभ्यास और कला का इससे बड़ा प्रमाण और क्या हो सकता था कि वे हमारे हाथ में कैंची देखने में सफल हो गये? हम अभी मिर्ज़ा साहब की इस बात पर हैरान ही हो रहे थे कि ख़ान बहादुर साहब ने हमसे कहा—"बरखुरदार, अब क्या इरादे हैं फिर? आपके वालिद साहब आपको बाहर भेजने को राज़ी नहीं; मगर तालीम तो पूरी होनी चाहिये न?"

हमने कहा—"वैसे तो तालीम का सिलसिला जारी है ही, मगर मैं तो इसलिए बाहर जाना चाहता था कि पाकिस्तान में भी हमें फ़िलहाल वही तालीम दी जा रही है, जिसका मकसद दरअस्ल शिक्षित बनाना नहीं है बल्कि सच्चे सेवक और ग़ुलाम बनाना है।"

मिर्ज़ा साहब ने तड़प कर कहा—"भई, माशा अल्लाह ज़िन्दाबाद! क्या बात कही है साहबज़ादे साहब ने। यह बात मैं भी कहना था; मगर इतने ख़ूबसूरत इल्फ़ाज़ नहीं मिल रहे थे कहने के लिए। आपने मेरे दिल की बात कह दी साहबज़ादे।"

ख़ान बहादुर साहब, जो ख़ान बहादुर होने के नाते स्वभाव ही से गुलाम थे। इस बात से कुछ अधिक प्रसन्न तो न हुए; मगर चूँकि अब किसी और तो मेरे ख़याल में ख़ुद अपने आप पर मुनहसिर है कि तालीम किस तरह की उपाधि की आशा न थी इसलिए अप्रसन्न भी न हुए और मद्धम स्वर में कहा--"ये हासिल कराई जाये। यह ठीक है हमारी तालीम का तरीका खराब है और इसमें सुधार होना चाहिए, मगर इसी तालीम ने हममें आज़ादी का जज़्बा भी पैदा कर दिया है। इससे आप इंनकार नहीं कर सकते।"

हमने कहा—"दुरुस्त फ़रमाया आपने, मगर यह जज़्बा इतना आम नहीं हुआ, जितना क्लर्की आम हो गई है। आजादी का झंडा उठाने वाले तो कुछ ही पैदा हुए; मगर दफ़्तरों में हाज़िरी देकर गुलाम बन जाने वाले अनगिनत इस तालीम ने पैदा किए मगर मैं आपसे यहाँ तक सहमत हूँ कि इसी तालीम का हम फ़िलहाल फ़ायदा उठायें। और हमें यह ऐहसास ही रहे कि हम खुद भी इन खराबियों को दूर करेंगे जो हमें नजर आ रही हैं।"

ख़ान बहादुर साहब ने वालिद साहब की ओर पलटते हुए कहा—"भई नवाब साहब, माशा अल्लाह! बड़ी समजदारी की बातें करते हैं साहबज़ादे। मैं इनसे बात करके बड़ा खुश हुआ हूँ और इस नतीजे पर पहुँच गया हूँ कि तालीम पूरी करके इन्हें खुद यही काम करना चाहिए। बहुत अच्छे प्रोफ़ेसर बन सकते हैं।'

मिर्ज़ा साहब ने फ़रमाया—"बिलकुल यही मैं भी अर्ज करने वाला था। और अपनी बात कहने के लिए मुनासिब इलफ़ाज़ तलाश कर ही रहा था कि आपने मेरे दिल की बात कह दी।"

वालिद साहब ने फ़रमाया—"भाई जान, मैंने तो कभी इन साहबज़ादे के मामलात में दख़ल नहीं दिया कि तुम क्या पढ़ो और क्या न पढ़ो। जो कुछ है इनके अपने शौक का नतीजा है और आगे भी जो कुछ करेंगे अपने ही शौक से करेंगे। वरना सच्ची बात तो यह है कि मेरे लिए जो-कुछ है, वह सिर्फ़ ये ही हैं, अन्धे की लाठी समझता हूँ इन्हें। अल्लाह अमीन से पाला है और इन्हीं साहबज़ादे को देख-देख कर जीते हैं। अब आप ही बताइये कि इनको किस दिल से सात समुन्दर पार भेजकर मैं या इनकी माँ ज़िन्दा रहें।"

ख़ान बहादुर ने कहा—"नहीं साहब, विलायत वगैरह भेजना तो ख़ैर

वाहियात है, न यह आप से मुमकिन है न मैं इसकी राय दूँगा। मैं खुद इसी किस्म की ज़िद का मुद्दत से मुकाबला कर रहा हूँ। साहबजादी साहिबा यही चाहती है कि माँ कलेजे पर पत्थर रख ले, बाप अपने दिल को फ़ौलाद बना ले और उनको इंगलिस्तान भेज दिया जाये। मैं तो कहता हूँ कि सलाम है ऐसी तालीम को जो औलाद ही को छुड़वा दे।"

मिर्ज़ा साहब ने फ़रमाया—"साहबजादी साहिबा, वह तो गोया लड़की की ज़ात है, और जाना चाहती है इंगलिस्तान गोया इंगलैंड।"

वालिद साहब ने फ़रमाया—"जनाब, लड़की और लड़के का फ़र्क भी तो इस तालीम ने उठा दिया है। मगर एक बात है कि माशा अल्लाह रअना बीबी भी लिखने-पढ़ने की बेहद शौकीन हैं।"

खान बहादुर साहब ने वालिद साहब को जवाब देने के बजाए हम से कहा—"फ़रहत मियाँ, तुम मिले हो कभी रअना से?"

सफ़ेद झूठ बोलते हुए हमने कहा—"जी, कभी इत्तिफ़ाक तो नहीं हुआ।"

वालिद साहब ने कहा—"अरे भाई, आमने-सामने घर है, बाग से बाग मिला हुआ है, एक ही अहाता है और तुम मिले ही नहीं उससे।"

खान बहादुर साहब ने फ़रमाया—"यह भी तो आजकल का 'ऐटीकेट' है कि सीधी मुलाकत पैदा नहीं की जाती। खैर मैं मुलाकात का सिलसिला पैदा करूँगा। अगर आप यही चाहते हैं कि इस सिलसिले में एकाध मुर्ग़ी अपनी जान से जाए और कुछ मछलियों का खून हो तो यही सही। कल रात का खाना मेरे घर खायें। वहाँ आप दोनों की मुलाकात करा दी जायेगी और आप दोनों की वजह से हम लोग भी ज़रा पुरतकल्लुफ़ किस्म का खाना खा लेंगे। तो फिर नवाब साहब तय रहा न? मिर्ज़ा साहब, आप भी भूलियेगा नहीं!"

वालिद साहब ने कहा—"मिर्ज़ा साहब ज्यादा-से-ज्यादा भूले तो रात के बजाय दिन के खाने पर पहुँच जायेंगे। वैसे इस किस्म के मामले में माशा अल्लाह याददाश्त काफ़ी तेज़ है।"

मिर्ज़ा साहब ने नियमपूर्वक खीसें निकाल कर कहा—"क्या बात फ़रमाई है हुज़ूर वाला ने! खैर मैं इंशा अल्लाह हाजिर हो जाऊँगा। कल है, गोया इतवार। जी हाँ ठीक है हाज़िर हो जाऊँगा।"

वालिद साहब ने कहा—"गोया इतवार न होता तो कल आप तशरीफ़ *न ला सकते ! मिर्ज़ा साहब बस यही बातें बुरी लगती हैं !"*

मिर्ज़ा साहब ने जल्दी से कहा—"यह बात नहीं है किबला बल्कि किस्सा दरअस्ल यह है कि मुझे सोमवार का ख़याल रहा। सोमवार को मुझे एक और मेहरबान के यहाँ इत्तिफ़ाक से खाने पर जाना है। अगर कल सोमवार होता तो ख़ुदा न ख़्वास्ता मुझे बेहद रंज होता।"

ये बेचारे मिर्ज़ा साहब, वालिद साहब और ख़ान बहादुर साहब दोनों के मुसाहब की हैसियत रखते हैं। ढूँढा है इन्हें वालिद साहब ने, मगर अब ख़ान बहादुर साहब से भी पेंग बढ़ाये हैं। काम आपका सिर्फ़ यह है कि रईसों की दरबारदारी करते रहें और उन्हीं को खुश करके अपना भला करते रहें। मुसाहब में जो गुण होने चाहिए अक्ल के सिवाय और सब कुछ मिर्ज़ा साहब में मौजूद है। उचित और अनुचित रईस का समर्थन करना इनका काम है। वह दिन को रात कह रहा है तो आप प्रमाण जूटा रहे हैं दिन के रात होने के। रईस को जो शौक है उसमें आप पेश-पेश हैं। कहीं ताश खेल रहे हैं तो कहीं शतरंज के खिलाड़ी बने हुए हैं। हमें इस बेचारे पर तरस आया करता है कि ग़रीब का निजी जीवन तो जैसे कुछ है ही नहीं। पेट जो कुछ भी कराए। सुना है कि कभी खुद भी अच्छे दिन देख चुके हैं और अब अपना सब कुछ लुटा कर दूसरों के सहारे जी रहे हैं। कारण यह कि अपने में न कोई योग्यता है, न गुण।

ख़ान बहादुर साहब के चले जाने के बाद वालिद साहब ने कहा—"भई मिर्ज़ा, तुम्हारी बात समझ में नहीं आई। आख़िर इतना बनने की क्या ज़रूरत थी कि कल इतवार है न ?"

मिर्ज़ा साहब ने बड़ी नम्रता से कहा—"अब मैं क्या अर्ज़ करूँ। आप तो सफ़ेद पोशी की पोल खोल देते हैं। संकोच सिर्फ़ यह है कि दावत तो ख़ैर उन्होंने दे दी, मगर मैं पहन कर क्या जाऊँगा। धोबी कम्बख़्त को भी मेरी इकलौती शेरवानी लेकर मरना था।"

वालिद साहब ने कहा—"तो यह कहो न कि शेरवानी चाहिए तुमको। फ़रहत मियाँ, मेरी कोई शेरवानी लाकर मिर्ज़ा साहब को दे दो। मेरे ख़याल

में वह सुरमई शेरवानी ला दो, जिसके साथ की तुम्हारी शेरवानी भी है।"

हमने वालिद साहब के कपड़ों की अलमारी से सुरमई शेरवानी लाकर मिर्ज़ा साहब को दे दी और मिर्ज़ा साहब का चेहरा नये फूल की तरह खिल उठा, जैसे यह शेरवानी उनके लिए अमृत सिद्ध हुई हो। सीधे खड़े होकर शेरवानी पहनी और फ़र्शी सलाम बजाकर रुख़सत हो गये। मिर्ज़ा साहब के जाने के बाद हमने बड़े दुःख से कहा—"बेचारा सख़्त मुसीबत में है।

वालिद साहब ने कहकहा लगा कर कहा—"साहबज़ादे, ये बड़े बहुरूपिये हैं। यह तो चालाकी थी इन हज़रत की। ये इस तरह की तरकीबें न करें, तो काम कैसे चले इनका ? यों ही मारते-खाते रहते हैं। मैं खूब समझता हूँ और जान बूझकर इनकी मदद करता रहता हूँ, मगर इसका मतलब यह नहीं है कि मुझे उनसे कोई उम्मीद भी है। अगर इसी वक्त कोई दो हज़ार गालियाँ मुझे दे और इन्हें किसी फ़ायदे की उम्मीद हो उस शख्स से, तो उन गालियों में अपनी तरफ़ से भी उतनी और जोड़ देंगे। मेरा उसूल तो यह है कि पहचानो सबको, मगर मौका मिले तो मदद ज़रूर करो और फिर कोई उम्मीद किसीसे न रखो।"

वालिद साहब ये बातें कर रहे थे और हम सोच रहे थे कि वाह री तेरी शान कि तूने एक हज्जाम को इतना बड़ा दिमाग़ दिया है। यह उदारता और एक नाई में। यह ही वालिद साहब तो हैं जो बाल काटने के बाद रईसों से कहा करते थे कि आइना देखकर अगर हुजूर खुश हो जायें, तो बाल कटवाई के बाद इनाम का भी हकदार हो जाऊँगा। और आज उन्हीं की उदारता और दानशीलता का यह आलम है। सच कहा है किसी ने—

'खुदा जब हुस्न देता है, नज़ाकत आ ही जाती है।'

वालिद साहब इस समय असाधारण रूप से प्रसन्न थे और प्रसन्न होने की बात भी थी कि ख़ान बहादुर साहब ने हमें अपनी बेटी से परिचित करने के लिए खाने पर बुलाया था। इसका मतलब साफ़ है कि वह खुद तो पसन्द कर ही चुके थे मुझे अपना दामाद बनाने के लिए और अब सिर्फ़ अपनी साहबज़ादी और बेग़म साहिबा को दिखाना चाहते थे। वालिद साहब ने मारे खुशी के कहा—"कल वही सूट पहन कर जाना, वह जो काला बनवाया है, क्या कहते हैं उसे ?"

अर्ज़ किया—"ड्रेस सूट ।"

कहने लगे—"हाँ, वही । खाने पर वही तो पहन कर जाते हैं न फैशनेबल लोग । मगर मैं सोच रहा हूँ कि मैं क्या पहनूँगा ।"

हमने कहा—"आप काली शेरवानी पहनियेगा । वह भी तो खाने का लिबास है ।"

वालिद साहब ने कहा—"मियाँ यह खाने का लिबास और खाने का जूता सच पूछो तो मेरी समझ में ही नहीं आता । मैं कहता हूँ वह जामेदार की शेरवानी क्यों न पहनूँ, जो इस घर में से निकली है ?"

हमने कहा—"है तो वह भी कीमती चीज, मगर डर यही लगता है कि इस घर के पिछले मालिक को न पहने देखा हो किसी ने ।"

वालिद साहब ने कहा—"अब कौन धरा हुआ है यहाँ, इस घर के पिछले मालिक को देखने वाला और उसके कपड़े पहचानने वाला । वह जो मिर्ज़ा को अभी दी है, वह भी तो इसी घर के पिछले मालिक ही की थी । खैर, एहतियात अच्छी चीज़ है, मैं काली शेरवानी पहन लूँगा । मेरा क्या है, वर-दिखावा तो तुम्हारा है । ज़रा सलीके से जाना और सूट में जिस चीज़ की कमी हो, उसका इन्तजाम आज ही कर लेना । अल्लाह ने चाहा, तो तुमको देखकर खान बहादुर जिस तरह रीझे हैं, उनकी बेग़म भी पसन्द करेंगी । बहुत ही नपी-तुली बातें करना । बस किसी बात से वह अन्दाज़ा न होने पाए कि उनकी शान देखकर हम रौब में आ गए हैं ।"

इस दावत के सिलसिले में इस प्रकार की नसीहतों का सिलसिला देर तक जारी रहा ।

: ५ :

मिस पाल को सूचना मिल चुकी थी कि आज हमें डिनर पर जाना है। बस, उनके लिए इतना ही काफ़ी था। सुबह ही से ड्रेस-सूट और उससे सम्बन्धित दूसरी चीज़ों की उन्हें चिन्ता थी। कपड़ों पर इस्तरी हो रही है, जूता चमकाया जा रहा है, वालिद साहब की शेरवानी पर इस्तरी हो रही है, उनके पम्प को शीशे की तरह चमकाने की चिन्ता है। वह तो इन बातों में उलझी हुई थीं और उधर वालिद साहब और वालिदा साहिबा की कान्फ्रेंस हो रही थी जिसके ख़ामोश तमाशाई हम भी थे।

वालिदा साहिबा ने विस्मय में भरकर कहा—"मेरी तो अक्ल चक्कर में है कि बेटी से मिलाने के लिए खुद बाप ने दावत दी है।"

वालिद साहब ने कहा—"वह चक्कर में सही, मगर शुक्र करो कि अक्ल है तो सही। मुझे तो इसी में शुबह था।"

वालिदा साहिबा ने कहा—"मगर क्या सचमुच वह ही बेटी से कहेंगे कि यह लड़का मैंने तुम्हारे लिए पसन्द किया है?"

वालिद साहब ने कहा—"रही न धामड़ की धामड़। हज़ार बार कह चुका हूँ कि आजकल का तरीका यही है कि बड़े घरानों में लड़की से पसन्द कराया जाता है लड़का।"

वालिदा साहिबा ने कहा—"हाय मेरे अल्लाह! पसन्द कराया जाता है!"

वालिद साहब को क्रोध आने लगा—"मिस पाल ने हुलिया तो ज़रूर बदल दिया है तुम्हारा, मगर दिमाग़ का कूड़ा अभी तक साफ़ नहीं किया है।"

वालिदा साहिबा ने पहलू बदल कर कहा—"न बाबा, मैंने तो न कभी देखा न सुना और मैं तो यही कहती हूँ कि ऐसी बहू ब्याह कर आ भी गई, तो वह दो ही दिन में सास का चूंडा काट कर हथेली पर रख देगी।"

वालिद साहब ने कहा—"अब ऐसा खुशनसीब मैं नहीं हूँ कि वह

तुम्हारे साथ यह सलूक करे। जी तो यही चाहता है कि तुम्हारे साथ उसका यही बर्ताव हो; मगर इनसान का जो कुछ जी चाहता है, वह हुआ नहीं करता। तो तुम्हारे ख़याल में यह जो कुछ हो रहा है—ग़लत है ?"

वालिदा साहिबा ने कहा—"मैं तो यही जानती हूँ कि टाट में मख़मल का पैवन्द रास नहीं आ सकता।"

वालिद साहब अब बेतकल्लुफ़ हो गये। "चुगद हैं आप ! अजीब औंन्धी खोपड़ी पाई है। अस्ल में हिमाकत मेरी ही है कि मैं तुमसे ये बातें करने बैठ जाता हूँ। तुम तो उसी वक्त ठीक थीं जब पचास जूते सुबह और पचास जूते शाम को बिना बात के बरस जाया करते थे।"

वालिदा साहिबा ने बुरा माने बिना कहा—"मेरा क्या है, तुम भी तो भुगतोगे। दाढ़ी का एक बाल जो छोड़े।"

वालिद साहब ने कहा—"वह आपकी तरह कौम की नाइन नहीं है कि ससुर का शेव बनाने बैठ जाये।"

वालिदा साहिबा ने अब मतलब की बात कही—"अच्छा तो मैं पूछती हूँ कि नज्जो में क्या बुराई है ?"

वालिद साहब ने सम्भल कर बैठते हुए कहा—"नज्जो—तुम्हारे भाई की लौंडिया ! अब उतारूँ मैं जूता ? खून थुकवा दिया है हरामजादी ने। हम हैं कि मेम नौकर रखकर इसे आदमीयत के जामे में ला रहे हैं। मगर वही मिसल कि कुत्ते की दुम बारह बरस के बाद नलकी से निकाली गई तो टेढ़ी-की-टेढ़ी ही निकली। चली हैं अपने भाई की लौंडिया को बहू बनाने। अन्धी, चुपड़ी, जाहिल, गँवार की लठ्ठ ! नाई की औलाद नाइन, वह आयेगी गोया अब नवाब अज़मतुला खां की बहू बनकर ! थू है मेरी औकात पर !"

वालिदा साहिबा ने तुरन्त उत्तर दिया—"आदमी इतना भी अपनी अस-लियत को न भूले कि अपनों ही को नीच समझने लगे।"

वालिद साहब ने वाकई खीझकर कहा—"देख, मैं तुझसे कहता हूँ, कान खोलकर सुन ले। अगर तू अपनी इन बातों से बाज़ न आई, तो तलाक देकर

घर से बाहर करूँगा, समझी कि नहीं ? कोई पूछे, अगर हमको इन्हीं नाई और हज्जामों से रिश्ते जोड़ने होते, तो यह सब ढोंग रचने की आख़िर ज़रूरत ही क्या थी ? सारी दुनिया की ज़बान सूख रही है, नवाब साहब, नवाब साहब कहते हुए, और यह चली है अपने भैया को समधी बनाने, जो अब तक सिल्ली पर उस्तरे तेज करता फिरता होगा वही हिन्दुस्तान में। ख़बरदार ! जो अब की उसका नाम लिया।"

वालिदा साहिबा ने कहा—"लो और सुनो, तो क्या तुम्हारा मतलब यह है कि मैं अपने माँ-जाये को भूल जाऊँगी ?"

वालिद साहब ने बड़े संयम से काम लेकर हमसे कहा—"फ़रहत मियाँ, अब तुम समझाओ इसे, नहीं तो मैं शुरू करता हूँ जूतागिरी।"

और हम मिस पाल को इस ओर आता हुआ देख लपके उसकी तरफ़, ताकि उसे टाल ले जायें। वरना वह भी देख लेती कि यह नवाब साहब और बेगम साहिबा किस भाषा में प्रेम करते हैं। दरवाज़े के उसी तरफ़ मिस पाल को रोककर हमने कहा—"मिस पाल, आप ज़रा, मेरे साथ आइयें।"

मिस पाल को तो खुदा यह मौका दे कि हम उन्हें बुलायें। एकदम खिलकर और सत्तर बल खाकर बोलीं—ख़ैरियत तो है ? आपको और मुझसे काम ?"

हम वाकई मिस पाल से ज़रा दूर ही की अलेक-सलेक के कायल थे; इसलिए कि उनके बारे में धीरे-धीरे यह अन्दाज़ा हो चुका था कि वह ज़रूरत से ज़्यादा ही दिलचस्पी लेने लगी हैं इस सेवक से। और कुछ अजीब शिकारी निगाहों से देखा करती है हमें। मगर इस समय तो उन्हें टाल ले जाना ज़रूरी था। इसलिए हमने बड़े मधुर स्वर से कहा—"क्यों, क्या आप से काम नहीं पड़ सकता किसी को ?"

मिस पाल ने हमारे पीछे लपकते हुए कहा—"किसी और की बात नहीं यहाँ, सवाल आपका है, जो मुझसे खुदा जाने क्यों नाराज़ रहते हैं ?"

हमने अपने कमरे में दाख़िल होते हुए कहा—"नाराज़ ? ओह ! मैं नाराज़ रहता हूँ आपसे ? नाराज़गी की भला कौन सी बात है ?"

मिस पाल ने अपने खुर्राट चेहरे पर ज़बरदस्ती भोलापन पैदा करते हुए कहा—"यह तो आपको मालूम होगा। मैं तो हर जतन करके थक चुकी हूँ कि

आप मुझसे इस कद्र बेज़ार न रहें। मगर अपनी बदकिस्मती के सिवा इसे क्या समझ सकती हूँ कि आप कभी सीधे मुँह बात ही नहीं करते।"

हमने भी ज़बरदस्ती मुसकराकर कहा—"नहीं मिस पाल, यह आप का ख़याल है। मैं आपसे भला क्यों नाराज़ होने लगा। आप तो मेरा इतना ध्यान रखती हैं और मुझे ख़ूब अन्दाज़ा है कि आप सबसे ज़्यादा ध्यान मेरे ही कामों पर देती हैं। क्या मैं इतना एहसान फ़रामोश हूँ कि फिर भी आप से नाराज़ होऊँ?"

मिस पाल से बड़े ही आकर्षक ढंग से फ़रमाया—"शुक्र है कि आपको इतना भी अन्दाज़ा है। ख़ैर आप बताइये, काम क्या था इस वक्त?"

हमने कहा—"जी नहीं, अब तो सबसे बड़ा यह काम है कि आप अपने दिल से ग़लतफ़हमी दूर कीजिये कि मैं आपसे नाराज़ या आपके कहने के मुताबिक बेज़ार हूँ।"

हमको क्या मालूम था कि मिस पाल इस अवसर से इतना लाभ उठायेंगी, एकदम कुछ लजाकर बोलीं—"तो फिर इसका मतलब यह है कि आप इतने भोले हैं जो एक औरत की नज़रें भी नहीं पहचान सकते और उन नज़रों की इल्तजाएँ भी नहीं समझ सकते।"

ईमान की बात यह है कि हमें इस स्पष्टवादिता की आशा ही न थी। एक दम भौंचके-से रह गए और सब कुछ समझ लेने के बाद बड़ी नम्रता से कहा—"यह आपको कैसे मालूम कि मैं नहीं समझता हूँ। मैं तो बराबर अब्बाजान से कहा करता हूँ कि मिस पाल मेरे कामों में असाधारण दिलचस्पी लेती हैं और मैं उनसे बड़ा प्रसन्न हूँ। वह मेरे लिए एक बेहतरीन दोस्त साबित हो रही हैं।"

मिस पाल ने आँखों को मटका कर कहा—"बस दोस्त? यानी सिर्फ़ दोस्त?"

मिस पाल तो इस वक्त बुरी तरह गले पड़ रही थीं। आये थे नमाज़ बख़्शवाने यहाँ रोज़े भी गले पड़ गये।

हमने फिर भी अपने-आपको संयत रखते हुए कहा—"दोस्त को आख़िर आप क्या समझती हैं? बड़ी चीज़ होता है दोस्त मिस पाल। आपको मालूम

है कि मेरे सिर्फ़ चन्द दोस्त हैं और उनमें से एक आप भी हैं।"

मिस पाल ने कहा—"शायद आप ख़ान बहादुर साहब की लड़की को दोस्त से कुछ ज़्यादा समझते हैं ?"

हमने अब सच बोलना शुरू किया—"वह तो ख़ैर बात ही दूसरी है। यह उनका ज़िक्र आप कहाँ से ले दौड़ीं !"

मिस पाल ने निराश होकर कहा—"जी हाँ, मैं बेकार ही यह ज़िक्र ले दौड़ी। ख़ैर छोड़िये इस ज़िक्र को, आप काम बताइये।"

हमने भी मौका ग़नीमत जानकर कहा—"काम यह था मिस पाल कि आज तो ख़ैर हम लोग ख़ान बहादुर साहब के यहाँ खाने पर जा रहे हैं, मगर मैं अपने चन्द दोस्तों को कल या परसों खाने पर बुलाना चाहता हूँ। ज़ाहिर है कि खाना रात ही को होगा। मैं आपको सुबह कतई फ़ैसला करके बता दूँगा। अब आप यह फ़रमाइये कि छः-सात आदमियों के लिए क्या प्रबन्ध किया जाए ?"

मिस पाल ने कहा—"आपके हुक्म की देर है, यह मेरा काम है, वह मैं कर दूँगी।"

हमने कहा—"मेरा मतलब यह है कि डिशेज क्या-क्या होंगी ?"

मिस पाल ने बेरुख़ी से कहा—"जब आप फ़ैसला करेंगे, तो फेहरिस्त बना दूँगी और आपकी मंजूरी ले लूँगी।"

ज़ाहिर है कि न कोई दावत थी न किसी का खाना। मकसद तो था मिस पाल को ज़रा टाले रखना। हालाँकि जब मिस पाल चौबीस घन्टे इसी घर में है और वालिद साहब और वालिदा साहिबा में इस प्रकार की तू-तड़ाक अकसर होती रहती है, मिस पाल से यह बात कब तक छिपायी जा सकती है। हम मिस को वहाँ से टालकर यहाँ तक लाये थे कि इतनी ही देर में वालिद साहब क्रोध में भरे हुए वहाँ भी तशरीफ़ ले आए। उन्हें देखते ही हमने सबसे पहले मिस पाल से कहा—"अच्छा तो मैं आपको सुबह इत्तिला दूँगा, आप जा सकती हैं।"

उनके जाने के बाद वालिद साहब ने क्रोध से काँपते हुए कहा—"यह जो तुम्हारी माँ है, हरामज़ादी नाइन कहीं की। यह मुझको जिन्दा न रहने देगी और इसी के हाथों सारा भाँडा फूटेगा।"

हमने मौका ग़नीमत जान कर कहा—"आप जिस वक्त उन पर गुस्सा करते हैं, उस वक्त यह भी भूल जाते हैं कि उनसे पहले भाँडा फोड़ेगा आपका यह गुस्सा। आपको यह भी याद नहीं रहता कि मिस पाल इस घर में हैं। वह यह गाली-गलौज सुनेंगी तो क्या कहेंगी। अब इस वक्त उन्हें नाइन कह रहे हैं और आपको यह भी खयाल नहीं कि दीवार के भी कान होते हैं।"

वालिद साहब ने ज़रा नरम पड़कर कहा—"यह तो बताओ क्या करूँ? अब उसने यही रट लगा रखी है कि अपने भाई को नज्जो के लिये ज़बान दे चुकी हूँ। वह किसी तरह नहीं चाहती कि ख़ान बहादुर के यहाँ निस्बत हो।"

हमने कहा—"इसका तरीका यह है कि मैं खुद उनको समझाऊँगा और उनको विश्वास दिला दूँगा कि नज्जो का सवाल इसलिए पैदा नहीं होता कि मैं खुद उसके साथ शादी करने को तैयार नहीं हूँ, मगर आप अपने गुस्से को काबू में रखिये।"

वालिद साहब ने कहा—"मैं तो खुद घर में कदम नहीं रखता, ज्यादा-तर बाहर ही रहता हूँ इस सिर-फिरी औरत के कारण। मगर कभी तो बात करनी ही पड़ती है और जब बात करता हूँ, तो मुसीबत आ जाती है, मैं जितना-जितना आगे बढ़ता जाता हूँ उतना ही इस औरत का डर मेरी जान निकाले रखता है, कि अगर इस औरत ने हकीकत खोल दी तो किसी को मुँह दिखाने लायक न रहेंगे।"

हमने कहा—"आप इस तरफ़ से इतमीनान रखिये, मैं पूरी कोशिश करूँगा कि वह नज्जो का खयाल अपने दिल से निकाल दें।"

वालिद साहब ने कहा—"एक नज्जो का खयाल ही क्या, ज़रूरत तो यह है कि वह एक दम सब को भूल जाये। और नजर यह आ रहा है कि वह अपनी असलियत किसी तरह न भूलेगी। मिस पाल की बदौलत सलीका आ गया है कुछ लिख-पढ़ भी गई है, मगर दिमाग़ वही नाइन का है। सीधी बात करते-करते एक दम वही रग फड़कती है और काबू से बाहर हो जाती है। अब कह रही थी कि वह 'मुझे मार डालो, मगर मैं अपने भाई को नहीं छोड़ सकती।"

हमने कहा—"इसका भी इलाज है आप नीति से काम लें। कुछ दिन चुप रहिये, जब वह इस नई ज़िन्दगी की आदी हो जायेंगी और जब ऊँची सोसाइटी का मज़ा चख लेंगी, तो खुद ही सब कुछ भूल जायेंगी। औरत हैं बेचारी। उनकी जो आदतें बन चुकी हैं, उनसे मजबूर भी हैं।"

वालिद साहब ने उसी प्रकार निराशा के साथ कहा—"सौ बात की एक बात यह है कि असल नसल की नाइन है। असलियत मुश्किल से ही भूलेगी और इसके कारण मुझे हमेशा यह धड़का लगा रहेगा कि कब भाँडा फोड़ती है। मिस पाल बेचारी ऊपर से कलई तो कर सकती हैं; मगर ताँबे को चाँदी नहीं बना सकतीं।

ताँबे को चाँदी बनाना मिस पाल के लिये क्या, किसी के लिये भी मुमकिन न था। वालिदा साहिबा को तो कहते हैं, मगर खुद श्रीमान जब अपनी असलियत पर आते हैं तो क्या कसर उठा रखते हैं। पत्नी से गाली-गलौज और बात-बात पीछे हरामज़ादी कहना आखिर बात क्या है? मगर अब कोई समझाये बड़े मियाँ को? अगर साफ़-साफ़ कह दो तो खुद भी दो-चार गालियाँ सुन लें। भलाई इसी में है कि सुनते जायें और पीते जायें। वरना असल बात तो यह है कि असलियत का इज़हार दोनों तरफ़ से होता रहता है। फ़र्क सिर्फ़ इस क़द्र है कि वालिदा साहिबा बेचारी इस जाति से भी हैं और मूर्खा भी हैं। वालिद साहब इस जाति से अवश्य हैं लेकिन मूर्ख नहीं हैं, बल्कि सारी दुनिया को मूर्ख बनाये हुए हैं। हद यह है कि खान बहादुर जैसा काइयाँ आदमी, जिसने ज़िन्दगी-भर जोड़-तोड़ किये हैं और समय की सरकार को मूर्ख बना कर ख़िताब तक हासिल किया है, वह भी वालिद साहब की चालबाज़ी का शिकार बने हुए हैं। और इस खरे पठान की समझ में यह बात आ गई है कि यह अजनबी महाजन उनकी टक्कर का खानदानी रईस है। ख़ैर, वालिद साहब का क्रोध इस समय किसी-न-किसी तरह शान्त किया, और उन्हें इत्मीनान दिला दिया कि वह खुद अपने को काबू में रखकर तनिक धीरज से काम लें और देखें कि वालिदा साहिबा में उनका यह सुपुत्र क्या तबदीलियाँ पैदा करता है?

: ६ :

ख़ान बहादुर साहब ने तो खाने की ऐसी व्यवस्था की थी जैसे वाकई कोई बहुत बड़ा 'डिनर' हो। यह ठीक है कि हम लोग भी कुछ कम शान से न आये थे। हम खुद बाकायदा 'डिनर जाकेट' में थे। वालिद साहब खाने के देसी लिबास में थे। स्याह शेरवानी, सफ़ेद चूड़ीदार पायजामा, वारनिश का पम्प और काली जुर्राबें। मिर्ज़ा साहब भी वालिद साहब की शेरवानी में फूटे निकलते थे। मगर यहाँ तो राजसी ठाठ थे, बैरे पगड़ियाँ और टोपियाँ बाँधे इधर-से-उधर टहलते फिर रहे हैं। खुद ख़ान बहादुर साहब डिनर जाकेट में मौजूद हैं। और तो और उनकी विशालकाय बेगम साहिबा, इमारत की इमारत निहायत कीमती लिबास में एक सोफ़े पर रखी हुई थी। हम लोगों का स्वागत करने के बाद हमें गोल कमरे में लाया गया और ख़ान बहादुर साहब ने जो इस समय विनोदशील भी बने हुए थे, बढ़े, मुसकराते हुए बेगम साहिबा से सब का परिचय कराते हुए कहा—"साहबान ये हैं मेरे दिल की मलिका!"

वालिद साहब ने कहा—"खूब, गोया आप उनके दिल हैं।"

मिर्ज़ा साहब ने जल्दी से कहा—"क्या बात फ़रमाई है, गोया वह दिल की मलिका नहीं, आप उनके दिल हैं।"

ख़ान बहादुर साहब ने कहा—"यह कहना इतना ज़रूरी न था अलबत्ता आप यह सिफ़ारिश कर दीजिए, कि वह कभी-कभी मेरे दिल को आज़ाद कर दिया करें।"

वालिद साहब ने बेग़म साहिबा के सामने सभ्य ढंग से सिर झुकाते हुए कहा—"बड़ी खुशी हुई आपसे मिलकर, आपको तो बहन हमसाई कहना चाहिये।"

ख़ान बहादुर साहब ने अपनी बेग़म साहिबा को बाकायदा शरमाने भी न दिया। अत्यन्त भौंडी हँसी हंस कर बोले—"मगर बन्दानवाज़, आपसे

शिकायत जरूर है कि आप हमारी बहन हमसाई को न लाये।"

और अब बेग़म साहिबा ने भी अपना तबाक-सा मुँह साड़ी के आँचल में छिपाते हुए कहा—"बेग़म साहिबा क्यों नहीं आई ?"

वालिद साहब ने तुरन्त उत्तर दिया—"अरे साहब, उन बेचारी को आए दिन की बीमारियों ने इस काबिल नहीं रखा है कि कहीं आयें-जायें। चौबीस-घंटे नर्स के सहारे रहती हैं।"

ख़ान बहादुर साहब ने कहा—"वह तो मैं देखता हूँ कि मिस पाल बेचारी शायद उन्हीं की चिन्ता में रात-दिन इधर-से-उधर भागती हैं। आख़िर शिका-यत क्या है, भाभी साहिबा को ?"

हमने सोचा कि जल्दी से कोई उचित रोग बता दें, क्योंकि भय यह था कि न जाने वालिद साहब क्या बीमारी कह जायें। मगर तौबा कीजिये, वह भला चूकने वाले हैं, अजीब समझ पाई है उन्होंने। तुरन्त उत्तर दिया—"हज़रत क्या अर्ज़ करूँ, किसी ने कहा—सन्निपात है, किसी ने कहा पागलपन है, तरह-तरह के इलाज कराता रहा। मगर अस्ल बात यह है कि दंगों की वे भयानक घटनाएँ देखी हैं कि दिमाग़ पर उनका बहुत ही नागवार असर पड़ गया है। उन्हीं के कारण दिमाग़ चल गया है।"

ख़ान बहादुर साहब ने कहा—'अल्लाह रहम कर !" और अपनी बेग़म की ओर पलट कर बोले—'किसी वक्त मिज़ाज पुरसी कर आओ न तुम ?"

बेग़म साहिबा ने कहा—"मैं जरूर जाऊँगी।"

इतने ही में·········

नज़र बहकी, हिजाब उठा हुई इक रौशनी पैदा।
फिर इससे बचना क्या सम्हलना सख्त मुश्किल था॥

एकदम सबकी नज़रें उस नवागन्तुका लड़की की ओर उठ गईं, जो एक सलाम में सारी महफ़िल को टाल ले जाने के बाद अपनी माँ के पास सिमट कर बैठ गई। खुले हुए रूखे सुनहरी बालों पर लाल रंग का चौड़ा-सा रिबन बँधा हुआ और इसी रंग का सूट रअना को वाकई इस समय दीप-शिखा बनाए हुए था। ख़ान बहादुर साहब ने रअना को देख कर बड़े गर्व से मुसकराते हुए कहा—"आप मेहमानों से भी ज़्यादा मेहमान साबित हुईं। सब के बाद तशरीफ़

लाई हैं। बेटी, तुमने चाचा को भी सलाम किया ?"

वालिद साहब ने कहा—"मैं उस बेचारी का सलाम कबूल करके दुआएँ भी दे चुका हूँ। आपको अभी तक सलाम ही की पड़ी हुई है। इधर आओ बेटी, तुम मेरे पास इस सोफ़े पर बैठो।"

रअना माँ के पास से उठकर वालिद साहब के समीप सोफ़े पर जा बैठी। और वालिद साहब ने शुद्ध पूर्वी सभ्यता के अनुसार उसके सिर पर हाथ फेर कर कहा—"तुम भी कहती होगी, अच्छे चचा हैं कि इतने दिनों से दीवार बीच रहते हैं और अब तक भतीजी को पूछा भी नहीं।"

ख़ान बहादुर साहब ने कहा—"यही बात चचा भी तो कह सकते हैं कि अच्छी भतीजी है, कि चचा को कभी सलाम तक भी जाकर नहीं किया।"

बेग़म साहिबा ने कहा—"इनकी दुनिया तो बस इनकी किताबें हैं।"

ख़ान बहादुर साहब ने कहा—"ख़ैर यह तो जनाब ग़लत फ़रमा रही हैं इस ग़रीब को घर की भी कुछ कम फ़िक्र नहीं है। खुदा झूठ न बुलवाये तो महज़ इस कमरे में हर कुशन उसी का बनाया हुआ है, हर पर्दा-दर उसी ने बनाया है। यह मेंटल पीस ही देख लीजिये।"

वालिद साहब ने कहा—"सुब्हान अल्लाह चश्मे बद दूर। यह तो बड़ी सुघड़ बेटी निकली।"

और मिर्ज़ा साहब अपनी कुर्सी से ख़ामोशी के साथ उठकर मैंटल पीस के करीब पहुँच कर झालर को चश्मा लगाकर देखते हुए बोले—"गोया यह सब हाथ का काम है ?"

वालिद साहब ने कहा—"जी नहीं, थोड़ा-सा मशीन का काम भी है।"

रअना ने कहा—"जी नहीं, मशीन का तो इसमें कोई काम ही नहीं है।"

वालिद साहब ने कहा—"वे हाशिये जो सिये हैं, वे तो मशीन ही से सीये हैं न ?"

रअना ने हँसकर कहा—वह तो ख़ैर दूसरी बात है, काम तो न हुआ वह।"

मिर्ज़ा साहब ने कहा—"वही तो मैं कहने वाला था कि मशीन में वह सफ़ाई कहाँ ? खुदा बुरी नज़र से बचाये, क्या दस्तकारी है ! मालूम होता है कि जैसे हर फूल अभी खिला है।"

खान बहादुर साहब ने कहा—"भाई मिर्ज़ा, तुम मेरी लड़की की तारीफ़ कर-करके चौपट न कर देना कहीं। वह बेचारी तारीफ़ चाहने वाले रईसों में से नहीं है।"

मिर्ज़ा साहब ने कहा—"खुदा की कसम ऐसी हाथ की सफ़ाई नजर से न गुज़री थी और ये गद्दों के गिलाफ़ भी सुब्हान अल्लाह! सुब्हान अल्लाह!! क्या मोती पिरोये हैं! हुजूर यह बगला बनाया है कि खुदा की दुहाई है।"

रअना ने हँसकर कहा—"जी बगला नहीं, सारस है।"

मिर्ज़ा साहब ने हँसकर कहा—"वही तो मैं कहूँ कि बगला, यह कुछ आम बगलों से मुख्तलिफ़ है—सारस है। तब तो क्या कहना है बिलकुल सारस, सोलह आने सारस!"

वालिद साहब ने कहा—"मिर्ज़ा साहब देख भी खूब रहे हैं, अब सोलह आने सारस!"

ठीक इसी समय बैरा ने आकर भोजन की तैयारी की सूचना दी और खान बहादुर साहब हम सबको लेकर भोजन के कमरे में आ गये जहाँ एक लम्बी-चौड़ी मेज़ पर भाँति-भाँति के खाने रकाबदारी के समस्त चोंचलों के साथ सजे हुए थे और टहल-टहल कर खाने की व्यवस्था थी। रअना ने बढ़कर प्लेट, कांटा और चमचा वालिद साहब को दिया, फिर मिर्जा साहब को। और आखीर में हम प्रतीक्षा में थे कि उसने पास से गुजरते हुए कहा—"आप खुद तकलीफ़ कीजिए।"

अतएव खुद ही कष्ट करना पड़ा। मगर सच पूछिये तो असल कष्ट बेचारे मिर्ज़ा साहब को हो रहा था, जिन्हें इस प्रकार खड़े-खड़े खाने का शायद अभ्यास नहीं था। खाने का यह ढंग हरएक के बस की बात नहीं है, विशेषतः वे लोग जो दोनों हाथों से खाते हैं। मिर्ज़ा साहब ग़रीब की समझ में कुछ न आ रहा था कि किस तरह प्लेट पकड़ें और किस तरह कौर उठायें। उनका बस चलता तो दोनों हाथों से प्लेट पकड़ कर पानी पीने के अन्दाज से पुलाव खाना शुरू कर देते। भाँति-भाँति के खाने को निहायत हसरत से देख रहे थे कि अगर यही ढंग है खाने का, तो ये सब नियामतें धरी रह जायेंगी और न नीयत भरेगी न पेट। हमें सबसे अधिक शंका वालिद साहब की ओर से थी मगर तोबा

कीजिये वे मेज़ के सामने कुर्सी पर बैठाकर हजामत बनाने के अभ्यस्त ठहरे। इस समय भी एक हाथ में प्लेट, दूसरे में कांटा इस प्रकार लिए हुए थे जैसे एक हाथ में कंघा और दूसरे में कैंची लिए रहते थे और इस तेज़ी से खा रहे थे, जैसे निहायत सफ़ाई से कचाकच बाल काट रहे हों।

रअना की वालिदा साहिबा अपनी प्लेट को मालगोदाम बनाकर एक कुर्सी पर बैठी खा रही थीं। रअना विभिन्न खानों की डिशें ले-लेकर कभी वालिब साहब के पास जाती थी, कभी ख़ान बहादुर के पास और कभी मिर्ज़ा साहब के पास, ज़िद थी तो एक हमसे। आख़िर खुद ख़ान बहादुर साहब ने उससे कहा--"बेटी, ज़रा इस ग़रीब को भी पूछ लो। ख़ाली प्लेट लिए खड़ा है।"

हमने अर्ज़ किया—"कई बार ख़ाली कर चुका हूँ, कोई कहाँ तक पूछे!"

रअना ने करीब आकर कहा—"प्लेट मेज़ पर रख दीजिये, और यह मुर्ग़ जिवह करने की कोशिश कीजिये।"

मिर्ज़ा साहब करीब ही थे—मुशायरा के टकसाली श्रोताओं की तरह एकदम बे-काबू होकर बोले—"ऐ सुव्हान अल्लाह! मुर्ग़ काटने के लिए मुर्ग़ जिबह करना क्या बात पैदा की है। माशा अल्लाह साहबज़ादी!"

ख़ान बहादुर साहब ने कहा—"आप दाद ही देते रहेंगे या कुछ लेंगे भी। भाई मिर्ज़ा साहब, आपको अगर इस तरह तकलीफ़ हो रही है, तो बैठ जाइये कुर्सी पर।"

मिर्ज़ा साहब ने कुर्सी की ओर लपकते हुए कहा—"हुज़ूर वाला, यही मैं भी कहने वाला था। इस तरह खाने के लिए दो हाथ ज़रा नाकाफ़ी साबित हो रहे थे। किस तरह कोई प्लेट को पकड़े और किस तरह निवाला बनाये।"

वालिद साहब ने कहा—"इसीलिए आपसे अर्ज़ किया गया है कि आप तशरीफ़ रखें, ताकि ज़रा हाथ दिखा सकें।"

भोजन के अन्त में मीठी डिश सबसे ज़्यादा पसन्द की गई। और वालिद साहब ने एक बार के अलावा दोबारा और माँगी, तो बेग़म साहिबा ने शरमाते हुए कहा—"आज रअना ने यही पुडिंग बनाई थी और यही सबको पसन्द आई है।"

ख़ान बहादुर साहब ने कहा—"यह तो कोई नई बात नहीं है। खाना

अव्वल तो मेरी बेटी पकाती नहीं है, अगर कभी पका देती है तो वही चीज़ बाज़ी ले जाती है, जो उसने पकाई हो।"

मिर्ज़ा साहब ने भी दूसरी बार पुडिंग से प्लेट भरते हुए कहा—"जवाब नहीं है इसका हुज़ूर वाला! क्या मज़ा है कि तबीयत में सरूर आ जाता है!"

अतएव मिर्ज़ा साहब सबके आखिर में खाने के कमरे से निकले और उस समय तक इस पुडिंग की तारीफ़ करते रहे, जब तक कॉफ़ी न आ गई। रअना ने मिर्ज़ा साहब को अपने हाथ से कॉफ़ी बना कर दी और चुपके-से कह गई कि यह भी मैंने बनाई है। मगर कॉफ़ी का मज़ा मिर्ज़ा साहब की समझ में न आ सका। यों पीने को वह पूरी दो प्यालियाँ पी गए। वह तो शायद और भी पीते मगर वालिद साहब ने पान पेश कर दिया ताकि किसी प्रकार यह सिलसिला ख़त्म हो।

: ७ :

ख़ान बहादुर साहब के यहाँ आना-जाना बाकायदा शुरू हो गया था और खुदा का शुक्र है कि वालिद साहब ने वालिदा साहिबा की ओर से ख़ान बहादुर साहब और उनकी बेग़म साहिबा को विश्वास दिला दिया था कि उनका दिमाग़ वाकई ठीक नहीं है। बेग़म साहिबा एक-आध बार वालिदा साहिबा से मिली भी। मगर जब कोई यह समझकर मिले कि जिससे मिल रहे हैं, उसका दिमाग़ ठीक नहीं है, तो दिमाग़ ख़ाम-ख्वाह ख़राब महसूस होता है ! वालिदा साहिबा को खुद भी बेग़म साहिबा के बारे में यही संदेह था कि बेग़म साहिबा के दिमाग़ का कोई पुर्ज़ा ढीला हो गया है। दाद दीजिये वालिद साहब की समझ की, इधर बेग़म साहिबा से वालिदा साहिबा के लिए कह दिया कि दिमाग़ पर असर है और उधर वालिदा साहिबा को समझा दिया कि पड़ोसन कुछ सनकी हुई हैं। पिछले दंगों में कुछ प्रियजन मारे गये हैं उनका दिमाग़ पर असर है, ज़रा होशियार रहना। नतीजा यह कि दोनों को एक-दूसरे के पागल होने का विश्वास हो गया। आज ही जब बेग़म साहिबा, वालिदा साहिबा से मिलकर चली गई और वालिद साहब ज़नाने मकान में आये तो हमारी मौजूदगी में वालिदा साहिबा ने कहा—"वैसे तो बेचारी बिल्कुल अच्छी मालूम होती है; मगर चेहरे पर पागलपन बरसता है। मुझसे पूछ रही थी कि दंगे का ख़याल मुझे अब क्यों है ? और समझा रही थीं कि अब तो अमन ही अमन है।"

वालिद साहब ने कहा—"बात यह है कि खुद उस बेचारी के दिमाग़ में यही एक ख़याल जड़ पकड़ गया है न ? और यह तो आम तरीका है कि पागल जिस ख़ब्त में मुबतला होता है, उसी ख़ब्त में वह सारी दुनिया को मुबतला समझता है। तरीका सिर्फ़ यह है कि पागल से उलझा न जाये और उसकी हाँ-में-हाँ मिलाई जाये वरना जनून और बढ़ जाता है।"

वालिदा साहिबा ने कहा—"मैं तो खुद डरती हूँ कि कहीं उन पर दौरा

न पड़ जाये और मेरा मुँह न नोच लें। वह जो कुछ कहती हैं, मैं कहती हूँ ठीक कह रही हैं आपा। मगर सच पूछो तो मुझे उनकी लड़की भी कुछ बहकी हुई मालूम पड़ती है।"

वालिद साहब ने चौंक कर कहा—"कौन रअना? लाहोल विला कुव्वत! वह तो ऐसी समझदार लड़की है कि मैं क्या कहूँ? सारा घर सम्हाले हुए है और इस कद्र सलीके से चला रही है कि वाह! वाह!"

वालिदा साहिबा ने कहा—"न कहो, मुझे तो वही पागलपन उसमें नजर आया, जो माँ में है। ऐसी फटी-फटी आँखों से मुझे देखती है कि खुद मुझे डर लगने लगता है। और ऐसे दूर-दूर रहती है, जैसे वह नहीं बल्कि मैं पागल हूँ"

वालिद साहब ने कहा—"खैर यह भी वह कुछ ग़लत नहीं समझती है। जनाब की सही दिमागी से भी खुदा ही बचाए। अब इससे बढ़कर और क्या पागलपन होगा कि रअना को भी मारे अक्लमन्दी के पागल समझ बैठीं। वह ग़रीब इसलिए परेशान नजर आती होगी कि पागल माँ को लेकर आती है और ख़तरा यही रहता है कि कहीं वह सनक न जायें किसी बात पर। और पराये घर में कोई ऐसी-वैसी हरकत न कर बैठें। अभी कल बेचारे ख़ान बहादुर के मुँह पर गुलदान जो ताक कर मारा है तो मुँह गुलदस्ता बनकर रह गया।"

वालिदा साहिबा ने डरते हुए कहा—"इन्हीं बातों से तो मैं डरती रहती हूँ हर वक्त, कि कहीं वह मेरी शामत न ले आयें। और अब तो मैंने तय कर लिया है कि कभी जो मैं अपने बच्चों की ससुराल इस पागलख़ाने को बनने दूँ।"

अब तक बनावटी पागलपन का ज़िक्र था; मगर अब वालिद साहब को सचमुच क्रोध आया—"फिर वही औंधी खोपड़ी वाली बातें शुरू कीं।"

वालिदा साहिबा ने कहा—"औंधी खोपड़ी वाली बात मेरी है या तुम्हारी? एक तो मेरी औलाद और किस्मत उसकी फोड़ना चाहते हैं पाग़लों से रिश्ता जोड़कर। तुम मुझसे लिखवा लो कि सिर्फ़ माँ नहीं बेटी के दिमाग़ में भी खराबी है।"

वालिद साहब ने अपनी बेतक़ल्लुफ़ी फिर शुरू कर दी—"दिमाग़ की ख़राबी है असल में तुम्हारी, और तुम भी अपनी असलियत से हो मजबूर! आख़िर

कितनी देर शराफ़त से बात कर सकती हो ?"

वालिदा साहिबा ने कहा—"तुम जो चाहो कहो, मगर मैं अच्छी तरह समझ चुकी हूँ इन लोगों को। भट पड़े वह सोना जिससे फटे काना। चूल्हे में जाये वह बड़ा घर, जिसमें हर वक्त पागलों, ख़ब्तियों का साथ हो। नौज, मैं एक पागल लड़की ब्याह कर लाऊँ। नज्जो मेरे ग़रीब भाई की लड़की ज़रूर है; मगर है अपना गोश्त-पोश्त।"

वालिद साहब ने बिल-बिलाकर कहा—"फिर वही नज्जो। मैं तुम्हें ज़बानी तो हज़ार बार समझा चुका हूँ अब जूते से समझाना बाकी है।"

यह समय था हमारी मदाख़लत का; इसलिये हमने वालिदा साहिबा से कहा—"यह आप नज्जो, नज्जो का जो वज़ीफ़ा हर वक्त पढ़ती हैं, कभी आपने मुझसे पूछा—"कि मेरी क्या राय है ?"

वालिदा साहिबा ने तेवर बदल कर कहा—"तो क्या अब तुम्हारी भी राय लेती फिरूँगी ? मेरे यहाँ का दस्तूर नहीं कि किसी की शादी हो, उसकी भी राय ली जाये।"

वालिद साहब ने कहा—"तुम्हारा इलाज वाकई जूताकारी के अलावा और कुछ नहीं। बहुत दिन से सिर तरस रहा है न ताजपोशी के लिये ? बस दिमाग़ ठिकाने नहीं रहा है।"

हमने वालिदा साहिबा से कहा—"अब वह ज़माना गया कि जिसकी शादी हो, उसकी राय न ली जाए। अब तो सिर्फ़ उसकी राय चलती है जिसकी शादी हो। मैं तो खैर लड़का हूँ, अगर लड़की होता तो भी यही कहता।"

वालिद साहब ने हमसे कहा—"बकने दो जी इसको, सुनता कौन है, इस नायन की। मुझे चाहिये था कि यहाँ आते वक्त चुटिया काट कर उसी तरफ़ छोड़ आता। न जाने इस मुसीबत को क्यों साथ ले आया ?"

वालिदा साहिबा ने कहा—"खैर अब तो यह मुसीबत आ ही गई है, और अब तो यह ज़िन्दगी-भर की मुसीबत है। तुम चाहे मुझे मार ही डालो मगर मैं तुम्हारी तरह अपनी असलियत को और अपनों को नहीं भूल सकती। भूल गए वे दिन, जब उस्तरों पर धार रखवाने में ज़िन्दगी घिसी जा रही थी ?"

वालिद साहब ने हमारी ओर पलट कर कहा—"देख रहे हो, कैसी कैंची

सी ज़बान चल रही है ?"

नाई होना दूसरी बात है ; मगर यह महावरा था बिलकुल ठीक । इस समय वालिदा साहिबा वाकई कैंची की तरह ज़बान चला रही थीं। और डर था कि अगर वालिद साहब भी असलियत पर उतर आए, तो मिस पाल पर इसी तरह सारी हक़ीकत खुल जाएगी। इसलिए बेहतर यही था कि वालिद साहब को यहाँ से टाल ले जायें । अतएव हमने कहा—"इनको अगर ख़याल नहीं है तो आप ही ग़ौर कीजिए कि अगर यह तू-तू, मैं-मैं और ये कैंची उस्तरे मिस पाल ने सुन लिये, तो वह क्या राय कायम करेगी ? फिर दीवार दर-म्यान क्या यह बात ख़ान बहादुर साहब से छिपाई जा सकेगी ?"

वालिद साहब ने उठते हुए कहा—"मैं तो जिन्दगी से तंग आ चुका हूँ इस औरत के मारे । अभी तो मैंने सिर्फ़ बहाने के तौर पर पागल कहा है इसे, मगर मालूम होता है कि इसे वाक़ई पागलख़ाने में भर्ती भी करना पड़ेगा ।"

वालिदा साहिबा ने कहा—"दिमाग़ अपना बहक रहा है और पागल मैं बनाई गई हूँ ।"

वालिद साहब क्रोध में यह अजीब बात कह गये थे। हम तो सन्नाटे में आ गये, कि उनसे यह क्या भूल हो गई। जिसे बचाव के लिये पागल बनाया है, उसी के सामने यह भेद खोल रहे हैं। ख़ैर, वहाँ से तो ख़ामोशी के साथ वालिद साहब को अपने कमरे में ले आये, मगर यहाँ लाकर उनसे पूछे बिना भी न रह सके, "कई बार आप भी गुस्से में कमाल कर जाते हैं। ख़ान बहादुर साहब की बेग़म साहिबा से कहा है कि वालिदा साहिबा के दिमाग़ में ख़राबी है। वालिदा साहिबा से कहा है कि ख़ान बहादुर की बेग़म का दिमाग़ चला हुआ है। और इस वक्त गुस्से में यह भी कह दिया कि अभी तो पागल बहाने के तौर पर कहा है, अब पागलख़ाने में भर्ती भी कराना पड़ेगा।"

वालिद साहब ने लापरवाही से कहा—"वह तो ख़ैर मैंने जान-बूझकर कहा, ताकि तुम्हारी माँ को यह मालूम हो जाये कि उसे मैंने पाग़ल मशहूर किया है। अब वह अपने-आपको सही दिमाग़ की साबित करने की कोशिश करेगी और जब कोई अपने दिमाग़ को सही साबित करने की कोशिश करता है, तो उसे सचमुच ही पागल समझा जाता है। वह ज़रूर ख़ान बहादुर साहब

की बेगम से कहेगी कि मुझे पागल मशहूर कर रखा है और इस तरह वह अपना पागलपन खुद उछालेगी।"

मान गये साहब। वाक़ई वालिद साहब की समझ का जवाब नहीं है। हर पागल अपने को सही दिमाग़ सिद्ध करने का पूर्ण प्रयत्न करता है और यह प्रयत्न, अपने-आप एक पागलपन नज़र आता है। वालिद साहब ने इस क्रोध के बावजूद जिसमें वह पेचताव खा रहे थे, एक दम हँसकर कहा—"ख़ान बहादुर साहब की बीवी अजीब वहशत से तुम्हारी माँ को देख रही थीं और तुम्हारी माँ भी उससे डरी हुई थी। वाक़ई उस वक्त दोनों को दोनों पागल नज़र आ रही थीं। और लतीफ़ा यह है कि बेचारी रअना के चेहरे पर इन दोनों का असर पड़ रहा था। वह भी अजीब सन्नाटे में थी। बस यह तरकीब अपना काम कर गई। अब मुझे तुम्हारी माँ की किसी वेहूदगी का कोई ख़तरा नहीं है। काश ! यही बात मैंने मिस पाल को भी बता दी होती। लेकिन ख़ैर कोई बात नहीं, मिस पाल तो खुद ही एक ख़ास किस्म की पागल है। उसे अपने काम से काम, वह किसी बात में दख़ल नहीं देती है। लीजिये नाम लिया ही था कि वह तशरीफ़ ला रही हैं।"

मिस पाल ने अपनी उँची एड़ी की कट-कट के साथ कमरे में तशरीफ़ लाकर गुलदान के बासी फूल निकाल कर ताज़ा फूल लगाते हुए कहा—"नवाब साहब का ग़ुसल आज दो बार लगाया गया और पानी ख़राब हुआ। हुक्म हो तो अब तीसरी बार गुसल लगाया जाये ?"

वालिद साहब ने कहा—भई, मिस पाल, तुम नहला-नहला कर मुझे मार डालोगी। हफ़्ते में एक दिन छुट्टी भी दे दिया करो।"

मिस पाल ने आँखें गोल करते हुए कहा—"आप बग़ैर ग़ुसल के रहना चाहते हैं ! इस तरह तो बीमार पड़ जायेंगे।"

वालिद साहब ने उठते हुए कहा—"अच्छा बाबा, अच्छा, जाता हूँ गुसल करने।"

और वालिद साहब बड़बड़ाते हुए कमरे से निकल गये। उनके जाने के बाद बल्कि उनके अपनी आवाज़ की पहुँच से आगे निकल जाने के बाद मिस पाल ने कहा—"आज मैंने देखा है कि ख़ान बहादुर साहब की लड़की को अच्छी

तरह । आपसे मैं कुछ नहीं कह सकती । आपके दिल पर जो गुज़र रही है, वह ठीक ही है ।"

हमने बड़ी मासूमियत से कहा—"मेरे दिल पर गुज़र रही है ! क्या गुज़र रही है मेरे दिल पर ?"

मिस पाल ने बड़ी शरारत से कहा—"आँखों में आँखें डाल कर कहिये । मगर मैं आपको बधाई देती हूँ कि रञ्जना भी आपके ख़याल से ख़ाली नहीं । मैंने इतनी ही देर में सब अन्दाज़ा कर लिया है ।"

हमने कहा—"मिस पाल, तुम मुझसे इस तरह पहेलियों में बात न किया करो । क्या अन्दाज़ा कर लिया है तुमने ?"

मिस पाल ने उत्तर दिया—"जब आप अपने दिल की बात छिपाते हैं, तो मुझसे यह तक़ाज़ा क्यों है कि मैंने जो अन्दाज़ा किया है, वह बता दूँ आपको । किया होगा मैंने कुछ अन्दाज़ा, आपसे मतलब ?"

हमारे धैर्य और संयम की दाद दीजिये कि हमने मिस पाल की तनिक भी ख़ुशामद न की, कि वह अपना अन्दाज़ा हमें बता दे । उसने यह नख़रा इसलिए किया था कि हम ख़ुशामद करेंगे । मगर उसके अहं को कितनी ठेस लगी होगी, जब हमने मिस पाल की यह बात सुनी-अनसुनी कर दी और अत्यन्त उपेक्षा भाव से सीटी बजाते हुए कमरे से इस तरह निकल आये कि मिस पाल देखती-की-देखती रह गई । उसकी आँखों में देर तक यह इन्तज़ार रहा कि शायद हम अब उससे बात करेंगे । मगर हमने रसीद तक न दी और वह अपना-सा मुँह लेकर रह गई ।

: ८ :

खान बहादुर साहब तो वाकई बड़े प्रगतिशील निकले। ढूंढ़-ढूंढ़ कर इन हज़रत ने इस बात का मौका देना शुरू कर दिया कि हम और रश्ना एक-दूसरे को बाक़ायदा समझा-बुझा लें। यह बात उचित हो या अनुचित; मगर खतरनाक अवश्य होती है। एक नौजवान औरत और एक नौजवान मर्द के दरम्यान शैतान को तशरीफ़ लाते कितनी देर लगती है। लेकिन इस विश्वास की जिम्मेदारी हम और रश्ना दोनों कुछ ज़रूरत से ज्यादा ही महसूस करते रहे। एकान्त मिला, सुहाना एकान्त, अरमान-अंगेज़ एकान्त, मगर न रश्ना बहकी न हम अपनी असलियत पर उतरे। अलबत्ता यह ज़रूर हुआ कि रश्ना हमारे अध्ययन के बाद कुछ और भी हमारे निकट आ गई और हम रश्ना की ओर खिंचते चले गये।

आज की शाम क्लब जाने के लिये खाली रखी थी कि कुछ देर टैनिस होगी। इसके बाद अगर कोई साथी मिल गया तो पिक्चर देखने चले जायेंगे। मगर अभी टैनिस का जूता पहन ही रहे थे कि खान बहादुर साहब के बैरे ने आकर सलाम किया और बताया कि खान बहादुर साहब सलाम दे रहे हैं। हम ज्यों-के-त्यों अपनी कोठी का तार फाँद कर खान बहादुर साहब के यहाँ पहुँच गये। वे अपने दो भयानक कुत्तों के साथ दिल बहला रहे थे। हमें देखते ही बोले—"हैलो, तो क्या आप टनिस खेलने के लिये तैयार थे। मगर यहाँ दूसरा ही प्रोग्राम बन गया है। भई, बात यह है कि मुझे तो एक पार्टी में जाना है और रश्ना बीबी तय किये बैठी हैं कि आज सिनेमा ज़रूर जायेंगी। तो जनाब की ड्यूटी लगाई गई है कि उन के साथ तशरीफ़ ले जायें। इसी लिये मैंने एक दोस्त से कार मंगवा ली है ताकि उस पर मैं जाऊँ और घर की कार आप के साथ हो।"

हमने कहा—"आपने खाह-मखाह मंगाई किसी से कार। मैं अपनी कार

पर चला जाता ।"

ख़ान बहादुर साहब ने कहा—"मेरे ज़हन में आप की कार भी थी; मगर ख़याल आया कि भाई साहब को कहीं जाना हो । बहरलाल अब इस किस्से को छोड़िये । रअना के कमरे में जा कर उन से प्रोग्राम तय कर लीजिये, और मुझे इजाज़त दीजिये ।"

यह कह कर ख़ान बहादुर साहब तो अपने कमरे में चले गए और हमने रअना के दरवाज़े पर दस्तक दी, जिस का उत्तर तुरन्त मिला—"तशरीफ़ ले आइये।"

अन्दर जा कर देखा कि रअना अभी गुसल करके निकली है और बालों को खुश्क करने की कोशिश जारी है । हमें देखते ही अत्यन्त प्रसन्न भाव से बोली—"कहिये कैसी रही यह अचानक गिरफ़्तारी ?" कोई खास प्रोग्राम तो नहीं था ?"

अर्ज़ किया—आप के साथ जो प्रोग्राम बनता है, उस के अलावा मेरा हर प्रोग्राम आम प्रोग्राम होता है, बल्कि आप को तो अब तक इस बात का अन्दाज़ा हो जाना चाहिए था कि मैं आपसे न मिल सकने वाला वक्त काटने के लिए खाह-मखाह के प्रोग्राम बनाया करता हूँ ताकि वक्त आसानी से कट जाए ।"

रअना ने बालों को समेट कर इधर-उधर पिन लगाते हुए कहा-"शुक्रिया, मगर आप को भी इतने दिनों के बाद यह अन्दाज़ा हो जाना चाहिए था कि मेरे वक्त का बेहतरीन हिस्सा भी वही होता है, जो आपके साथ गुज़रे । मगर यह कितना छिछलापन है कि हम लोग अपने मन की यह बात कहने की ज़रूरत भी महसूस करते हैं ।"

अर्ज़ किया—"है तो घटिया बात ज़रूर; मगर क्या किया जाए, कि तसल्ली कुछ इसी तरह होती है !"

रअना ने बालों का जूड़ा पूरा करते हुए कहा—"आज मैंने यह प्रोग्राम एक ख़ास इरादे से बनाया है । आप यह टैनिस के कपड़े जल्दी से बदल कर आइये तो सिनेमा चल कर तफ़सीली बातें होंगी ।"

हमने सावधानी या शायद अनमनेपन के साथ पूछा—"ख़ैरियत तो है ?"

रअना ने कहा—"घबराने की कोई बात नहीं है, आप जल्द तैयार होकर आ जाइये । मैं बिलकुल तैयार हूँ ।"

हमने लम्बे-लम्बे डग उठा कर लगभग भागने के अन्दाज़ से अपनी कोठी पहुँचने की सचमुच जल्दी की। अब रुअना के बंगले के लान में दौड़ कर चलने में भी कोई संकोच न था। इसलिए कि उनके ऊँट-नुमा कुत्तों से न सिर्फ़ परिचय प्राप्त हो चुका था बल्कि थोड़ी-बहुत दोस्ती भी हो चुकी थी। वरना शुरू-शुरू में तो इन भयानक कुत्तों को मज़बूती से बंधवाना पड़ता था, तब कहीं इस ओर का इरादा करते थे। अपने कमरे में आकर जल्दी-जल्दी कपड़े बदले और मिस पाल की उन बातों का जो उस समय एक दम निरर्थक जान पड़ रही थीं यों ही सा जवाब देते हुए रुअना के पास पहुँच गये। वह पोर्च में मोटर के पास ही खड़ी इन्तज़ार कर रही थी। इरादा था खुद ड्राइव करने का। इसलिए कि शोफ़र भी मौजूद न था।

हमने जाते ही पूछा—"क्या जनाब का इरादा है ड्राइव करने का ?"

रुअना ने कहा—"आप का जी चाहता हो आप शौक फ़रमायें।"

अर्ज़ किया—"नहीं, मैंने तो इस लिए पूछा था कि अगर आप वाकई ड्राइव करने वाली हों, तो वालिदा साहिबा से दूध बख्शवा कर चलूं।"

रुअना ने बड़े गर्व से कहा—"जनाब को मालूम होना चाहिए कि इसी कार में पाँच घन्टे के अन्दर लाहौर से मरी जा चुकी हूँ।"

हमने बैठते हुए कहा—"बहर हाल याद रखिएगा कि इस वक्त न हम मरी जा रही हैं न मरने जा रहे हैं, सिर्फ़ सिनेमा तक जाने का इरादा है।"

और रुअना ने कार स्टार्ट कर दी। वह एक निपुण ड्राइवर थी और साथ-ही-साथ बड़ी सतर्क भी। यों परिहास में कुछ कहना दूसरी बात है वरना सच तो यह है कि हम से अधिक आत्म-विश्वास के साथ गाड़ी चलाती थी। कोठी से निकल कर लारेंस रोड पर गाड़ी डालते हुए उसने कहना शुरू किया—"आज यह प्रोग्राम मैंने इस लिए भी बनाया था कि कल हमारे यहाँ एक साहब कराची से तशरीफ़ ला रहे हैं। यह हज़रत मेरे चचेरे भाई भी होते हैं और इस गलतफ़हमी में भी मुबतला हैं कि भाई-बहन का रिश्ता खत्म कराने में गोया कामयाब हो जायेंगे।"

हमने कहा—"अच्छा यानी खरीददार हैं आप के ?"

रुअना ने रवानी के साथ कहा—"जी हाँ, इसी गलतफ़हमी में मुद्दत से

मुबतला हैं और हालत यह है कि ऊँट रे ऊँट तेरी कौन सी कल सीधी और इस कद्र वाहियात आदमी है कि—

हज़ारों साल उल्लू अपनी महरूमी पे रोता है।
बड़ी मुश्किल से तब होता है जाकर एक खर पैदा ॥"

हमने कहा—"क्या खूब ! क्या मिट्टी पलीद की है आपने कितने एक अच्छे शेर की। और यह उल्लू के रोने से खर क्योंकर पैदा हुआ ?"

रहना ने कहा—"बात यह है कि उल्लू को फ़िलासफर भी तो कहते हैं। वह बेचारा रोता ही रह जाता है और खुदावन्द गधे को औलाद दे देता है। बहरहाल मैं यह कह रही थी कि बड़ा ही अजीब आदमी है। कनमैलियों की सी तो सूरत है। जनाब वाला बी० ए० तक पढ़ कर ग्रेजुएट तो हो गए हैं, मगर उस यूनिवर्सिटी का पता नहीं बताते जिस ने उन्हें डिग्री दी है कि कहीं मैं इसे आग न लगा दूँ। बड़ा ही मूर्ख है बेचारा।"

हमने कहा—"बहुत नाराज़ हैं आप उनसे ?"

रअना ने जलकर कहा—"बात यह है, कि भई अगर तुम चुग़द थे तो पड़े रहते चुपके से, इस दुनिया में हमसे क्या। आख़िर होते ही हैं चुग़द ऐसे; मगर दिल जलता है इस बात से कि

'इस आरज़ू को देखिये और उनको देखिये'

नाम है शहाब मगर लाड़ले को शिब्बू मियाँ कहा जाता है। क़ाबलियत का यह आलम है कि इस ग्रेजुएट से एक दिन मैंने पूछा कि मतलब क्या है ? बत्तीसी निकाल कर कहने लगे—"वाह जनाब, इतनी-सी बात नहीं मालूम। अरे भई, वह होता है न एक दुमदार तारा।"

हमने हँसते हुए कहा—"क्या वाक़ई इस हद तक लतीफ़ा हैं वह हज़रत ?"

रअना ने कहा—"हाथ कंगन को आरसी क्या है। कल आ रहे हैं देख लीजियेगा उन्हें। अब मुझे कहना यह था कि वह शख्स सख्त क़िस्म का 'बोर' है बल्कि डबल बोर है और मुसीबत यह है कि हज़रत साहब काफ़ी वक़्त यहाँ गुज़ारेंगे। बात यह है कि जब हम लोग कोई गुनाह कर गुज़रते हैं तो अल्लहा ताला हुक्म देता है अपने अज़ाब के फ़रिश्तों को कि जाओ, नाज़िल

करो उन पर शिब्बू मियाँ को। मेरा मतलब यह है कि उनकी मौजूदगी में खुदा के लिये अपना ज़्यादा वक़्त मेरे ही यहाँ गुज़ारियेगा, वरना यह शख़्स मेरा दिमाग़ ख़राब कर देगा।"

हमने कहा—"मगर बात तो सुनो, वह ठहरे तुम्हारे गाहक! ज़ाहिर है कि वह मुझे बर्दाश्त न कर सकेंगे।"

रअना ने कहा—"यही तो मैं चाहती हूँ कि उनके लिए कोई चीज़ ऐसी हो जाये, जिसे वह बर्दाश्त न कर सकें। वह अपनी मौजूदगी से मुझे जो तकलीफ़ देना चाहता है उसका थोड़ा-बहुत बदला तो मैं भी लूँ उनसे।"

पिक्चर हाउस पहुँच कर हम टिकट लेकर हाल के अन्दर दाख़िल हुए और हमारे पहुँचने के थोड़ी देर बाद अन्धेरा हो गया, मगर हम दोनों में से किसी को इस अँधेरे की तमन्ना थी न इन्तज़ार। अन्धेरे का इन्तज़ार तो उन्हें होता है, जो उजाले में दुनिया से डरते हैं और अन्धेरे में खुदा से भी नहीं डरते हैं। मगर हम दोनों ने रख-रखाव कुछ इस प्रकार कर रखा था कि ये घटिया बातें सूझती ही न थीं और शायद यही कारण था कि रअना का विश्वास दिन-दिन बढ़ रहा था। इन्टरवल होते रअना ने कहा—"मैं यह सोच रही हूँ कि इन हज़रत के आने के बाद हम लोग मरी क्यों न चल दें।"

हमने कहा—"यानी इन हज़रत को छोड़ कर और इस मौसम में? शायद बरफ़ गिरते देखने का शौक़ पैदा हुआ होगा, मगर मेहमान घर में रहेगा।"

रअना ने कहा—'और नहीं तो क्या! मरी की फ़िज़ा को बोर करने के लिये, उन्हें भी साथ ले जाओगे।"

हमने कहा—"इस क़िस्म के लोगों से बेज़ार होने के बजाये उनमें दिलचस्पी लेनी चाहिये। यह तो बड़े मज़े की बात है कि ऐसे बने-बनाये बेवक़ूफ़ मिल जायें फिर उनमें दिलचस्पी क्यों न ली जाये?"

पिक्चर फिर शुरू हो गई और हम दोनों उसकी कहानी में गुम हो गये। मगर जब पिक्चर ख़त्म हुई तो रअना ने फिर शिब्बू मियाँ की कहानी शुरू कर दी, जो रास्ते-भर जारी रही और घर पहुँच कर उसने एक बार फिर वायदा लिया कि शिब्बू मियाँ की मौजूदगी में हम अपना अधिक समय उसी के साथ बितायेंगे।

: ९ :

हम अभी बिस्तर की चाय पीकर अंगड़ाइयाँ ही ले रहे थे कि मिस पाल ने दरवाज़े पर आकर कहा—"क्या मैं आ सकती हूँ साहबज़ादे साहब ?"

हमने बिस्तर से उठते हुए कहा—"तशरीफ़ ले आइये सरकार ।"

मिस पाल ने कमरे में प्रवेश करते हुए कहा—"सरकार तो ख़ैर आपके सामने वाली कोठी में हैं, मैं तो दरबारियों में से हूँ। कहने आई थी कि ख़ान बहादुर साहब का बैरा बाहर खड़ा है । रअना बीबी ने आपको अभी-अभी बुलवाया है ।"

हमने कहा—"ख़ैरियत तो है ? ठहरो मैं ख़ुद पूछता हूँ ।"

और अपना ड्रेस-गाउन पहनते हुए हम बाहर निकल गये । ख़ान बहादुर साहब के बैरे ने अत्यन्त नम्रता से सलाम करते हुए कहा—"बीबी कह रही हैं कि आप जिस तरह बैठे हों, चले आयें ।"

हमने तुरन्त पूछा—"वह साहब, जो मेहमान आने वाले थे क्या पहुँच गये ?"

बैरे ने कहा—"जी हाँ, शिब्बू मियाँ तशरीफ़ ले आये हैं ।"

हमने कहा—"बस तो मैं अभी आया, ज़रा ग़ुसल कर लूँ । बीबी से कह देना कि बस पहुँचा अभी बल्कि ब्रेक फ़ास्ट वहीं करूँगा ।"

बैरे ने कहा—"बीबी ने मुझसे पहले ही कह दिया था कि साहब ब्रेक-फास्ट हमारे ही यहाँ करेंगे ।"

हम बैरे को रवाना करने के बाद जल्द-से-जल्द तैयार हुए । और मिस पाल के बेतुके सवालों का साधारण उत्तर देते हुए ख़ान बहादुर साहब के यहाँ पहुँच गये, जहाँ गोल कमरे में सारा परिवार जमा था । हमको देखते ही ख़ान बहादुर साहब ने पाईप मुँह में लिए हुए फ़रमाया—"हैलो, मैं तो समझा था कि मुश्किल से लंच के वक्त तक आ सकेंगे । फ़रहत मियाँ, मिलो शिब्बू मियाँ

से। यह मेरे भतीजे हैं और आज ही आए हैं। शिब्बू मियाँ, यह हैं साहबज़ादे फ़रहतुल्ला खाँ, मेरे अजीज दोस्त और पड़ोसी नवाब अजमतुल्ला खाँ के साहबजादे और मेरे निहायत अज़ीज भतीजे।"

शिब्बू मियाँ ने इस परिचय के बाद अंग्रेज़ी में प्रसन्नता प्रकट की। हमने एक ही नजर में देख लिया कि रअना ने जो कुछ तारीफ़ इन हज़रत की पहले कर दी थी यह उसकी तसवीर नज़र आ रहे थे। इश्क और मुश्क छिपाये छिपते हों या न छिपते हों मगर हिमाकत तो सचमुच प्रकट होकर रहती है। निस्संदेह शिब्बू मियाँ इस समय बड़े ही सतर्क और सावधान बने बैठे थे। मगर एक मूर्ख जब सम्भलने की कोशिश करता है, उस समय वह और भी मूर्ख नज़र आता है। ठिगना क़द, तंग माथा, छोटी-छोटी आँखों पर बड़े-बड़े गोल शीशे वाली ऐनक—और ऐनक जिस नाक पर टिकी हुई थी वह एक तो यों ही न होने के बराबर थी और इस पर ऐनक की मोटी-मोटी कमानी। नतीजा यह है कि सिर्फ़ ऐनक-ही-ऐनक नजर आ रही थी। मालूम यह होता था कि ऐनक है जिसको अल्लाह मियाँ ने दो हाथ और दो पैर लगाकर शिब्बू मियाँ नाम रख दिया है। छोटे क़द के आदमी को सोफ़े पर कभी न बैठना चाहिये। वह सोफ़े में धँस कर कुछ और भी मुख़्तसर बन जाता है। शिब्बू मियाँ ने सोफ़े पर कुदकने के अन्दाज़ से अपने को उभारते हुए कहा—"बड़ी तारीफ़ सुनी है अभी चाचाजान वग़ैरह से आपकी।"

ख़ान बहादुर साहब ने उठते हुए कहा—"तजरबा से आपको अन्दाज़ा हो जाएगा कि मैं झूठ नहीं बोलता हूँ। तशरीफ़ लाइये, बाकी बातें नाश्ते की मेज़ पर होंगी।"

ख़ान बहादुर साहब के पीछे-पीछे हम सब खाने के कमरे में पहुँचे, जहाँ हथिनी-नुमा बेग़म साहिबा पहले से धरी हुई थीं। हमने जाते हीं सलाम किया। जिसका जवाब यह मिला—"फ़रहत मियाँ, तुम इधर निकल आओ मेरे पास।"

ख़ान बहादुर साहब ने अपनी प्लेट में पोर्ज बनाते हुए कहा—"हमारे शिब्बू मियाँ तो इस पोर्ज वग़ैरह के क़ायल नहीं। उनका मन-भाता नाश्ता है, अंडा और पराठे।"

शिब्बू मियाँ ने खीसें निकालकर कहा—"जी नहीं, अब तो सब कुछ खाने

लगा हूँ।"

ख़ान बहादुर साहब ने बड़े मज़े से कहा—"ख़ूब, इसका मतलब यह है कि समझदार होते जाते हो। लो, तो फिर पोर्ज बनाओ अपने लिए।"

शिब्बू मियाँ ने जिस असभ्यता से पोर्ज बनाया है, उसी से उनके गँवारपन का अन्दाज़ा हो रहा था। फिर लुत्फ़ यह कि चाय के चम्मच से जो उसे खाना शुरू किया तो रअना से न रहा गया। उसने बड़ी गम्भीरता से उनकी प्लेट में झाँकते हुए कहा—"क्या दूध के बजाय चाय डाली है आपने पोर्ज में ?"

ख़ान बहादुर साहब ने भी चौंक कर कहा—"ईं चाय! यानी पोर्ज में चाय।"

शिब्बू मियाँ ने प्लेट दिखाते हुए कहा—"जी नहीं, मैंने तो दूध ही डाला है।"

रअना ने उसी प्रकार गम्भीरता से कहा—"चाय के चम्मच से खाते देखकर मैं समझी शायद चाय डाली हो।"

ख़ान बहादुर साहब ने फिर चौंककर कहा—"यानी चाय के चम्मच से पोर्ज! कमाल करते हैं साहब यह हमारे बरखुरदार भी फ़रहत मियाँ, मैं अकसर ग़ौर किया करता हूँ कि हमारे स्कूलों-कालिजों में यह क्यों नहीं सिखाया जाता कि लिबास किस तरह पहनना चाहिये ? किस वक़्त का लिबास कैसा होना चाहिए। खाना किस तरह खाना चाहिए और खाने की मेज़ के आदाब ये हैं। किताबें रटाकर ग्रेजुएट तो बना देते हैं; मगर ये ग्रेजुएट कालिजों से निकलकर यह भी नहीं जानते कि मछली खाने के छुरी-काँटे और गोश्त खाने के छुरी-काँटे में क्या फ़र्क़ होता है ? और क्यों होता है ? वह नहीं जानते कि किस रंग की पतलून पर किस रंग का कोट पहनना चाहिए और कि उस कोट पर किस रंग की टाई मैच करती है। मैं यह दुरुस्त समझता हूँ कि आदमी कुरता-पायजामा और शेरवानी में रहे इसलिये कि यह अपना क़ौमी लिबास है; लेकिन जब अंग्रेज़ी कपड़े ही पहनने हैं तो वे उर्दू में क्यों पहने जायें ?"

अर्ज़ किया—"यह आप ने क्या फ़रमाया कि अंग्रेज़ी कपड़े उर्दू में क्यों पहने जायें ?"

ख़ान बहादुर साहब ने चमचे से प्लेट बजाते हुए कहा—"मैंने बिलकुल

ठीक कहा है। अब देख लीजिये हमारे भतीजे साहब को, ज़िन्दगी कालिज में गुज़ारी है; मगर कौन कह सकता है कि यह ग्रेजुएट होंगे। अगर इनका इम्तिहान मैं लेता, तो इनके कपड़े देखकर ही इन्हें फ़ेल कर देता और साफ़ कह देता कि वह आदमी जो हरे रंग के सूट पर लाल टाई बाँधे वह तोता हो सकता है मगर इनसान नहीं हो सकता।"

रअना को भी बरबस हँसी आ गई। और शिब्बू मियाँ ने झेंपकर कहा—"यह तो मैंने जल्दी में बाँध ली थी, वरना सब्ज़ टाई भी है मेरे पास।"

ख़ान बहादुर साहब ने तुरन्त कहा—"उसे रखी रहने दीजिये। सुर्ख़ रंग के सूट पर बाँधियेगा।"

बेगम साहिबा ने पति को डाँटा—"अब बस भी करो, बेचारे के पीछे ही पड़ गये। मुझे लिबास पर ऐतराज़ करना हमेशा बुरा लगता है और वही आदत बाप से बेटी ने सीखी है।"

ख़ान बहादुर साहब ने कहा—"भई मैं और किसी पर ऐतराज़ नहीं कर रहा हूँ अपने ही बच्चों को तो समझा रहा हूँ। इनकी इस बदमज़ाक़ी का असर हम ही लोगों पर तो पड़ेगा कि ख़ुदा जाने किन गँवार माँ-बाप की औलाद है यह हज़रत कि सब्ज़ रंग का सूट है। मालूम होता है हरी मिर्च चली जा रही है और लाल रंग की टाई बँधी है, सुब्हान अल्लाह। फिर ज़रा देखिये साहबज़ादे को कि स्वेटर पहना है सफ़ेद रंग का। बरखुरदार स्वेटर के लिए सफ़ेद रंग स्पोर्ट्‌स के लिए होता है और ब्लेज़र के नीचे पहना जाता है। नाश्ते से निपट कर अपने सब कपड़े दिखाइये ताकि मैं आपको उनकी तरतीब समझाऊँ।"

बेगम साहिबा ने बात बदलने के लिए भुने हुए गुर्दों की प्लेट शिब्बू मियाँ की ओर बढ़ाते हुए कहा "लो मियाँ ये गुर्दे खा लो।"

मगर खान बहादुर ने विषय बदलने न दिया। टोस्ट पर मक्खन लगाते हुए कहा—"और क्यों हज़रत, ईमान से कहियेगा, आप को बू बाँधना आती है?"

'शिब्बू मियाँ जान पर खेल कर सच बोल गये—"एक-आध बार बँधी-बँधाई तो बाँधी है।"

ख़ान बहादुर साहब ने कहा—"भई कौनसे हकीम ने नुस्खे में लिखा है कि अंग्रेज़ी लिबास ज़रूर पहनो चाहे पहनना आता हो या न आता हो। बू बाँधना आती नहीं और सूट पहनने का शौक़ है। मुझे यक़ीन है कि तुम्हारे पास शेरवानियाँ कम होंगी और कोट-पतलून ज़्यादा होंगे। है न यही बात ?"

शिब्बू मियाँ ने कहा—"जी हाँ, यह तो ठीक है कि ईद-बक़रीद के लिए एकाध शेरवानी भी होगी।"

ख़ान बहादुर साहब ने अंडे पर नमक छिड़कते हुए कहा—"मैं जानता हूँ कि आमतौर पर यही होता है कि अपना लिबास हम लोगों के पास कम होता है और जो लिबास पहनने का हममें दरअसल सलीक़ा तक नहीं है वह ख़ुदाके फ़ज़ल से मौजूद है। साहब मैंने इस अंग्रेज़ी लिबास की वह दुर्गति होते हुए देखी है कि अब मैं क्या अर्ज़ करूँ। शाम का लिबास है और सुबह पहने हुए फिर रहे हैं। ड्रेस गाउन पहने सड़क पर ऊँघते फिर रहे हैं। और इससे भी बुरी हालत खाने की है। अरे भाई, न खाओ छुरी-काँटों से। अपने देसी ढंग से खाओ। मगर पेट भरे या न भरे, निवाला प्लेट में रह जाता है और काँटों से मुँह ज़ख्मी किये लेते हैं। समझ में नहीं आता कि किस हाथ में छुरी लें और किसमें काँटा ; मगर यह कहते शर्म आती है कि साहब हम अपने देसी अंदाज़ से खाना खायेंगे।"

बेगम साहिबा ने गरदन नापी—"लेकिन तुमने क्यों अपने घर को इंगलिस्तान बना रखा है ? क्यों खाते हो छुरी-काँटों से ? क्यों पहनते हो अंग्रेज़ी लिबास ?"

ख़ान बहादुर साहब ने बड़े गर्व से कहा —"इसलिए कि मैं जानता हूँ छुरी-काँटे से खाना मैं जानता हूँ। अंग्रेज़ी लिबास पहनना। मगर इसके साथ ही साथ मुझे अपने क़ौमी लिबास का वैसा ही शौक़ है। ख़ुदा के फ़ज़ल से शेरवानियाँ भी बनवाता हूँ, कढ़े कुर्ते और जाली खुले चूड़ीदार पाजामे का भी शौक़ है। शलवार भी पहनता हूँ। मेरा मक़सद तो सिर्फ यह है कि भई, जो रंग अख़्त्यार करो, उसमें अनाड़ी और गँवार नज़र न आओ। न पहनो अंग्रेज़ी लिबास अगर पहनना नहीं आता। न खाओ छुरी-काँटों से अगर खाना नहीं जानते। अब देख लीजिये, वे चमचे से गुर्दा खा रहे हैं।"

बेगम साहिबा ने वाक़ई भिड़का—"तोबा है। पीछे ही पड़कर रह गये।"

ख़ान बहादुर साहब ने समझाते हुए कहा—"पीछे नहीं पड़ गया हूँ, बल्कि समझा रहा हूँ। इन बातों पर आदमी हंस जाता है। अब फ़र्ज कर लीजिये कि मियाँ फरहत के यहाँ इनकी दावत होती और यह वहाँ भी यही हरकतें करते। मिस पाल क्या कहतीं पहने दिल में, कि ये ख़ान बहादुर साहब जो वड़े बने फिरते हैं आखिर हैं क्या चीज़? जिनके भतीजे चाय के चमचे से पोर्ज खाते हैं और हरे सूट पर सुर्ख टाई बाँधकर चमचे से गुरदा खाते हैं।"

शिब्बू मियाँ ने वड़ी बेतुकी बात कही—"नहीं, ख़ैर आदमी अपने घर में बेतक़ल्लुफ़ भी तो होता है।"

ख़ान बहादुर साहब ने फ़रमाया—"तो फिर आप कुर्सी पर क्यों बैठे हैं? उचककर मेज़ पर बैठ जाइये। साहबज़ादे अगर आपकी बेतक़ल्लुफी में सलीक़ा नहीं है तो आप अपने को मोहज़्ज़ब नहीं समझ सकते। अलबत्ता तहज़ीब के ऐक्टर की हैसियत आपको ज़रूर हासिल हो जायेगी, जो सिर्फ़ स्टेज पर तहज़ीब का पार्ट कर सकता है वरना उसे तहज़ीब से कोई सरोकार नहीं। यह आपने क्या बात कही कि अपने घर में आदमी बेतक़ल्लुफ होता है। बदसलीक़गी का नामबेतक़ल्लुफी न रखिये।

इस वक़्त शिब्बू मियाँ की हालत देखने लायक थी। ख़ान बहादुर साहब तो वाक़ई झाड़ का काँटा बनकर चिपट गये थे। और ये हज़रत हमारी मौजूदगी में अपनी प्रतिष्ठा बनाये रखने की कोशिश में असफल थे, ख़ान बहादुर की यह ज़्यादती ज़रूर थी; मगर वे अपनी आदत से मजबूर थे। इनके लिए शिब्बू मियाँ की ये हरक़तें नाक़ाबिले बर्दाश्त थीं। जो शख़्श अपने बहरों और खान-सामाओं का दिनभर नाक में दम रखता हो कि बिना शेव के सामने क्यों आये और वर्दी पहने बिना खाने के कमरे में क्यों नज़र आये, जूते पर पालिश क्यों नहीं है और पगड़ी के पेच क्यों ढीले हैं। वह अपने सगे भतीजे की यह बात क्योंकर सहन कर सकते थे। आखिर मुश्किल से हमने उनका ध्यान अपनी ओर किया—"चचा मियां, इरादा यह है कि मरी जाकर बर्फ गिरती देखी जाये।"

ख़ान बहादुर साहब ने प्रसन्न होकर कहा—"मज़ा तो ख़ूब आयेगा। मुझे तो गर्मियों से ज़्यादा इस मौसम में पहाड़ पसन्द हैं।"

बेगम साहिबा ने कहा—"खैर आप तो अपनी पसन्द रहने दीजिये, पिछले साल इसी मौसम में ले जाकर वहाँ डाल दिया। मैं तो सर्दी में अकड़कर रह गई।"

ख़ान बहादुर साहब ने बड़े चौंचले से फरमाया…"मगर गाल सुर्ख़ हो गये थे हज़रत के, बड़ी सेहत बनती है इस बर्फ से।"

हमने कहा—"अभी क़तई प्रोग्राम नहीं बना है; मगर कुछ इरादा हो रहा है।"

ख़ान बहादुर साहब ने खाने की मेज़ से उठते हुए कहा—"बड़ा अच्छा इरादा है। काश ! मैं भी जा सकता। बहरहाल बना डालो प्रोग्राम।"

और हम सब उनके साथ ही खाने के कमरे से बाहर निकल आये। शिब्बू मियाँ को ख़ान बहादुर साहब अपने साथ ले गये।

: १० :

हम और रअना लान में कुर्सियाँ डाले धूप सेंक रहे थे । जिक्र था शिब्बू मियाँ का कि बेगम साहिबा भी उधर आ निकलीं । हम दोनों ने खड़े होकर उनके लिए कुर्सी छोड़ दी, तो वे दूर ही से बोलीं—"नहीं, नहीं, मैं बैठूंगी नहीं, जा रही हूँ । मैं तो यह कहने आई थी रअना से कि तुम्हारे डैडी को आखिर कौन समझाये ? हाथ धोकर उस बेचारे के पीछे पड़ गये हैं । भला, इन बातों से जानवर भी कहीं आदमी बना करते हैं ? वह एक ही बेवकूफ़ लड़का है ।" और हमसे कहा—"फ़रहत मियां, तुम ज़रा इन साहबज़ादे से बेतकल्लुफ़ न होना, इन हज़रत का कोई ठीक ठोर नहीं है न बात करने का सलीक़ा न अदब न तमीज़ ।"

हमने कहा—"ख़ैर, मेरी तरफ़ से आप इतमीनान रखिए ।"

बेगम साहिबा ने बड़े स्नेह से कहा—"बेटा, तुम्हारी तरफ़ से तो इतमीनान है ही, मगर इस जानवर से डर ही लगता है कि न जाने क्या कर बैठे । उसकी किसी बात का बुरा भी न मानना । अल्लाह के फ़ज़ल से दिमाग़ भी चकोर पाया है ।"

हमने हँसते हुए कहा—"आप बहरहाल इस तरफ से बिल्कुल निश्चित रहिये । इस क़िस्म के लोगों की बातों का बुरा मानना मेरे नज़दीक मूर्खता है ।"

बेगम साहिबा ने चिन्तित स्वर में कहा—"नहीं मियाँ फ़रहत, तुम नहीं जानते इन हज़रत को । ये सूरत से जो कुछ नज़र आ रहे हैं वह तो ख़ैर हैं ही; मगर बड़े गहरे भी हैं । खुदा ही बचाये इनकी चालों से बड़े काँट-छाँट के लोगों में हैं । कभी-कभी बड़ी दूर की चाल भी चल जाते हैं । रअना तुम ज़रा इनको समझा देना अच्छी तरह । बस मेरा मतलब यह है कि बहुत मुँह लगाने की ज़रूरत नहीं ।"

बेगम साहिबा के जाने के बाद हमने रुख़्साना से कहा—"आपके इन गाहक के तो अजीब-अजीब पहलू मालूम हो रहे हैं।"

रुख़्साना ने कहा—"मैं ऐतराज़ करती हूँ इस लफ़्ज गाहक पर।"

हमने कहा—"यह ऐतराज़ तो ख़ैर गलत है। हमारी नानी कहा करती थीं कि बेटा जिस घर में बेटी होगी उसमें ढेले आयेंगे ज़रूर।"

रुख़्साना ने कहा—"मगर इन हज़रत को इनके माँ-बाप के समेत पहले ही ढेले पर समझाया जा चुका है कि:—

बुर्द ईं दाम बर मुर्ग दिगर न,
कि उनका रा बुलंदस्त आशियाने।

(इस मुर्ग पर अपना जाल फिर मत फेंकना क्योंकि इस पक्षी का घोंसला बहुत ऊँचाई पर है)

हमने कहा—"जनाब उन साहब का मैं इस खुशमिज़ाजी का सिर्फ़ इसलिए क़ायल हूँ कि वह आपका आरमज़ून्द है।"

रुख़्साना ने कहा—"आप चाहते हैं कि मैं फिर वही मिसरा कहूँ—

इस आरज़ू को देखिये, और उनको देखिये।"

हमने कहा—"इस आरज़ू को देखने के बाद उनको तो ख़ैर कोई न देखेगा सब आप ही को देखेंगे और कह देंगे कि हाँ यह आरज़ू अपनी जगह पर दुरुस्त है।"

रुख़्साना ने अपने ख़ास अन्दाज़ से कहा—"अच्छा गोया शायरी फ़रमा रहे हैं आप?"

हमने एकदम विषय बदलते हुए कहा—"मगर उन हज़रत से चची जान भी नाराज़ हैं।"

रुख़्साना ने गम्भीरता से कहा—"आप नहीं समझते वे सिर्फ़ इसलिए नाराज़ हैं कि आप इन हज़रत से अच्छी तरह वाक़िफ नहीं हैं। अभी तो उनके पर-पुरज़े धीरे-धीरे आपकी समझ में आयेंगे। अभी उन्हें मेरे और आपके यों मिलने पर ऐतराज़ होगा। अभी ये इस बात की नुक़्ताचीनी करेंगे कि रुख़्साना तनहाई में फ़रहत साहब के पास क्यों उठती-बैठती है। अभी ये इस बात पर ख़ार खायेंगे कि उनसे ज़्यादा मैं आपकी ओर ध्यान देती हूँ। फिर

उसके तरह-तरह के अर्थ लगायेंगे और तरह-तरह के अन्दाजों के इज़हार फ़रमायेंगे। फिर डैडी उन्हें किसी दिन निहायत मुफस्सल झाड़ पिलायेंगे। जिसके नतीजे के तौर पर वह बेवा औरत की तरह रोयेंगे। फिर किसी दिन मम्मी से इसी किस्म की किसी बात पर गालियाँ सुनेंगे। अभी तो बेशुमार तमाशे होंगे ज़रा देखते रहिये।"

हमने कहा—"साहब इसका आसान तरीक़ा यह है कि मैं अपनी आमद-रफ़त ज़रा कम कर दूँ।"

रअना ने कहा—"क्या खूब! क्योंकि कुत्ते भोंकते हैं, इसलिये क़ाफ़िले गुजरना छोड़ दें। मैं तो बल्कि यह चाहती हूँ कि यह आमदरफ्त कुछ ज़्यादा हो जाये ताकि यह शख्स मुझे कम से कम बोर कर सके।"

हमने कहा—"साहब मुझे यहीं पर मतभेद है आप से। मैं तो ज़िन्दगी-भर इस तरह के लोगों से बोर नहीं हो सकता। मेरे नज़दीक इस क़िस्म के इंसान से बोर होना गुनाह है। यह तो दिल बहलाने की चीज़ है, जो खुदा की तरफ़ से खुशक़िस्मतों ही को मिलती है।"

रअना ने जलकर कहा—"ख़ुदा बचाये इस तफ़रीह से। कलेजा छलनी कर देता है यह आदमी अपनी बेहूदगियों से।

हमने कहा—"क्या होती हैं वे बेहूदगियाँकुछ बताइये तो सही।"

रअना ने सम्भलकर बैठते हुए कहा—"आपको नहीं मालूम कि यह आदमी सिर्फ चुग़द ही नहीं बल्कि बहुत घटिया है। अगर दो घड़ी भी मेरे पास बैठ जाये तो इश्क़ बघारने की हद कर दे। निहायत घटिया क़िस्म के बाज़ारी शेर पढ़ता है। डांटने पर हँसता है। गम्भीर हो जाये तो और भी मूर्ख दिखाई देता है। अभी आपके आने से पहले तशरीफ़ लाते ही जब मुझसे मिलने आये, तो फरमाते हैं—"अरे, तौबा है अब तो तुम कुछ की कुछ हो गई हो। सेहत भी मेरी आँखों में वड़ी अच्छी नज़र आती है।"

हमने कहा—"इसमें तो कोई खास बात सिवाय 'अरे तोबा है!' के समझ में आई नहीं।"

रअना ने कहा—"सुनिये तो सही, सेहत की तारीफ़ करते-करते कहने लगा—

"उफ़ तेरी काफ़िर जवानी जोश पर आई हुई ।"

हमने चौंककर कहा—"ऐं ! क्या वाक़ई पढ़ दिया यह मिसरा मेरे शेर ने ?"

रअना ने कहा—'आप इस मिसरे को कह रहे हैं, उन्हें तो ऐसे-ऐसे मिसरे और शेर याद हैं कि उबकाइयाँ आने लगें सुनकर ।"

हमने कहा—"साहब, मैं इस आदमी की बदमज़ाक़ी से ज़्यादा उसकी जुर्रत का कायल हो गया । बात चाहे बाज़ारी ही कहता है, मगर यह क्या कम है कि जो कुछ कहना चाहता है कह तो देता है ।"

रअना ने चिढ़कर कहा—"आपको सूझ रहा है मज़ाक़, मगर मेरी रूह कांपती है इस आदमी से । जब तक बैठा रहेगा कभी बालों की तारीफ़ करके दस-पाँच बाज़ारू शेर पढ़ देगा । कभी आँखों के मुताल्लिक़ फिल्मी गानों के वह बोल सुना देगा, जिनपर चवन्नीवाले खुश होकर तालियाँ बजाते हैं और फिर ताँगा चलाते हुए वही बोल सड़कों पर गाते फिरते हैं । हद यह है कि पिछली बार मैं इस आदमी से तंग आकर एक दिन योंही भागी, तो उसने सचमुच गाना शुरू कर दिया कि—

'तू पंजाब दी कुड़ी, तेराँ मोराँ वर्गी चाल"

हमने बच्चों की तरह खिलखिलाकर हँसते हुए कहा—"साहब मान गये । यानी वाक़ई ।"

रअना ने घबराकर कहा—"लीजिये इधर ही तशरीफ ला रहे हैं । जल तू ज़लाल तू, साहबे कमाल तू, आई बला को टाल तू ।"

हमने सम्भल कर बैठते हुए इन हज़रत को क़रीब देखकर कहा—"तशरीफ़ लाइये जनाब ।"

शिब्बू मियाँ ने एक कुर्सी घसीटकर बैठते हुए कहा—"अच्छा मैं तो समझा था कि शायद आप जा चुके होंगे, तो गोया यह है आपका सामनेवाला मकान ।"

रअना ने रुखाई से कहा—"गोया नहीं सचमुच यही है ।"

शिब्बू मियाँ ने वाक़ई शेर पढ़ दिया—"यह तो वही बात हुई कि—

"जिस मोहल्ले में था तुम्हारा घर,
वहीं रहता था एक सौदागर ।"

हम बड़े ज़ोरदार क़हक़हे को निगलकर सिर्फ़ मुस्करा सके। मगर रश्नना ने बड़ी गम्भीरता से कहा—"खुदा के लिए शिब्बू भाई, एक बात बता दीजिये कि यह जो आपने बेशुमार शेर याद कर रखे हैं, उन्हें भुलाना चाहें तो आपको कितनी मुद्दत दरकार होगी लगभग ?"

शिब्बू मियाँ ने बेसमझे कहा—"मैंने याद नहीं किये, बल्कि हाल यह है फ़रहत साहब मेरा कि एक बार कोई शेर सुन लूँ तो बस समझिये कि ज़िंदगी-भर के लिए याद हो गया।"

अर्ज़ किया—"यह तो ज़ेहन की खूबी हुई।"

बड़े गर्व से बोले—"जी और क्या। मैं आपसे अर्ज़ करूँ कि मसनवी ज़ेहरे इश्क़ मिर्ज़ा शौक़ का काव्य एक बार पढ़ा था कभी बचपन में। उसका एक-एक शेर सुन लीजिए। और एक मसनवी ज़ेहरे इश्क़ का क्या ज़िक्र जो कुछ कभी पढ़ लिया या सुन लिया बस ज़ेहन में रह गया।"

हमने बड़ी गम्भीरता से कहा—"खैर क़ाबलियत तो चेहरे से भी बरसती है। मगर मेरा ख्याल यह है कि आप खुद भी शेर कहते हैं।"

वे और भी गम्भीर बन गये—"अब तो खैर मुद्दत से नहीं कहे, अलबत्ता कालिज के मुशायरों के लिए ज़रूर कहता था, मगर यह आप समझे कैसे ?"

रश्नना ने कहा—"अरे साहब यह बहुत दूर की कौड़ी लाते हैं।"

शिब्बू मियाँ ने फिर शेर पढ़ दिया—"खूब गोया—

खत का मज़मून भाँप लेते हैं लिफाफ़ा देखकर,
आदमी पहचान लेते हैं क़याफ़ा देखकर।"

हम तो शिष्टता से सिर्फ़ हल्की हँसी हँस दिये, मगर रश्नना ने कहा—"नहीं साहब यह तो खत का मज़मून देखकर लिफ़ाफ़ा तक भाँप लेनेवालों में से हैं।"

शिब्बू मियां ने फिर वही सवाल किया—"मगर वाक़ई यह आपको कैसे मालूम हो गया कि मैं शेर भी कहता हूँ।"

अर्ज़ किया—"यह बात तो हर आदमी आपको देखकर समझ सकता है। वह जो शायरों के चेहरे पर एक खास क़िस्म की गोया मेरा मतलब यह है कि—

रञ्जना ने बात काटकर कहा—"बेकसी-सी होती है।"

हमने कहा—"वह तो खैर है ही। मगर इसके अलावा शायरों का एक खास क़िस्म का मसद्दसनुमा चेहरा होता है—"

रञ्जना ने कहा—"जैसे आपको याद होगा शिब्बू भाई, ख्वाजा अल्ताफ हुसैन हाली का था—"

शिब्बू मियाँ अब भी इन सब बातों को गम्भीर ही समझते रहे। बड़े गर्व से बोले—"मुझे शायरी की आदत तो खैर नहीं है—"

अर्ज़ किया—"आदत तो खैर होनी भी न चाहिए वरना बड़ी तकलीफ़ होती है।"

शिब्बू मियाँ बराबर गम्भीर बने रहे और बोले—"हाँ, शुग़ल के तौर पर कभी-कभी कह ज़रूर लेता हूँ। अभी पिछले दिनों एक मुशायरा हुआ था। तरह यह थी—

"सरे मकतल तेरी तलवार के सदके जाऊँ।"

अर्ज़ किया—"मुश्किल है साहब यह तेरी तलवार के सदके जाऊँ और अग़यार के सदके जाऊँ।

रञ्जना ने कहा—"कुछ भी मुश्किल नहीं। मैं तो खैर शायर भी नहीं हूँ। मगर कहिये तो पचासों शेर कह दूँ बैठे-बैठे अभी। मसलन मुलाहज़ा हो—

"जिसमें इस शोख की शादी की ख़बर निकली है,
जी में आता है कि उस अख़बार के सदक़े जाऊँ।"

शिब्बू मियाँ ने उछलकर कहा—"खूब, बहुत खूब। भई माशा अल्लाह यह तो गोया मज़ाकिया शेर हुआ।"

अर्ज़ किया—"साहब इस लफ़्ज़ 'गोया' की भी दाद नहीं दी जा सकती। आपने भी तो एक शेर ही कह दिया।"

शिब्बू मियाँ ने कहा—"तो इस तरह मैं ग़ज़ल कहीं और वह बहुत मक़बूल हुई। खुदा के फ़ज़ल से मतला हुआ था फ़रहत साहब—"

शिब्बू मियाँ अभी गुन-गुना ही रहे थे कि रञ्जना ने उनकी इच्छा पूरी न होने दी। बोली—"शिब्बू भाई, तखल्लुस क्या है आपका ?"

शिब्बू मियाँ से गुनगुनाना मुलतबी करते हुए कहा—"शुरू-शुरू में तो

'शहाब' ही तखल्लुस करता था; मगर अब कुछ दिनों से मकते कहना छोड़ दिए हैं। मुझे नाम ही को तखल्लुस के तौर पर इस्तेमाल करना कुछ अच्छा नहीं मालूम होता। कोई मुनासिब सा तखल्लुस तजवीज़ कीजिये फ़रहत साहब।"

रअना ने कहा—"'फ़िदवी' कैसा रहेगा?"

शिब्बू मियाँ ने ग़ौर करते हुए कहा—"फ़िदवी? यानी अर्ज़ीवाला फ़िदवी?"

रअना ने कहा—"जी हाँ। देखिये न शायरी की सही तारीफ़ यह है कि अर्ज़े शौक़ करते हैं। शायरी की अगर यह तारीफ़ सही है तो फ़िदवी निहायत उम्दा तखल्लुस है।"

अभी शिब्बू मियाँ के तखल्लुस पर ग़ौर हो ही रहा था कि खान बहादुर साहब ने उन्हें आवाज़ दी और उनके जाने के बाद हम भी रअना से इजाज़त लेकर घर चले आये।

: ११ :

आज वालिद साहब किबला ने शिब्बू मियाँ के स्वागत में हमारे यहाँ रात के खाने की दावत दी थी। खान बहादुर साहब ने बहुत टालना चाहा''' सैकड़ों बहाने किए और इस तरह यह दावत दो-तीन दिन टलती रही। मगर आज के लिए खान बहादुर साहब को मानना ही पड़ा। मिस पाल सुबह से दावत के इन्तज़ाम में लगी हुई थीं। और वाक़ई आज तो मिस पाल ने खाने की मेज इस ढंग से सजाई कि खुद हम देर तक खड़े देखते रहे। मगर जब खुद मिस पाल को देखा, तो वह इस मेज़ से भी अधिक सजी हुई नजर आई। मालूम यह हुआ कि वालिद साहब ने आज उन्हें भी सबके साथ भोजन में शामिल होने को कहा है। मिस पाल को आवश्यक आदेश देकर हम जाने लगे तो मिस पाल ने कहा—"साहबज़ादे साहब, आपकी कुर्सी यह है और सामनेवाली रश्ना बीबी की है।"

और अब जो हमने ध्यान से देखा तो हमारी कुर्सी के सामने मेज पर फूलों और पत्तियों से दिल बनाया गया था और रश्ना की कुर्सी के सामने से एक तीर कमान से निकलकर आ रहा था, हमने घबराकर मिस पाल से कहा—"यह क्या खुराफात है। आप मज़ाक उड़वायेंगी मेरा। यह बिलकुल ग़लत है।"

मिस पाल ने कहा—"ग़लत कैसे है साहबज़ादे साहब, यह देखिये, मिर्ज़ा साहब की कुर्सी के सामने मैंने चमगादड़ को पेड़ से उल्टा लटका दिया है।"

हमने कहा—"अजीब-अजीब हरकतें की हैं आपने। नतीजा यह होगा कि मैं कुर्सियाँ हटवा दूँगा और बैठने के लिए चादरें बिछवा दूँगा।"

मिस पाल ने घबराकर कहा—"ऐसा ग़जब न कीजियेगा, सारी तरतीब बदलनी पड़ेगी।"

हमने गम्भीरता से कहा—"तरतीब बदले या रहे, मगर ये बातें ग़लत हैं।"

मिस पाल ने कहा—"अच्छा जाने दीजिये, आपका जहाँ जी चाहे बैठ जाइएगा। मैं तो चाहती थी कि सजावट का कुछ मतलब भी निकल आये, मगर आप मुनासिब नहीं समझते तो जैसी आपकी मर्ज़ी।"

और ठीक इसी समय वालिद साहब ने आकर कहा—"बेटे ज़रा अलग आकर मेरी बात सुनो।"

हम वालिद साहब के साथ गोल कमरे में आ गये तो उन्होंने बड़ी चिंता से कानाफूँसी करते हुए कहा—"आज फिर उसके दिमाग़ में कीड़ा रेंगा है। उसे जाकर समझा दो, वरना में शुरू कर दूँगा जूताकारी।"

हमने कहा—"आखिर बात क्या हुई ?"

वालिद साहब ने कहा—"खुदा भला करे इस मिस पाल मालजादी का, जिसने उसे यह समझा दिया है कि चूँकि ख़ान बहादुर साहब की बेगम और रग्रना आ रही हैं इसलिए आपको भी सबके साथ खाना खाना चाहिए।"

हमने कहा—"तो खाने दीजिए, आप तो खुद देख रहे हैं कि अब वे किस हद तक बदल चुकी हैं। निहायत तहज़ीब से खाती-पीती और रहती-सहती हैं।"

वालिद साहब ने कहा—"साहबज़ादे हैं आप। वे लाख सुधर जायें मगर कोई न कोई नाइनपना ज़रूर कर गुज़रेंगी, और भाँड़ा फूटकर रहेगा। साहब, मुझे उसका ज़रा भी एताबर नहीं कि क्या कर गुज़रे ? क्या कह जाए ? दूसरे जब पागल मशहूर किया जा चुका है तो···?"

हमने बात काटकर कहा—"हाँ यह है सौ बातों की एक बात। बहरहाल मैं उन्हें समझाने की कोशिश करूंगा।"

वालिद साहब ने कहा—"कोशिश नहीं, बल्कि उसे बता दो कि अगर वह ज़रा भी ज़िद करेगी तो जूते से सिर मूँड़कर इसी वक़्त घर से निकाल बाहर करूँगा।"

अब वालिद साहब को क्या समझाते कि यह सिर मूँड़ने का मुहावरा कहीं पोल ही न खोल दे। लाख बन-सँवर गये हैं मगर असलियत ख़त्म तो नहीं हो जाती। आखिर क्रोध में कहा भी तो सिर मूँड़ने ही को कहा। ख़ैर हमको अन्दर जाकर बड़ी देर तक सिर खपाना पड़ा और बड़ी मुश्किल से इस बात

पर सहमत किया कि वह पर्दा न तोड़ें यानी असलियत पर पर्दा पड़ा रहे। हालाँकि यह भी सच है कि—

"अगर यही अपनी असलियत है तो इसको कब तक छिपा सकेंगे।

'जो चुप रहेगी ज़ुबाने कैंची तो धार चमकेगी उस्तरे की।'

वालिदा साहिबा को समझा-बुझाकर जिस समय हम बाहर आये हैं मिर्ज़ा साहब पधार चुके थे और वालिद साहब के वस्त्रों की प्रशंसा करने में लगे हुए थे। हमें देखते ही वालिद साहब से बोले—"हज़ूरवाला। अगर मेरी बात का यक़ीन नहीं है तो साहबज़ादे साहब से पूछ लीजिये, क्यों साहबज़ादे साहब, क्या मैं ग़लत कह रहा हूँ कि चूड़ीदार पायजामा पहनने का हक़ सिर्फ़ उन लोगों को है जिनकी एड़ी और पिंडली का एक ही माप हो।

हमने कहा—"यह तो बहुत पुरानी बात कह रहे हैं आप।"

मिर्ज़ा साहब ने कहा—"जी नहीं, मैं इसलिए कह रहा हूँ कि हमारे नवाब साहब पर मेरी आँखों में चूड़ीदार पायजामा फूट निकलता है। और साहब आपका दर्ज़ी सीता भी ऐसा है कि ऐ सुबहान अल्लाह।"

वालिद साहब ने उन्हें बकने दिया और हमें सम्बोधित करके फ़रमाया—"क्यों भई कुछ आराम हुआ?"

हमसे पहले मिर्ज़ा साहब ने घबराकर कहा—"इलाही ख़ैर क्या बेगम साहब के दुश्मनों की तबीयत कुछ नासाज़ है?"

वालिद साहब ने टालने के अन्दाज़ से कहा—"जी हाँ, मामूली-सा दौरा पड़ गया था।"

हमने कहा—'अब ठीक है बिल्कुल"

मिर्ज़ा साहब बोले "हज़ुरवाला, मैं फिर अर्ज़ करूँगा कि न यह पागलपन है न सौदा न जुनून, और न वहशत बल्कि यह किसीका साया है।"

वालिद साहब ने फरमाया—"ख़ुदा आपका साया हम सबके सिरों पर क़ायम रखे। किसी और साये की ज़रूरत ही नहीं है।"

मिर्ज़ा साहब कुछ फ़रमाने ही वाले थे कि ख़ान बहादुर साहब ने पर्दा उठाकर कमरे में दाख़िल होते हुए कहा—"अदाब बजा लाता हूँ, हज़ूरे वाला!"

और वालिद साहब ने उठकर स्वागत किया। ख़ान बहादुर साहब के पीछे

ही बेगम साहिबा और रअना थीं, और सबके पीछे शिब्बू मियाँ डिनर जैकेट में तशरीफ़ लाये थे। उस डिनर जेकेट का ज़िक्र तो हम रअना से पहले ही सुन चुके थे कि खान बहादुर साहब ने अपने चहेते भतीजे के लिए जो कपड़े जल्दी-जल्दी सिलवाये हैं उन्हे आदमी बनाने के लिये, उनमें एक डिनर जैकेट भी है। मगर अफ़सोस कि इस डिनर जैकेट ने भी जो अधिक से अधिक मनुष्यता उनमें पैदा की थी, वह यह थी कि किसी अंग्रेज़ी रैस्टोरेंट के बैंड मास्टर मालूम हो रहे थे। खैर वे कुछ भी सही, इस समय तो मुख्य अतिथि थे, इसलिये हमने उन्हें अपने पास बिठा लिया। रअना नियम के अनुसार वालिद साहब के सोफ़े पर पहुँच गई। और बेगम साहिबा मिस पाल के साथ बैठ गई।

खान बहादुर साहब ने हमसे कहा—"क्यों बेटा, देखा अपने दोस्त शिब्बू मियाँ का दबदबा···"

हमने कहा—"जी हाँ, मैं तो देखते ही रोब में आ चुका हूँ।"

खान बहादुर साहब ने शिब्बू मियाँ से कहा—"तुम आज़ादी से गरदन हिला सकते हो। खाहमखाह तख्ता बने क्यों बैठे हो?"

रअना ने कहा—"यह तो मैं भी देख रही थी शिब्बू भाई तो जैसे इस डिनर सूट में कस दिये गये हों। मेरे ख्याल में तो सख्त तकलीफ़ हो रही होगी इन्हें।"

शिब्बू मियाँ ने कहा—"नहीं तकलीफ़ किस बात की। मैं बिल्कुल ठीक हूँ।"

मिर्ज़ा साहब एक कोने से बोले—"हज़ूर खान बहादुर साहब, इन्हीं साहबज़ादे के बारे में फ़रमा रहे थे कि भतीजे हैं आपके?"

खान बहादुर साहब ने कहा—"आप तो इस तरह कह रहे हैं मिर्ज़ा साहब, जैसे मैंने इन साहबज़ादे के बारे में कोई अफ़वाह फैलाई हो।"

मिर्ज़ा साहब ने कहा—"माशा अल्लाह! बड़े नेक मालूम होते हैं।"

खान बाहादुर साहब ने कहा—"मेरी डिक्शनरी में नेक के माने हैं चुग़द। और मैं यह नहीं चाहता कि इन्हें नेक समझा जाये। मुझे नेकी से ज़्यादा इनकी चालाकी और समझ की ज़रूरत है।"

मिर्ज़ा साहब ने कहा—"ठीक फ़रमाया आपने। मैं भी बिल्कुल यही बात

कहनेवाला था ।"

वालिद साहब बोले—"अच्छा तो आगे से आप जो बात कहनेवाले हुआ करें, पहले से कह लिया कीजिये ।"

खान बहादुर साहब ने मुस्कराकर कहा—"क्यों भाई मिर्ज़ा साहब, आपने मिस पाल का हाथ भी देखा है कभी ?"

मिस पाल ने एक हल्की सी चीख के साथ कहा—"नहीं, नहीं, मुझे हाथ दिखाने का शौक़ नहीं है ।"

वालिद साहब ने कहा—"इसमें शौक़ की क्या बात है ? कई बार आदमी मजबूर हो जाता है हाथ दिखाने के लिए ।"

मिर्ज़ा साहब ने तड़पकर दाद दी—"ऐ सुबहान अल्लाह ! क्या बात कही है आपने मुहावरे के मायने ही बदल गये ।"

खान बहादुर साहब ने कहा—"हजरत हाथ अगर कोई दिखाये तो माने ही नहीं दुनियाँ भी बदल जाती है ।"

मिर्ज़ा साहब फिर तड़पे—"अहा ! यह दूसरी हुई ।"

वालिद साहब ने कहा—"इसे होना नहीं कहते चिपकना कहते हैं मिर्ज़ा साहब । बहरहाल आपको वाक़ई मिस पाल का हाथ देखना चाहिए ।"

मिस पाल ने घबराकर अपने दोनों हाथ बग़लों में छिपाते हुए कहा—"जाने भी दीजिये नवाब साहब, मैं उस दिन देख चुकी हूँ उनकी क़ाबलियत जब जमादारनी का हाथ देखकर बताया था कि शादी की लकीर हाथ में नहीं है मगर बच्चे हैं चार-पाँच ?"

खान बहादुर साहब ने कहा—"बिल्कुल ठीक बताया । अरे भई, हम तो शादी उसे कहते हैं न, जो इस्लामी ढंग पर काज़ी साहब निकाह का फ़तवा पढ़कर करते हैं । मालूम नहीं इस जमादारनी ने किस तरह शादी की होगी । मुझे उसकी शादी में शक हो सकता है ; मगर मिर्ज़ा साहब की क़ाबलियत में नहीं ।"

मिर्ज़ा साहब ने कहा—"मिस पाल शायद इसलिए हाथ नहीं दिखाना चाहातीं कि हाथ दिखाने से बहुत से भेद खुल जाते हैं ।"

मिस पाल ने चिढ़कर कहा—"मेरे कौनसे भेद हैं, जो आप खोलेंगे ?"

ख़ान बहादुर साहब ने कहा—"बस तो इसी बात पर दिखा दीजिये हाथ।"

मिस पाल ने कहा—"जी नहीं, मैं इनसे भी घबराती हूँ। ये बड़ी गड़बड़ क़िसम के आदमी हैं। न जाने किससे अंग्रेज़ी का एक लफ़्ज़ सीख आये और एक दिन मुझसे कहने लगे कि आप तो लिफ़्ट ही नहीं देतीं। मैंने इनसे कहा—"लिफ़्ट तो नहीं लिफ़्टी तो हाज़िर है।"

कमरे में एक क़हक़हा गूंज उठा और मिर्ज़ा साहब जो वास्तव में चिकने घड़े वाक़ा हुए थे, इस समय नियम के विपरीत लज्जित-से हो गए। वालिद साहब ने उन्हें सीधे सम्बोधित करते हुए कहा—"क्यों हज़रत ये बातें हैं। यानी आप चुपके-चुपके लिफ़्ट भी माँगते फिरते हैं। आप तो बड़े छुपे रुस्तम निकले।"

ख़ान बहादुर ने कहा—"कम-से-कम अपनी और मिस पाल की उम्र ही का अन्दाज़ा कर लिया होता।"

ख़ान बहादुर साहब ने कहा—"भाई साहब यह तो आपकी ज़्यादती है, मुहब्बत की कोई उम्र नहीं होती।"

वालिद साहब ने बेगम साहिबा की ओर पलटकर कहा—"सुन लीजिये भाभी साहिबा।"

बेगम सहिबा ने तुनककर कहा—"जी हाँ, दिल की बातें योंही ज़बान पर आ जाया करती हैं।"

अब मिर्ज़ा साहब भी बोले—"क्या बात फ़रमाई है बेगम साहिबा।"

वालिद साहब ने फ़रमाया…"आप भी यही कहनेवाले होंगे।"

इसी समय बैरे ने कमरे में दाख़िल होकर खाने के कमरे का पर्दा उठा दिया और सब गोल कमरे से उठकर खाने के कमरे में आ गये। अजीब संयोग है कि मिस पाल का बनाया हुआ दिल इस समय मिर्ज़ा साहब के सामने था और ख़ुद मिस पाल अपने खोदे हुए कुएं में इस प्रकार गिरीं कि उन्हें वही कुर्सी मिल सकी जिसके सामने तीर को उड़ते हुए दिखाया था और इससे भी ज़्यादा कमाल यह हुआ कि शिब्बू मियां के सामने वह चमगादड़ उस पेड़ से उल्टा लटका हुआ था। हमने धीरे से रअना को यह लतीफ़ा सुना दिया वह मुश्किल से अपनी हँसी रोक सकी। बाक़ी किसीने भी इस बात पर ध्यान न दिया और दिलचस्प बात-चीत में खाना जारी रहा।

: १२ :

मरी जाने का प्रोग्राम तो ख़ैर बन चुका था। मगर सवाल यह था कि गर्मियाँ होतीं तो सीज़न गुज़ारने के लिए वहाँ ठहरा भी जा सकता था, मगर बर्फ़ गिरती देखने के लिए तो एक दिन या अधिक-से-अधिक हफ़्ता-डेढ़-हफ़्ता ही रहा जा सकता था। इसलिए शिब्बू मियाँ से कतराने के लिए ये कोई स्थायी उपाय न था। हम लोग अभी इस बात पर विचार ही कर रहे थे कि शिब्बू मियाँ तक भी ख़बर जा पहुँची और उन महाशय ने वाक़ई वही हरक़तें शुरू कर दीं, जिनकी भविष्यवाणी रम्रना कर चुकी थी। सबसे पहले तो ख़ुद रम्रना से उन्होंने इस प्रोग्राम के बारे में पुष्टि चाही और जब पुष्टि हो गई, तो उन्होंने कड़ी आपत्ति की कि मैं इसे किसी तरह भी उचित नहीं समझता कि तुम एक अजनबी अर्थात् सिर्फ़ पड़ौसी के साथ अकेली यह सब करो। मगर रम्रना ऐसे अवसरों पर सदा शिब्बू मियाँ को याद दिला देती हैं कि उसका अपना स्थान क्या है, ताकि वह किसी ग़लतफ़हमी का शिकार न हो। अतएव इस अवसर पर भी रम्रना ने उनकी काफ़ी ख़बर ली, बल्कि यहाँ तक कह दिया कि आगे के लिए उसकी बातों में दख़ल देने की कोशिश न करें। रम्रना से यह खरी-खरी सुनकर उन हज़रत ने बेगम साहिबा की अदालत में अपील की और जब वहाँ भी मुँहकी खाई, तो ठीक उस समय जबकि ख़ान बहादुर साहब हमें और रम्रना को मरी जाने के सिलसिले में ज़रूरी मशविरे देकर रम्रना के कमरे से अपने कमरे में पहुँचे तो इस अक़्ल के दुश्मन ने ख़ुदा जाने क्या कहा कि एकदम ख़ान बहादुर के चीख़ने की आवाज़ रम्रना के कमरे में आई और हम और रम्रना दोनों दरवाज़े में कान लगा कर खड़े हो गये, जहाँ से ख़ान बहादुर साहब और शिब्बू मियाँ की बातचीत साफ़ सुनाई दे रही थी। ख़ान बहादुर साहब ऊँची आवाज़ में कह रहे थे—"यह बेहूदा ख़याल तुम्हारे ज़ेहन में आया ही कैसे? और अगर तुम्हारे ज़ेहन में सिर्फ़ बेहूदा ख़याल

ही आ सकते हैं तो तुमने यह जुर्रत कैसे की कि मेरे सामने भी उसे कह दिया ?"

शिब्बू मियाँ ने भिनभिनाते हुए कहा—"मैंने तो इसलिए अर्ज़ किया है कि जमाना बहुत बुरा है।"

खान बहादुर साहब ने फिर डाँटा—"जमाना बुरा है बुरे लोगों के लिए। तुमने रअना या फ़रहत को आखिर क्या समझ रखा है ? मुझे मालूम नहीं था कि तुम बेवक़ूफ़ होने के अलावा इस क़दर गन्दे ख़यालात भी रखते हो।"

शिब्बू मियाँ ठहरे चिकने घड़े, भला वह चुपके हो सकते थे। कहने लगे —"रअना या फ़रहत साहब चाहे कितने ही नेक और शरीफ़ क्यों न हों, मगर दुनिया की ज़बान कौन रोक सकता है।"

खान बहादुर साहब को और भी क्रोध आ गया—"साहब जहन्नुम में जाय दुनिया, मैंने दुनिया की परवाह कभी नहीं की। मुझे रअना और रअना से ज्यादा फ़रहत पर भरोसा है। बस मेरे लिए इतना ही काफ़ी है।"

शिब्बू मियाँ ने निराशा के स्वर में कहा—"जैसी आपकी मर्जी, मगर मैं तो सिर्फ़ यह चाहता था कि अगर मैं भी साथ चला जाता तो······?"

खान बदादुर साहब ने कहा—"यह बिलकुल दूसरी बात है। अगर तुम जाना ही चाहते हो तो मुझे इसमें कोई ऐतराज नहीं है, मगर सिर्फ़ इतनी सी बात के लिए तुम्हें ऐसे बेहूदा खयालात में उलझने की जरूरत नहीं थी।"

शिब्बू मियाँ की शायद शामत ही आई हुई थी। कहने लगे—"मैं तो सिर्फ़ यह चाहता था—

लाज़िम है दिल के साथ रहे पासबाने अक़्ल।"

खान बहादुर साहब आगबबूला हो गये—"फिर तुमने मेरे सामने फ़िज़ूल मिसरा पढ़ा। न यहाँ कोई दिल है और अगर फ़र्ज़ कर लो दिल हो भी तो यह आपसे किस अहमक़ ने कह दिया है कि आप अक्ल के रखवाले हो सकते हैं ? तुम्हारे ख़याल में शायद अक्ल का रखवाला उस मूर्ख को कहते हैं जो अक़्ल के पीछे लाठी लिए घूमता रहे। बेवक़ूफ़ कहीं के, एक बार कान खोल-कर सुन लो कि फ़रहत इतना सुलझा हुआ लड़का है कि तुम और तुम्हारे जैसे धामड़ उसे समझ ही नहीं सकते।"

अब शिब्बू मियाँ निरुत्तर हो गये और इस बात का उत्तर देने के बजाए कहने लगे—"तो फिर क्या राय है आपकी, मैं भी साथ चला जाऊँ ?"

ख़ान बहादुर साहब ने चिढ़कर कहा—"यह फ़ैसला मैं नहीं कर सकता। इसका ताल्लुक़ रश्रना और फ़रहत से है। अगर वे यह गवारा कर सकें कि उनकी सैर-तफ़रीह में एक अहमक़ भी उनके साथ हो तो मुझे इसमें कोई ऐतराज न होगा। लेकिन अगर वे आपको न ले जाना चाहें तो मैं उन्हें ठीक समझूँगा। आप इसका फ़ैसला उन्हींसे कर लें।"

शिब्बू मियाँ 'बेहतर है' कहकर वहाँ से रवाना हुए और चूँकि ख़याल था कि अब यह आफ़त इधर आयेगी इसलिए हम दोनों सम्भलकर बैठ गये। हमारा यह ख़याल ठीक ही निकला। इसलिए कि इसी वक्त शिब्बू मियाँ ने रश्रना के कमरे की चिक उठाकर कहा—"मैं आ सकता हूँ न ?"

रश्रना ने तुरन्त उत्तर दिया—"जब आप आ ही गये हैं, तो ख़ाहमख़ाह इजाज़त तलब कर रहे हैं। तशरीफ़ लाइये।"

शिब्बू मियाँ ने एक कुर्सी पर बैठते हुए कहा—"तो गोया सुबह रवानगी है आप दोनों की ?"

रश्रना ने उपेक्षा भाव से कहा—"जी हाँ, इरादा तो यही है।"

शिब्बू मियाँ ने फ़रमाया—"लुत्फ़ तो काफ़ी रहेगा, क्या ख़याल है, चलूँ मैं भी ?"

हमने रश्रना को बोलने का मौक़ा न दिया—"फिर तो क्या कहना है; मगर आप भला क्यों जाने लगे······?"

हमने देखा कि रश्रना का चेहरा क्रोध के मारे लाल हो गया है। उसने दाँत पीसकर हमें मना किया; मगर हमने आँखों-ही-आँखों में उसे चुप रहने का मशविरा दिया। शिब्बू मियाँ इस समय मुस्करा रहे थे और चूँकि मुस्कराने के सभ्य ढंग से वह अपरिचित हैं, इसलिए मुस्कराते हुए वह अत्यन्त मूर्ख जान पड़ते हैं। पूरा मुँह खोलकर और अधिक-से-अधिक दाँत निकालकर वह एक ख़ामोश क़हक़हा दरअसल बुलन्द करते हैं और इसे मुस्कराना समझते हैं। ख़ैर, इसी ढँग में बड़े साहस के साथ बोले—"चचा जान की यही ख़्वाहिश है कि मैं भी आप दोनों के साथ चला जाऊँ।"

रुख़्सना से अब न रहा गया, बिलबिलाकर बोली—"किसकी ख़्वाहिश है, डैडी की ? उनकी ख़्वाहिश क्यों है ? यह उनकी इस ख़्वाहिश का मतलब क्या है आख़िर ? वह यह क्यों चाहते हैं कि आप भी अकारण हमारे साथ जायें, यह बात तो उनसे मैं अभी पूछती हूँ ।"

यह कहकर इधर रुख़्सना और उधर शिब्बू मियाँ भी घबराहट के साथ उठ खड़े हुए, उसका मार्ग रोककर बोले—"भई बात तो सुनो, पहले पूरी बात तो सुन लो, बाद मैं ग़ुस्सा करना । बैठ जाओ ज़रा । मेरा मतलब तुम कुछ ग़लत समझ रही हो । मैं तो यह कह रहा था—पहले बैठ तो जाओ, फिर बताऊँ सारी बात ।"

रुख़्सना ने बैठते हुए कहा—"फ़रमाइये, क्या कहना चाहते हैं आप ?"

शिब्बू मियाँ ने अपनी घबराहट पर क़ाबू पाते हुए कहा—"साहब, बात यह हुई कि चचा जान ने मुझसे पूछा कि तुम भी जाना चाहती हो मरी ? मैंने इस पर उन्हें जवाब दिया कि अगर रुख़्सना बीबी और फ़रहत साहब एतराज़ न करें तो क्या हर्ज़ है ।"

रुख़्सना ने फिर उठते हुए कहा—"अच्छा तो यही बात में डैडी से पूछती हूँ कि यह उन्होंने क्यों पूछा था ? क्या भलाई सोची थी उन्होंने इसमें ?"

और शिब्बू मियाँ फिर सटपटाए—"फिर वही जल्दबाज़ी, भई ज़रा बैठ कर पूरी बात तो सुन लो, आख़िर इतना नाराज क्यों होती हो ?"

रुख़्सना ने वाक़ई नाराज़ होकर कहा—"मैं यह बात वाक़ई साफ़ करके रहूँगी कि आपकी इस कहानी में कितना हिस्सा आपका है और कितना डैडी का ।"

हमने रुख़्सना को समझाया—"पहले शिब्बू साहब की पूरी बात सुन लो, इतमीनान से बैठकर ।"

शिब्बू मियाँ को जैसे सहारा मिल गया—"जी हाँ, यही मैं भी अर्ज़ कर रहा था । इस क़िस्से को आख़िर इतना तूल देने की क्या ज़रूरत है ? अगर आप दोनों मुनासिब नहीं समझते कि मैं साथ जाऊँ तो बस ठीक है, मैं नहीं जाता ।"

हमने कहा—"नहीं साहब, इसमें नामुनासिब समझने की कौनसी बात

है । आपकी वजह से ज़रा दिलचस्पी ही रहेगी ।"

रुख़ना ने एकदम फ़ैसला सुना दिया—"मैं नहीं जाती मरी, आप ही तशरीफ़ ले जायें ।"

हमने समझाने की कोशिश की—"ख़ाहमख़ाह की ज़िद्द···।"

रुख़ना ने इस बार हमारी बात भी सुनना न चाहा—"बस, यह मेरा आख़िरी फ़ैसला है, मैं हरगिज़ न जाऊँगी ।"

शुक्र है कि ठीक उसी समय बेगम साहिबा चिलमन और दरवाज़े में फँसती हुई कमरे में दाख़िल हुईं । वे रुख़ना का यह वाक्य सुन चुकी थीं कि 'मैं हरगिज़ न जाऊँगी,' अतएव कमरे में आते ही अपने को एक सोफ़े पर गिराते हुए बोलीं—"कहाँ नहीं जाओगी ?"

रुख़ना ने उनके सामने ही कह दिया—"मम्मी, मैंने मरी का प्रोग्राम मन-सूख़ कर दिया है, मैं नहीं जाती अब ।"

बेगम साहिबा ने आश्चर्य से हमको देखते हुए इस प्रकार कहा जैसे रुख़ना ने जिस भाषा में बात की है, वह उससे परिचित नहीं हैं :—"यह क्या कह रही हैं फ़रहत मियाँ ?"

हमने कहा—"यह यों ही कह रही हैं, मैं इन्हें समझा दूँगा ।"

बेगम साहिबा ने कहा—"मगर बात क्या हुई आख़िर ?" और फिर शिब्बू मियाँ को अर्थपूर्ण दृष्टि से देखकर बोलीं—"कुछ शिब्बू मियाँ ने तो नहीं कहा है ?"

शिब्बू मियाँ तो चोर बने बैठे ही थे, वह क्या बोलते ? मगर रुख़ना ने कहा—"डैडी चाहते हैं कि शिब्बू भाई भी हमारे साथ जायें, डैडी का भला इसमें क्या फ़ायदा है ?"

बेगम साहिबा ने आँखें फाड़कर कहा—"तुम्हारे डैडी ने कहा है । मुझे यक़ीन नहीं, यह तुम्हें कैसे मालूम हुआ ?"

शिब्बू मियाँ ने जल्दी से सफ़ाई पेश की—"जी, बात यों हुई कि चचा जान ने मुझसे कहा था कि अगर तुम जाना चाहते हो तो मुझे कोई एतराज़ नहीं; तुम चले जाओ ।"

रुख़ना ने कहा—"जी नहीं, आप तो यह फ़रमा रहे थे कि चचा जान की

यह ख्वाहिश है कि मैं आप दोनों के साथ जाऊँ।"

शिब्बू मियाँ ने घबराकर कहा—"मगर मेरा मतलब तो यही था कि गोया—यानी.........।"

बेगम साहिबा ने बात काटकर कहा—"खैर, न गोया न यानी; मगर तुम्हारा सवाल कैसे पैदा हो गया। तुम्हारी और रअना की एक मिनट तो बनती नहीं। फिर ये कि जो बातें इस सिलसिले में मुझ से कह चुके हो, उसके बाद तो मैं तुमको हरगिज़ साथ न जाने दूँगी।"

शिब्बू मियाँ उस समय ज़रूरत से अधिक भावुक बन गये और 'जैसी आपकी मर्ज़ी' बड़बड़ाते हुए कमरे से बाहर निकल गये। जब उनके चले जाने का वाक़ई यक़ीन हो गया तो रअना हम पर बरस पड़ी—"और यह आपसे किसने कहा था कि आप यह मुसीबत भी सिर लगा लें?"

हमने कहा—"आप तो समझी नहीं हैं, मेरी अब भी यही राय है कि इन्हें वाक़ई साथ जाना चाहिए।"

रअना ने जलकर कहा—"उनके साथ तो कोई अगर मुझे जन्नत में भी भेजे तो मैं सात सलाम करूँ दूर से ही ऐसी जन्नत को। मम्मी, आपको नहीं मालूम इन हज़रत की अभी डैडी ने काफ़ी खबर ली है, काफ़ी झाड़ पड़ी हैं, और हम दोनों ने सब-कुछ सुना है। इसके बाद यह झूठा ऐसा सफेद झूठ बोल रहा था कि मैं क्या कहूँ। डैडी ने तो खुद इन हज़रत के जाने की मुखालफ़त की है।"

बेगम साहिबा ने जल-जलकर हज़ारों गालियाँ शिब्बू मियाँ को सुना डालीं और अन्त में यह निश्चय हुआ कि यह महाशय कदाचित् साथ न जायें। हमने लाख समझाया कि उनका साथ जाना हर प्रकार से उचित है; मगर न बेगम साहिबा मानीं न रअना, विवश हमें भी चुप हो जाना पड़ा।

: १३ :

मरी पर जो सुहाग गर्मियों में बरसता है वह दशा जाड़ों में तो नहीं होती; मगर एक विशेष सुन्दरता अवश्य होती है, बल्कि पहाड़ी स्थानों के अनुसन्धानकों का विचार तो यह है कि पहाड़ का वास्तविक सौन्दर्य बर्फ़ गिरने ही के दिनों में निखरता है। अब यह दूसरी बात है कि कोई इस सौन्दर्य की ताब को ला सके या न ला सके। हर तरफ़ एक सन्नाटा ! न मालकी वह चहल-पहल न वह रंग-बिरंगे गरारों की सरसराहटें, न ख़ाहमख़ाह एक सिरे से दूसरे सिरे तक सड़क नापने वालों की वह भीड़भाड़, न कोठियों पर शीशे जड़ने वालों को वह गर्मबाजारी, न रेस्तराँओं की वह रौनक कि देखने वाला झूम-झूमकर गुनगुनाने लगे कि—

"ऐसा आलम तेरा होता है मई और जून में,
बीबियाँ भी चलती-फिरती हैं जहाँ पतलून में।"

सुन्दर रमणियाँ जब घोड़ों पर सवार नज़र आती हैं तो बहुत ही विचित्र लगता है देखने वालों को। मगर आजकल तो बस यहाँ के असल निवासी या हम जैसे चन्द सिरफिरे ही यहाँ नज़र आते हैं। वे होटल वाले जो गर्मियों में सीधे मुँह बात नहीं करते और अगर करते हैं तो मुँह माँगा दाम तलब करते हैं, आजकल इतने शिष्ट, मिलनसार और उदार नज़र आते हैं कि पूरा होटल आपके चरणों पर निछावर करने के लिए तैयार हो जाते हैं और जो कुछ उनको दे दिया, उसी पर संतुष्ट हो जाते हैं।

जिस समय हम दोनों मरी पहुँचे हैं सारा पहाड़ धुनकी रुई का एक बड़ा ढेर बना हुआ था और हर तरफ़ बर्फ़-ही-बर्फ़ नज़र आ रही थी। सन्नाटा ऐसा कि मानों हमसे पहले यहाँ कोई प्राणी पहुँचा ही नहीं ; मगर थोड़ी देर में कुछ होटल वालों ने और कुछ मज़दूरों ने हमारी कार को आकर घेर लिया। मगर हम लाहौर ही से जिस होटल के बारे में तय करके आये थे, उसीका

रुख़ किया। यह होटल हमारे नज़दीक मरी के सबसे सुन्दर भाग में है। और इस होटल के जो दो कमरे हम दोनों ने रिज़र्व कराये थे, वे तो सचमुच आकाश में लटकते नज़र आते थे। जहाँ तक दृष्टि काम करती थी, दूधिया वातावरण के अतिरिक्त और कुछ नहीं था। अगर हम गर्मियों में आये होते तो हमारे कमरे की इन्हीं खिड़कियों से वे गहरे-गहरे खड्ड नज़र आते, जिनमें सफ़ेद जूते की डोरी-सी नज़र आती और यह वही बल खाती हुई सड़क होती जिस पर हमारी कार गुज़रकर यहाँ तक पहुँची थी। मगर आजकल तो बर्फ़ ने हर सड़क, हर मकान और हर पेड़ को बर्फ़-ही-बर्फ़ बना रखा था।

हमारे और रअना के कमरे अलग-अलग ज़रूर थे, मगर मिले हुए। लतीफ़ा यह हुआ कि हमने होटल के मैनेजर से जिस समय अपने लिए दो कमरे अलग-अलग तलब किये तो उसे ख़्याल हुआ कि हमारे और साथी भी आ रहे हैं। मगर जब उसे मालूम हुआ कि हम ही दोनों एक के बजाय दो कमरे चाहते हैं, तो यद्यपि उसने ज़बान से कुछ न कहा; मगर आँखों से विस्मय अवश्य बरस रहा था और उसका यह आश्चर्य ग़लत भी न था, इसलिए कि यहाँ आम-तौर पर वे अलग-अलग कमरों में रहने वाले आते हैं, जो एक ही कमरे में रह सकें। पहाड़ तो इसके लिए मशहूर ही हैं कि यहाँ बड़ी-बड़ी पर्दानशीन औरतें बुर्के छोड़ देती हैं और पहाड़ का जलवायु परिचित और अपरिचित के भेद को मिटा देता है। बुर्कों में लिपटकर सड़क पर सिमट-सिमटकर चलने वाली यहाँ गरारों के घेर सबको दिखाती घूमती हैं। गरारे पहनकर बिना बुर्के फिरने वाली अपने यहाँ वाक़ई पतलून पहनकर इठलाया करती हैं। बड़े-बड़े प्रेमी, यहाँ अपनी प्रेमिकाओं को बेनक़ाब देखने आते हैं।

बहरहाल होटल के इस मैनेजर का वह आश्चर्य ठीक ही था और वह यह पहेली निश्चय ही हल न कर सका होगा कि ये कैसे नौजवान मर्द और औरत हैं, जो पहाड़ की चोटी पर पहुँचकर भी अपने धरती के आचार-विचार अपनाये हुए हैं। मगर उसे क्या मालूम कि इसी धरती के ऊपर हम बहुत-सी भावनाओं को दबाये हुए हैं, जो उत्तेजित होने के लिए तड़पती रहती हैं। हम दोनों में से किसीके ज़ेहन में भी यह सवाल किसी समय न आया कि हम पहाड़ के निर्जन एकांतों से कोई अनुचित लाभ उठाने जा रहे हैं। रअना को

ख़ुद अपने ऊपर काफ़ी भरोसा था और हम खान बहादुर साहब, बेगम साहिबा और ख़ुद रअना के इस विश्वास का आदर करते थे, जो उन सबको हम पर था। रअना हमारे साथ आई ही सिर्फ़ इसलिए थी कि उसे हमसे किसी भद्दे आचरण की आशा नहीं थी और हम वाक़ई सतर्क थे कि हमारी किसी बात से रअना को हमारी असलियत का पता न चल जाये। बात असल में यह है कि अगर मनुष्य जाति से शरीफ़ज़ादा है तो उसको अधिकार प्राप्त है कि चाहे वह शराफ़त से गिरी हुई कोई भी हरक़त कर जाए, उसकी जातिगत शराफ़त पर आँच नहीं आ सकती। वह हर हरक़त में शरीफ़ ही समझा जायेगा। मगर जो जाति का शरीफ़ज़ादा न हो उसके लिए तो शराफ़त और शराफ़त में सावधानी इसलिए भी ज़रूरी हो जाती है कि कहीं भेद न खुल जाये। दुनिया यही कहेगी कि असल से ख़ता नहीं, कमअसल से वफ़ा नहीं। इसलिए चाहे असल ख़ता करता रहे, मगर कमअसल को हर हालत में वफ़ा ही करनी चाहिए। हमें मालूम था कि हमारी असलियत क्या है और हम क्या बने हुए हैं और यह भी मालूम था कि खान बहादुर साहब किस क़दर शरीफ़ आदमी हैं और रअना ख़ुद भी किस क़दर शरीफ़ लड़की है। इसलिए हमारे लिए शराफ़त कुछ आवश्यकता से अधिक आवश्यक बनकर रह गई थी। अब मिसाल के लिए शिब्बू मियाँ ही को लीजिए कि वे शराफ़त से गिरी हुई हरक़त अक्सर करते रहते हैं; मगर इसका अधिकार उन्हें इसलिए प्राप्त है कि वह जाति से शरीफ़ हैं। वे चाहे कितने ही गिर जायें और कैसी ही नीचता का आचरण क्यों न करें, मगर कहलायेंगे शरीफ़ और उनकी शराफ़त पर कलंक न आ सकेगा। मगर हमारी तो वह हैसियत न थी। यहाँ तो ज़रा बहके और खुला भेद। आपने देखा होगा कि सुन्दर स्त्रियाँ अपने मेकअप का इतना ध्यान नहीं करतीं, जितना साधारण रंगरूप की स्त्रियों को करना पड़ता है, जो हर दस-पन्द्रह मिनट के बाद पर्स से शीशा निकालकर देख लेती हैं कि उनका साँवला रंग जो उन्होंने गोरा बना रखा है, कहीं से फीका तो नहीं पड़ गया। लगभग यही हाल अपना था कि पग-पग पर अपने को तोलना पड़ता था और फिर भी दिल में डर था कि ख़ुदा जाने कब पकड़े जायें।

होटल में आने के बाद हम दोनों अपना-अपना कमरा दुरुस्त करके और कपड़े

बदलकर मनुष्य बन गये तो रअ्ना अपने कोट में लिपटी हुई बाहर निकल आई और हमें देखकर दाँत बजाते हुए बोली—"तोबा ! किस क़यामत की सर्दी है!"

हमने कहा—"मैंने आतिशदान गर्म कर दिया है और कॉफ़ी मँगवाई है आप भी इधर ही आ जायें।"

रअ्ना ने कहा—"सचमुच आग की तपन तो ऐसी हो रही है जैसे मई और जून में बर्फ़ को जी चाहता है।"

हमने घबराकर कहा—"ख़ुदा के लिए बर्फ़ का नाम न लीजिए। मुझे लगा जैसे आपने बर्फ़ की डली कानों में डाल दी है।"

रअ्ना ने हमारे कमरे में आते हुए कहा—"ख़ुदा के लिए बाहर खड़े न होइये, मैं तो जमी जा रही हूँ बिलकुल।"

आतिशदान के निकट आकर जब हम दोनों कुछ देर बैठे और गर्म कॉफ़ी की कई प्यालियाँ चढ़ा गये तो होश कुछ ठिकाने आ गये और वह जो एक कँपकँपी-सी थी कुछ दूर हुई। इस क़दर प्यार आ रहा था इस समय आतिश-दान में उठने वाली चिनगारियों पर कि यह बात समझ में न आती थी कि हमारे मौलवी और हमारे उपदेशक आख़िर दोज़ख की आग से क्यों डराते हैं और इसमें मौसम का लिहाज़ क्यों नहीं करते? उदाहरण के लिए गर्मियों में उपदेश हो रहा है तो निःसन्देह दोज़ख की आग से डरायें; मगर दिसम्बर और जनवरी में तो उन्हें यही कहना चाहिये कि दोज़ख वहाँ है जहाँ बराबर बर्फ़ पड़ता है और पापी बर्फ़ के पानी में डुबा दिये जायेंगे। बर्फ़ में दफ़नकर दिया जाएगा और अज़ाब के फ़रिश्ते उन्हें आइस क्रीम खिलायेंगे और बर्फ़ में नहला-नहलाकर पंखा झलेंगे। हम अभी यही विचार कर रहे थे कि रअ्ना ने शायद कॉफ़ी की चौथी प्याली पीते हुए कहा—"मुझसे अभी बाहर चलने को न कहियेगा। मैं पहले सर्दी की आदी हो जाऊँ, फिर यह हिम्मत कर सकती हूँ। इस वक्त जो ग़ुसल किया है मैंने तो मेरा ही दिल जानता है कि क्या हाल हुआ है मेरा।"

हमने कहा—"यह आप गरम पानी से ग़ुसल का ज़िक्र फ़रमा रही हैं, ज़रा मेरे दिल से पूछिये जिसने हमेशा की तरह ठंडे पानी से ग़ुसल किया है।"

रअ्ना ने एकदम अपने कोट को सिमेटकर कहा—"भई यह ज़िक्र न

कीजिए, देखिए फिर सर्दी लगी मुझे।"

हमने कहा—"यहाँ तो वाक़ई ग़र्म पानी से ग़ुसल करना चाहिए। मैंने जब पहला लोटा डाला है अपने जिस्म पर तो ऐसा मालूम हुआ जैसे बिजली का शॉक़ लगा हो और फिर यों लगा कि शायद मैं जम गया हूँ, मगर दाँत भींच कर जो लगातार लोटे बरसाए हैं।"

रअना ने झुरझुरी लेकर कहा—"ख़ुदा के लिए यह ज़िक्र ख़त्म भी कीजिए। लीजिए कॉफ़ी की एक प्याली और पीजिए। सचमुच आबेहयात मालूम हो रही है इस वक़्त यह कॉफ़ी।"

हमने कहा—"आख़िर कितनी पी जाएगी कॉफ़ी, चौथी प्याली है।"

रअना ने कहा—"यहाँ कॉफ़ी कितनी ही पी जाये; मगर नाकाफ़ी है। यहाँ का मौसम देखकर तो मुझे अफ़सोस है कि मैं शिब्बू भाई को साथ क्यों न लाई। बड़ा मज़ा आता। उनकी तो शायद जान ही निकल जाती यहाँ।"

हमने गम्भीरता से कहा—"मैंने तो पहले ही कहा था और मैं उनका साथ आना एक वजह से ज़रूरी समझता था। अब वह तरह-तरह के विचार दौड़ायेंगे। वह अपने गज़ से ही हम दोनों को भी नापते हैं। जाने क्या-क्या बकवास करते फिरेंगे। अगर साथ आ जाते तो उन्हें कम-से-कम यह अन्दाजा हो जाता कि सब उनकी क़िस्म के लोग नहीं होते।"

रअना ने कहा—"जी नहीं, आप यह ग़लत समझ रहे हैं। वह अगर साथ आते तो वह यही समझने लगते कि हम दोनों ने जो दो अलग-अलग कमरे लिए हैं, यह सब उन्हींके कारण हुआ है और ये जो हम दोनों शराफ़त बरत रहे हैं यह सब उन्हींकी मौजूदगी के ख़याल से हो रहा है।"

हमने कहा—"यह ठीक है; मगर उन्हें तरह-तरह के शुबहों में पड़ने का मौक़ा तो न मिलता।"

रअना ने अवज्ञा से कहा—"तो उनके शुबहे हमारा बिगाड़ ही क्या लेंगे? जब तक डैडी और मम्मी को और सबसे बढ़कर यह कि हम दोनों का अपने आप पर भरोसा है, उनके सन्देह करने से क्या होता है।"

हमने कहा—"मगर मैं उन्हें इस एतबार से ठीक समझता हूँ कि अव्वल तो वे आपके लिए फ़िलहाल आपके भाई···।"

रअना ने बात काटकर कहा—"मैं इस लफ़्ज़ फ़िलहाल पर सख़्त एतराज़ करती हूँ।"

हमने कहा—"एतराज़ तो आप उन्हींसे करिये जो यह समझते हैं। मगर उन्हें तो यही विश्वास है न कि उनकी शादी आपके साथ होने वाली है।"

रअना बोली—"मगर समझ में नहीं आता कि आख़िर वह समझते क्यों हैं। मेरी राय उन्हें अब तक मालूम हो जानी चाहिये थी। मम्मी उनके नाम पर कानों पर हाथ धरती हैं, डैडी का अन्दाज़ा आप ख़ुद कर चुके होंगे।"

हमने कहा—"वह कुछ भी सही; मगर उन्हें तो विश्वास है और इस विश्वास का कुछ-न-कुछ कारण भी ज़रूर होगा।"

रअना ने सम्भलकर बैठते हुए कहा—"जी, कारण सिर्फ़ यह है कि उनकी माँ ने मेरी पैदाइश के वक्त मम्मी से यह कह दिया था कि बस यह लड़की मेरी है और शिब्बू तुम्हारा है। अब ज़ाहिर है कि वह वक्त फ़ौजदारी का तो था नहीं। हँसी में बात टल गई।"

हमने कहा—"और उसके बाद कभी संजीदगी से इंकार न किया गया होगा?"

रअना ने तत्परता से कहा—"एक बार नहीं हज़ार बार। अभी पिछले साल हमारी यह चची साहिबा अपने यह चोंचले बघारने तशरीफ़ लाई थीं कि अब अल्लाह रखे दोनों सयाने हो गये हैं, मगर डैडी ने यह बात सुनते ही वह मिज़ाज पूछा कि अगर समझदार होतीं तो फिर इधर का रुख न करतीं।"

हमने कहा—"मालूम होता है कि उन्हें अब तक उम्मीद है और वह बेटे को यक़ीन दिला चुकी हैं।"

रअना ने बुरा-सा मुंह बनाकर कहा—"घराने-का-घराना अक़्ल का बैरी है। भई ज़रा घंटी बजाइये, कॉफ़ी और मँगवाई जाये।"

लाख रअना को टोका, लाख मना किया; मगर कॉफ़ी से बाज़ न आई। हद यह है कि खाना भी दूसरा न खाया गया। जब तक कॉफ़ी रही कॉफ़ी का दौर चलता रहा और आख़िर लिहाफ़ में लिपटने के शौक़ से अपने कमरे में चली गई।

: १४ :

हम लोगों को मरी आये आज तीसरा दिन था। रअना अब न सिर्फ़ इस सर्दी की आदी हो चुकी थी बल्कि वह इस बर्फ़ से काफ़ी दिलचस्पी ले रही थी। और बर्फ़ पर स्केटिंग और बर्फ़ के घरौंदे बनाने का उसे ऐसा शौक़ था कि तनिक अवसर मिला और स्केटिंग शुरू कर दी। ज़रा समय मिला, बर्फ़ का एक महल निर्माण कर दिया। अब कॉफ़ी भी कुछ कम इस्तेमाल होती थी और भूख खूब लगने लगी थी। मगर निर्दयी आकाश से भला यह कैसे देखा जाता कि जीवन में सिर्फ़ आनन्द-ही-आनन्द हो और कोई दुःख आस-पास सम्भव ही न हो। अतः अब उसने इसी आनन्द को किरकिरा करने के लिए एक चुटकी रेत की इस प्रकार डाली कि ठीक उसी समय जब होटल के सामने बर्फ़ से ढके लान पर रअना बर्फ़ का महल बना रही थी और उस महल के सामने हौज़ में फव्वार लगा रही थी, एक कुली ने किसीका सामान लाकर हमारे बरामदे में रख दिया। और हम अभी इस सामान के बारे में पूरी तरह विचार भी न कर पाये थे कि लिहाफ़ में लिपटे हुए शिब्बू मियाँ ने अस्सलाम अलेकुम का वह बम मारा है कि रअना का बर्फ़ का महल खुद रअना के हाथों गिरकर चूर-चूर हो गया और हम भी सटपटाकर रह गए कि यह क्या?—बल्कि खुद उनसे भी यही कहा—"यह आप कहाँ?"

शिब्बू मियाँ ने बजाय इस बात का उत्तर देने के कहा—"मार डाला साहब इस सर्दी ने। मजबूर होकर दौड़ा। गली में बिस्तर खोला मैंने और निकालकर लिहाफ़ ओढ़ लिया।"

रअना इतनी देर में इस दुर्घटना से सम्भल चुकी थी और उसने भी अत्यन्त विरक्त स्वर में कहा—"मगर जनाब तशरीफ़ कैसे ले आये।"

शिब्बू मियाँ ने कुली को दाम देकर विदा करते हुए कहा—"पहले मुझे किसी कमरे में पहुँचा दीजिए, फिर इतमीनान से बात करूँगा। मैं तो जमा जारहा हूँ।"

हमने कहा—"ग्राप फ़िलहाल मेरे कमरे में चलिए ग्रौर ग्राग के पास बैठिये।"

शिब्बू मियाँ ने चलते हुए कहा—"शायद यहीं की मिट्टी थी, मेरी मौत खींच लाई है मुझे। नामुमकिन है कि मैं ज़िन्दा रह सकूँ।"

कमरे में पहुँचकर वह ग्रपने लिहाफ़ में लिपटे हुए ग्राग के पास इस प्रकार बैठे कि ग्रपना टोस्ट बनाना चाहते हैं।

हमने काफ़ी बना कर पेश की तो पहले तो बदहवासी में उसका एक घूँट पी गए, फिर मुँह बनाकर बोले—"यह क्या कॉफ़ी है? लाहौल बिला! यह तो मैं पी भी नहीं सकता। मुझे तो चाय पिलाइये, मैं बाज़ ग्राया हुक्के के इस पानी से।"

हमने घंटी बजाकर बैरा बुलाया ग्रौर चाय लाने का ग्रार्डर दे कर ग्रब जो वापस ग्राये हैं तो रग्रना शिब्बू मियाँ से उलझी हुई है। "मैं ग्रापसे ज़बानी बात तो करना ही नहीं चाहती। मुझे ग्राप यह लिखकर दे दें कि डैडी ने ग्रापको भेजा है। फ़रहत साहब, सुना ग्रापने? फ़रमाते हैं जनाब कि डैडी ने भेजा है ग्रापको।"

हमने कहा—"हाँ, तो क्या हुग्रा भेजा होगा।"

रग्रना ने ग्रात्मविश्वास से कहा—"नामुमकिन है। वह भला क्यों भेजते? ये ख़ुद ही तशरीफ़ लाये हैं। ग्रौर बहुत मुमकिन है कि घर में किसीको पता भी न हो कि कहाँ गए हैं?"

शिब्बू मियाँ ग्रब इस योग्य हो गए थे कि ग्रपनी भद्दी मुस्कानों की बिजलियाँ हम पर गिरायें ग्रतएव मुस्कराकर फ़रमाया—"लीजिए, तो क्या ग्रापका मतलब यह है कि मैं भाग कर ग्राया हूँ, ग्रौर मेरा हुलिया लिखा जाएगा ग्रब। साहब, मैंने तो सिर्फ़ इतना कहा था कि मुझे भी बर्फ़ गिरते देखने का शौक़ है। इस पर चचा जान ने कहा—ग्रगर तुम जाना चाहते हो, ग्रब चले जाग्रो।"

रग्रना ने उनकी ग्राँखों-में-ग्राँखें डालकर कहा—"मेरे ख़याल में तो यह भी ग़लत है, ग्रल्लाह ही जाने ग्रापकी कौनसी बात सच होती है ग्रौर कौनसी

झूठ ? फ़र्ज़ कर लीजिए कि ऐसा ही हुआ है तो सवाल यह है कि आख़िर हम लोगों ने आपका क्या बिगाड़ा है ?"

रअना की स्पष्टता को सहन न कर खुद हमने बात काट कर कहा—"आप दोनों की छेड़ तो ख़ैर चलती ही रहेगी······।"

शिब्बू मियाँ पर ऐसी ख़ुदा की मार थी कि वह ख़ुद अपनी शामत घेर कर लाते थे। 'छेड़' का शब्द सुनते ही बोले—"यह आपने बिलकुल सच कहा :—

'छेड़ ख़ूबाँ से चली जाए असद'
(ऐ असद, जो सुन्दर हैं उनसे छेड़ होती रहे)

और रअना एक बार फिर तिलमिला उठी—"ख़ूबाँ ? कौन है ख़ूबाँ ? किसे कह रहे हैं आप ख़ूबाँ ?"

हमने फिर बीच-बचाव किया—"साहब, यह तो ख़ूबानियों का रस ले रहे हैं ?"

मगर लाहौल विला क़ुव्वत ! हमने भैंस के आगे बीन बजाई थी। वह हज़रत बोले—"जी नहीं, मैंने तो 'असद' यानी ग़ालिब का मिसरा पढ़ा था।"

रअना ने जलकर कहा—"जिन्दा होता ग़ालिब, तो गोली मार देती आपको, अपने मिसरे के इस बेहूदा इस्तेमाल पर।"

हम चाहते थे कि यह मुसीबत जब आ ही पड़ी है तो अब इसे खुशग़वार बनाने की कोशिश की जाये। इसलिए हम फिर बीच में टपके :—

"शिब्बू मियाँ, मेरी राय यह है कि पहले आप इतमीनान से ग़ुसल वग़ैरह कर लें।"

शिब्बू मियाँ ने एकदम चौंककर कहा—"जी, क्या फ़रमाया आपने ? ग़ुसल ? यहाँ ? इस मौसम में ? साहब मैं इस परदेश में ये खुदकशी क्यों करने लगा ?"

हमने कहा—"अच्छा जाने दीजिए, मगर यह तो बात बता दीजिए कि अब आपका प्रोग्राम क्या है ?"

शिब्बू मियाँ ने अपने को लिहाफ़ में कुछ और भी लपेटते हुए कहा—"साहब, यहाँ सिवाय इसके और प्रोग्राम ही क्या हो सकता है कि आदमी

लिहाफ़ में लिपटा आग के सामने बैठा रहे। मेरा तो यहाँ भी दम निकला जा रहा है। समझ में नहीं आता कि आप लोग यहाँ ठहरे हुए कैसे हैं ?"

रञ्जना ने उपेक्षा भाव से कहा—"ख़ैर, हम आपकी समझ के ज़िम्मेदार तो हैं नहीं और न दरअसल आप ख़ुद अपनी समझ के ज़िम्मेदार हैं। बहरहाल हम दोनों तो जा रहे हैं स्केटिंग के लिए। अगर आपको यहीं ठहरना है तो शौक़ से तशरीफ़ रखिये।"

शिब्बू मियाँ ने आश्चर्य से कहा—"स्केटिंग ? यानी आप दोनों बरफ़ पर फिसलने जा रहे हैं ? कमाल है साहब।

हमने कहा—"आज बरफ़ के मैदान में इनका हॉकी मैच है। अगर देखने का शौक़ है तो तशरीफ़ लाइये।"

शिब्बू मियाँ ने लिहाफ़ कलेजे से लगाकर और ख़ुद लिहाफ़ के कलेजे में घुसकर फ़रमाया—"बख़्शिये साहब मुझे, मेरी तो रूह जमी जा रही है और आपको बरफ़बाज़ी की सूझी है।"

हमने कहा—"कम-से-कम यह तय तो कर लीजिए कि आप रहेंगे कहाँ ? एक कमरा इनके पास है, एक कमरा यह है मेरा। आप फ़रमायें तो एक तीसरे कमरे का बन्दोबस्त कर दिया जाये।"

शिब्बू मियाँ ने आश्चर्य से पूछा—"यानी दो कमरे हैं आपके पास ? गोया एक कमरा फ़ी आदमी ?"

रञ्जना ने जलकर कहा—"और नहीं तो क्या आपका यह ख़याल था कि हम दोनों एक ही कमरे में होंगे।"

शिब्बू मियाँ जल्दी में सच बोल गए—"मैं तो यही समझता था, बहरहाल अब तीसरे कमरे की क्या जरूरत ? इन्हींमें से किसी में पड़ा रहूँगा।"

रञ्जना ने निहायत रूखेपन से कहा—"ख़ैर, दोनों में से किसी में तो कहिए नहीं, मेरे कमरे में तो आप पड़ नहीं सकते। अलबत्ता फ़रहत साहब को अपने कमरे का अधिकार है।"

हमने कहा—"आप शौक़ से इस कमरे में रह सकते हैं। मैं एक और मसहरी मँगवाये देता हूँ या अगर आप अलग कमरा चाहें तो उसका इन्तज़ाम कर दूँ ?"

शिब्बू मियाँ ने उदासीन भाव से कहा—"जैसा आप मुनासिब समझें ?" बहरहाल कमरा ज़रा कम हवादार और थोड़ा-बहुत गर्म हो तो अच्छा है।"

रअना से फिर चुप न रहा गया। बोली—"फिर तो आपके लिए होटल का बावर्चीख़ाना शायद ठीक रहेगा।"

शिब्बू मियाँ ने आतिशदान में दो-तीन लकड़ियाँ और डालते हुए कहा—"नहीं साहब, मेरी चारपाई तो आप इसी आतिशदान के पास बिछवा दीजिए।"

रअना ने कमरे से बाहर जाने का इरादा करते हुए कहा—"बहुत अच्छा, यहीं इन्तज़ाम हो जायेगा। आइए फ़रहत साहब वरना स्केटिंग का प्रोग्राम रह जाएगा।"

हमने होटल से बाहर जाते हुए बैरे को शिब्बू मियाँ के बारे में आवश्यक आदेश दे दिए और फिर रअना के साथ होटल की सीमा से बाहर हो गए। रास्ता बड़ी ख़ामोशी से तय हो रहा था। रअना ख़ुदा जाने किस सोच में थी कि कुछ न बोली। और हम चूँकि उसकी इस तन्मयता का कारण समझ रहे थे इसलिए जान-बूझकर चुप रहे। मगर आख़िर कब तक। विवश होकर रअना से पूछना ही पड़ा—"क्या कोई शेर सोचा जा रहा है ?"

रअना ने एकदम चौंककर कहा—"वाक़ई शेर ही याद आ रहा है। जौक़ ने ज़िन्दगी-भर में जो एक काम का शेर कहा था वह आज काम आगया कि—

"अब तो घबरा के ये कहते हैं कि मर जायेंगे।
मर के भी चैन न पाया तो किधर जायेंगे।"

हमने कहा—"वाक़ई, बड़ा अच्छा शेर है। मगर मुझे फ़ारसी का यह मिसरा याद आ रहा था कि—

"बहर ज़मीं कि रसीदे, आस्माँ पैदा अस्त"

(तू जिस ज़मीन पर भी पहुँच जाता आसमान पैदा हो जाता है।")

रअना ने अत्यन्त चिन्तित स्वर में पूछा—"मगर अब होगा क्या ?"

हमने कहा—"होना क्या था, मज़ा रहेगा।"

रअना जल ही तो गई—"आपको तो सूझ रहा है मज़ाक़; मगर मैं आपको

कैसे बताऊँ कि इस आदमी का वजूद एक मुस्तक़िल बोझ होता है मेरे मन पर। मैं हरएक बीमारी बरदाश्त कर सकती हूँ; मगर यह रोग मुझसे बरदाश्त नहीं होता।"

हमने कहा—"अच्छा, स्केटिंग से वापसी पर इस मामले पर ग़ौर करेंगे?"

रअना ने कहा—"मैं स्केटिंग के लिए नहीं जा रही हूँ। मैं तो सिर्फ़ वहाँ से टली हूँ दिमाग़ का बोझ हल्का करने। फ़रहत, तुम नहीं जानते कि मैं इस आदमी को देखकर कितनी चिढ़ जाती हूँ।"

हम इस समय झूम रहे थे। रअना ने पहली बार फ़रहत साहब के बजाए सिर्फ़ फ़रहत कहा था। कितना अपनापन था इस सम्बोधन में और कितना उत्साहजनक थी यह उपाधि। हमने रअना को समझाया—"मुझे मालूम है रअना कि तुम किस कोफ़्त में हो; मगर जब मुसीबत पड़ जाए तो उस मुसीबत से दिलचस्पी लेकर उसे जहाँ तक हो सके ख़ुशगवार बनाना चाहिए। और जब तुम ख़ुद यह जानती हो कि यह हज़रत जिस वहम में पड़े हैं, वह सदा वहम ही रहेगा इसलिए उसे पड़ा रहने दो। तुम उसके लिए इतनी गम्भीर क्यों बनती हो?"

रअना ने कहा—"मुझे सबसे ज्यादा फ़िक्र आपके बारे में है कि बदतमीज़ आदमी ख़ुदा जाने आप पर क्या वार कर बैठे।"

हमने क़हक़हा लगाते हुए कहा—"मेरी फ़िक्र की इतनी ज़रूरत नहीं—एक तो मेरी जिन्दगी इतनी क़ीमती नहीं। दूसरे, मैं इतना गया-गुज़रा भी नहीं कि इन हज़रत के वार का ताव भी न ला सकूँ।"

रअना ने कहा—"आपकी जिन्दगी आपके लिए न सही, दूसरों के लिए तो क़ीमती है।"

क्या यह वाक्य इतना नशीला न था कि इसके आनन्द में हम झूमते ही रह जाते। आँखों की बात ज़ुबान पर आकर क़यामत बन चुकी थी।

: १५ :

मरी आना ही व्यर्थ गया। रुअना जिस मानसिक कष्ट से छुटकारा पाने के लिए यहाँ पहुँची थी, उसने उनका पीछा किया और शिब्बू मियाँ यहाँ आ पहुँचे। और उनके पधारने के दूसरे दिन ही ख़ाँ साहब के पत्र से मालूम हुआ कि शिब्बू मियाँ जाने कहाँ हैं, किसीको कुछ पता नहीं। इस पत्र के आने पर रुअना ने उनकी काफ़ी ख़बर ली। और ख़ान बहादुर साहब को तार दे दिया गया कि गुमशुदा बच्चा सकुशल मरी में मौजूद है। मगर अब सवाल यह था कि हम लोग करें तो क्या करें? यह हज़रत जबसे तशरीफ़ लाये थे लिहाफ़ उनकी खाल बन चुका था और आतिशदान के पास धूनी रमाये बैठे रहते थे। न कहीं आने के न जाने के। शिष्टाचार से उन्हें अपने कमरे में ठहरा लिया था, मगर अब इस शिष्टाचार की सज़ा भुगत रहे थे। कमरे पर एक विचित्र मनहूसियत छाई हुई थी। बावजूद दिन में दो बार सफ़ाई होने के उनकी चारपाई के इर्द-गिर्द सिगरेट के छोटे-बड़े टुकड़े, दियासलाइयाँ, कुछ फटे हुए कागज़, कुछ मैले कपड़े और जाने क्या-क्या कुछ हर समय बिखरा रहता था। नाश्ता इसी चारपाई पर फ़रमाते थे। दोपहर का भोजन इसी चारपाई पर करते थे और और मुसीबत का वक्त वह होता था जब नहाने-धोने के लिए गुसलख़ाने तक जाना पड़ता था। हद यह थी कि गुसल करना तो दर किनार इन हज़रत ने इस डर के मारे शेव करना भी छोड़ दिया था कि मुँह पर पानी लगाना पड़ेगा। परिणाम यह कि होटल के बैरे उन्हें अपाहज समझते थे। और वह ख़ुद हम दोनों के लिए स्थायी मानसिक फालिज बने हुए थे। चूँकि जनाब अपनी चार-पाई से चिपककर रह गये थे; इसलिए चाहते यह थे कि हम दोनों भी एक-एक लिहाफ़ ओढ़कर उनके पास बैठे रहें। मगर रुअना को उनसे ऐसी चिढ़ थी कि वह समय का अधिक भाग बाहर ही बिताना चाहती। परिणाम यह होता था कि एकान्त में दिन-भर तो यह हज़रत सोते थे और जब दिन के थके-हारे

रात को हम लोग सोना चाहते थे उस समय यह हज़रत हमको जगाने की कोशिश फ़रमाते थे। अपने अत्यन्त भौंडे शेर सुनाते थे। अत्यन्त भद्दे चुटकले सुनाकर आप ही बदतमीज़ी से हँसते थे और अपने प्रेम की अनगनित कहानियाँ सुना-सुनाकर कान पका दिये थे इस व्यक्ति ने। रश्ना को क्या मालूम कि जब वह अपने कमरे में मीठी नींद सोती थी, उस समय हम पर क्या वक्त गुज़रता था; मगर आज इन हज़रत ने कुछ उपयोगी बातें सुनाना शुरू कर दीं। बड़ी सहृदयता से कहने लगे—"भाई फ़रहत साहब, खुदा की क़सम आप इतने अच्छे आदमी हैं कि आपसे दुश्मनी करने को जी नहीं चाहता।"

हम एकदम चौंक पड़े—"यह क्या फ़रमाया आपने? दुश्मनी? आखिर दुश्मनी की ज़रूरत क्या पेश आई है?"

कहने लगे—"देखिये न वह तो खुद आप भी समझते होंगे; मगर मैं आपको फ़िलहाल बेक़सूर समझता हूँ कि आपको शायद यह नहीं मालूम कि रश्ना मेरी मंगेतर है।"

हम सम्भलकर बैठ गये—"रश्ना आपकी मंगेतर है? यह तो वाक़ई मुझे नहीं मालूम।"

कहने लगे—"मैं जानता था कि आपको नहीं मालूम होगी यह बात। भाई साहब, ठीकरे की मँगनी है मेरी उनसे।"

हमने जान-बूझकर अनजान बनते हुए पूछा—"ठीकरे की मँगनी क्या होती है?"

कहने लगे—"जब लड़की पैदा होती है और किसी लड़के की माँ उस लड़की को अपनी बहू बनाना चाहती है, तो कुछ रुपये शुगन के तौर पर जच्चाख़ाने के ठीकरे में यह कहकर डाल देती है कि यह लड़की अब मेरी है और मैं अपने लड़के के लिए इसे माँग रही हूँ। चुनाचे वालिदा साहिबा ने रश्ना की पैदायश के मौक़े पर यही किया था।"

हमने कहा—"यह तो गोया एक तरह से पैदायशी रिश्ता हुआ?"

शिब्बू मियाँ ने बड़ी ज़ोरदार ताईद की—"जी, और क्या। इस हालत में उनसे आपका घुलना-मिलना आप खुद इंसाफ़ कीजिये किस क़दर गोया नामुनासिब है। मैं दरअसल किसी मुनासिब मौक़े की तलाश में था कि आपको

बता दूँ, फिर तो आप खुद निहायत माक़ूल आदमी हैं, रास्ते से हट जायेंगे।"

हमने निहायत इतमीनान से अर्ज़ किया—"भाई साहब, जैसा कि आपका ख़याल है मैं वाक़ई माक़ूल आदमी हूँ और जरूर रास्ते से हट जाता; मगर मुसीबत यह है कि मैं अपने से ज्यादा माक़ूल रअना को समझता हूँ। इस ठीकरे की मँगनी का खुद उनको भी यक़ीनन इल्म होगा; मगर जब वह खुद इस मँगनी की परवा नहीं करती, तो मैं ख़ाहमख़ाह इसकी परवाह क्यों करूँ? मेरी राय में तो यह बात आपको बजाए मेरे खुद रअना को समझानी चाहिये।"

शिब्बू मियाँ निरुत्तर होना तो जानते ही नहीं। कहने लगे—"अजी, आपने भी भली कही—औरत और माक़ूल? यह भी ख़ूब रही! मैं तो इस बात का क़ायल हूँ कि औरत की अक़्ल एड़ी में होती है।"

हमने कहा—"मुमकिन है आपका तजुरबा यही हो। मगर मैं चूंकि एक औरत की औलाद भी हूँ इसलिये मैं यह बात नहीं कह सकता।"

शिब्बू मियाँ ने हमें मूर्ख समझते हुए कहा—"यह क्या बात कही आपने हज़रत! औरत की औलाद तो मैं भी हूँ।"

हमने कहा—"जी हाँ, उस औरत की औलाद हैं आप जो ठीकरे में मँगनी के रुपये डालकर उस मासूम बच्ची का सौदा कर बैठी थीं जो बड़ी होकर इस बेतुकी बात का खुद मज़ाक़ उड़ाती हैं।"

शिब्बू मियाँ ने कहा—"ना, ना ना; आप समझते नहीं मज़ाक़-वज़ाक़ कोई नहीं उड़ाता। खुद रअना को भी मालूम है कि उन्हें मेरी बीबी बनना है।

आपने शायद अन्दाज़ा किया होगा कि चचा जान इसी ख़याल से कितनी मुहब्बत फ़रमाते हैं मेरे साथ।"

हमने सादर कहा—"मुझे तो ख़ास मुहब्बत नजर नहीं आई।"

शिब्बू मियाँ ने कनखियों से देखते हुए कहा—"हैरत है कि आपको इस बात का अन्दाज़ा नहीं हुआ। मिसाल के लिए छोटी-सी बात है कि मुझे अपने साथ लेकर गये बढ़िया कपड़े की दुकान पर। बढ़िया क़िस्म के कपड़े ख़रीदे, कई सूट बनवाए, ड्रैस-सूट तो आपने देखा ही होगा। फिर देखिये मेरी एक-

एक बात का ध्यान रखते हैं। इन बातों का आखिर कुछ तो मतलब है ?"

हमने कहा—"कितनी छिछली बातें कर रहे हैं आप ! माफ़ कीजियेगा, खान बहादुर जैसा रईस आदमी क्या अपने भतीजे के साथ इतना भी सलूक नहीं कर सकता ?"

कहने लगे—"अजी तौबा कीजिये ; वह रईस ज़रूर हैं ; मगर रईसों जैसा हौसला-वौसला नहीं। चमड़ी जाये, दमड़ी न जाये यह तो उसूल है उनका। इन तिलों में हरएक के लिए तेल नहीं होता। मगर चूँकि उन्हें मालूम है कि कितना नाज़ुक रिश्ता होने वाला है ; इसलिये मजबूर होकर ये सब-कुछ करते रहते हैं ?"

हमने उन्हें और भी बकवास करते रहने का अवसर देते हुए कहा—"तो क्या आपका यह ख़याल है कि यह ब्याह ज़रूर हो जायेगा ?"

उन्होंने बड़े आत्मविश्वास के साथ फ़रमाया—"साहब, वह तो होना ही है। यह जो ऊपर-ऊपर से इंकार कर रहे हैं, इस सिलसिले में एक पूरी कहावत है, शायद सुनी होगी आपने ? कि मन चाहे मुड़िया हिलाये, वरना वह खुद यह ग़वारा नहीं कर सकते कि उनकी इतनी दौलत का वारिस कोई ग़ैर आदमी बाहर से आकर बन जाये। आपको मालूम नहीं, बड़े मियाँ के पास रूपया काफ़ी है और जब से अंग्रेज चले गये हैं कोई ख़ास ख़र्च भी नहीं है। पहले तो खिताब वग़ैरह की चाट में पार्टियाँ भी करनी पड़ती थीं और डालियाँ भी लगानी पड़ती थीं; मगर अब तो आमदनी-ही-आमदनी है।"

हमें सख़्त घिन आ रही थी ये बातें सुनकर, मगर इन हज़रत को समझा देने का भी यही अवसर था। इसलिये अर्ज़ किया—"वाक़ई, अगर आपसे हो जाये रअना की शादी, तो घर की दौलत घर ही में रह सकती है।"

शिब्बू मियाँ ने कहा—"ख़ैर, वह तो होकर रहेगी; मगर आपको नहीं मालूम कि यह जो हमारी चची जान है यह हथिनीनुमा औरत दरअसल मेरी सख़्त मुख़ालिफ़ है। बात यह है कि चचा जान ने न जाने कहाँ से शादी करके यह बला ख़रीद ली है। मेरा ख़याल तो यह है कि यह कुछ ऐसे-ही-वैसे खानदान की औरत है। मगर साहब उसने चचा जान को उल्लू की ज़बान खिलाकर ऐसा क़ब्ज़े में किया है कि मैं क्या कहूँ ? इन साहिबा की यह ख्वाहिश

थी कि रुग्रना की शादी अपने मैके में करें। मगर जब चचा जान नहीं माने तो अब ज़िद यह है कि चाहे कहीं भी हो जाये उसकी शादी; मगर मेरे साथ न हो—"

हमने कहा—"और चूँकि ख़ान बहादुर साहब उल्लू की ज़बान खा चुके हैं, इसलिए ज़ाहिर है कि वही होकर रहेगा जो बेगम साहिबा चाहेंगी।"

शिब्बू मियाँ ने निहायत गुन्डेपन से कहा—"अजी तौबा कीजिए, वास्ता किसी और से नहीं मुझसे पड़ा है। आज चाहूँ तो लौंडिया को ऐसा ग़ायब करूँ कि पता न चले ज़िन्दगी-भर। मगर मैं चाहता हूँ कि सीधी उँगली से ही घी निकल आये।"

जी तो चाहता था कि इन हज़रत को इसी समय इस बदतमीज़ी का मज़ा चखा दिया जाये, मगर ख़ून के घूँट पीकर रह जाना पड़ा। हमें चुप देखकर उन हज़रत ने फिर बकवास शुरू की—"तो बन्दापरवर, मैं आपसे यह कह रहा था कि अब तो आपको सारी हक़ीक़त मालूम हो गई। अब अगर आप दोनों में ये मेल-जोल क़ायम रहा, तो मैं आपको भी बेक़सूर न समझूँगा। मुझे अन्दाज़ा हो चुका है कि चची जान आपको फाँसने की कोशिश कर रही हैं और रुग्रना से आपके पैंग बढ़ा रही हैं, मगर यह बेल मढ़े न चढ़ सकेगी।"

अब हमने भी तनिक सफ़ाई से बात कर लेना उचित समझा—"देखिये जनाब, मुझसे तो आप इस क़िस्म की बात करें नहीं। अगर आप मुझे क़सूरवार समझें तो क्या, न समझेंगे तो क्या? मैं इस सिलसिले में कल ही रुग्रना से साफ़-साफ़ बात कर लूँगा।"

शिब्बू मियाँ ने बात काटकर कहा—"बस यही ग़लत है। मैंने तो आपको दोस्ताना मशविरा दिया है। यह मतलब नहीं कि आप इसका ढिंढोरा पीटें। इस तरह तो ख़ाहमख़ाह एक हंगामा खड़ा हो जायेगा और फिर मुझे मजबूर होकर खुलकर मैदान में आ जाना पड़ेगा।"

हमने भी मित्रता-भाव से कहा—"यह आप मुझे धमकी दे रेहे हैं या अपने चचा जान वग़ैरह को?"

कहने लगे—"धमकी नहीं, यह तो सही बात है कि अगर मेरा हक़ छीनने की कोशिश की गई तो मैं भी ख़ामोश रहने वाला नहीं। मगर मैं चाहता हूँ

कि रश्रना से ये बातें कहकर यह तूफान फ़िलहाल न उठायें, बल्कि खुद चुपचाप इस झंझट से अलग हो जायें ।"

हमने बिना उत्तेजित हुए कहा—"जनाबे आला, मुझसे आप यह तक़ाज़ा न करें और न मैं आपसे यह वायदा कर सकता हूँ। दूसरी बात यह है कि मैं यह ज़िक्र रश्रना से ज़रूर करूँगा।"

शिब्बू मियाँ ने फिर धमकाया—"तो गोया अब आप मुझे मैदान में ललकार रहे हैं ?"

हमने कहा—"मैं आपको अपने बराबर का समझ लूँ, तो शायद ललकार भी सकूँ। फ़िलहाल तो आप मेरे नज़दीक किसी गिनती में नहीं।"

शिब्बू मियाँ ने अर्थपूर्ण भाव से कहा—"बेहतर है, देखा जायेगा।"

और इसका उत्तर देना हमने उचित न समझा। मगर फिर इसी उधेड़-बुन में नींद न आ सकी। रश्रना ने सच ही कहा था कि वह इन हज़रत की ओर से हमारे सिलसिले में चिन्तित थी और अब हमारी समझ में आ सका कि वह क्यों चिन्तित थी।

: १६ :

हम दोनों ने दूसरे ही दिन यह निर्णय कर लिया कि वापस जाना चाहिए। शिब्बू मियाँ तो ख़ुदा से चाहते थे कि यहाँ से छुटकारा मिले। ख़ैर, मरी की इस सरस यात्रा को अत्यन्त नीरस बनाकर जब हम लोग रावलपिंडी लौटे तो शिब्बू मियाँ ने अपना प्रोग्राम बदल दिया और हमसे कहा कि उन्हें रेलवे स्टेशन पहुँचा दिया जाये ताकि वे बजाय लाहौर जाने के पेशावर जा सकें। रश्ना ने भी उन्हें यही सलाह दी कि अगर वाक़ई आपको पेशावर जाना है तो उल्टे बाँस बरेली को आप लाहौर क्यों पहुँचें, सीधे यहीं से पेशावर चले जाइये। अतएव शिब्बू मियाँ ने रेलवे स्टेशन पहुँचकर हमें अलग ले जाकर फिर समझाया कि वे बातें रश्ना से हम कदाचित न कहें और जब उन्हें यह अन्दाज़ा हो गया कि उनकी हर धमकी व्यर्थ गई है तो अब मूड ही दूसरा था। कहने लगे—"मैं अपनी रौ में ख़ुदा जाने क्या बक जाता हूँ। आप इसका हर्गिज़ ख़याल न करें बल्कि यह समझें कि मैंने आपसे कुछ कहा ही नहीं है।"

मगर हमने इस समय भी उन्हें कोई वचन न दिया कि हम रश्ना से ये बातें न करेंगे। यहाँ तक कि उनके समझाने का हर प्रयत्न विफल सिद्ध हुआ और अन्त में उन्होंने निहायत भौंडी ख़ुशामद की—"बहरहाल मैं आपकी बहुत इज्ज़त करता हूँ। इसलिए कि आप बहुत ही सच्चे और खरे आदमी हैं।"

हम उन्हें धन्यवाद देकर स्टेशन से बाहर आ गये और लाहौर की ओर चल पड़े।

रश्ना ने थोड़ी देर बाद ख़ुद ही कहा—"मुझे तो ख़ुद हैरत थी कि भागकर तो यह लाहौर से आया है अब फिर किस मुँह से जायेगा।"

हमने कहा—'ख़ैर, यह मुँह तो उनके पास था, जिससे वह लाहौर जा सकते थे; मगर वह एक और कारण से भागे हैं।"

रश्ना ने चकित होकर पूछा—"और भी कोई कारण है?"

हमने कहा—"जी हाँ, मगर मैं आपको बताकर ख़ाहमख़ाह ग़ुस्सा दिलाना नहीं चाहता। हालाँकि मैं शिब्बू साहब से कह चुका हूँ कि मैं यह बात आपको ज़रूर बताऊँगा; मगर मैं अपने इस हक़ से फ़ायदा उठाना नहीं चाहता।"

रअना ने तेवर बदलकर कहा—"यह ग़लत है, आपको बताना पड़ेगा। रोकिये आप कार, पहले यह बात मुझे बतलाइये, फिर आगे बढ़ियेगा।"

हमने कार रोके बिना कहा—"इसमें कार रोकने की क्या ज़रूरत है ?"

रअना ने ज़बरदस्ती शुरू कर दी—"जी नहीं, ज़रूरत है। मैं चाहती हूँ आपका ध्यान सिर्फ़ इसी तरफ़ रहे। रोकिये न कार !"

हमने कार ठहराते हुए कहा—"हुज़ूर वाला, अगर मुझे यह बात आपको न बतानी होती, तो मैं यह ज़िक्र ही क्यों छेड़ता ? मगर मैं उस वक्त तक कुछ न बताऊँगा, जब तक आप मुझसे यह वायदा न करें कि आप इस बेकार बात पर गुस्सा होने की कोशिश हर्गिज़ न करेंगी और बात का ख़ाहमख़ाह बतंगड़ न बनायेंगी।"

रअना ने कहा—"अच्छा, मैं वायदा करती हूँ। अगर आपकी यही सलाह है तो मैं भी वही करूँगी जो आप कहेंगे।"

हमने फिर इस वायदे को पक्का कराया—"याद रखना कि आप यह वायदा मुझसे कर रही हैं।"

रअना बड़ी समझदार ठहरी। कहने लगी—"मालूम होता है कि बड़ी गुस्सा दिलाने वाली बात है; मगर मैं तो कह चुकी हूँ कि जो आपकी राय है वही करूँगी।"

अब हमने तफ़सील से कहना शुरू किया—"आपको क्या मालूम कि इन हज़रत ने मुझे कैसे तंग किया मेरे कमरे में रहकर।"

रअना ने बात काटकर कहा—"यह तो ख़ैर आपकी सज़ा थी। और बनिये भले मानस।"

हमने अपनी करुण कहानी जारी रखी—"दिन-भर हम लोगों की अनुपस्थिति में यह व्यक्ति सोता रहता। रात को जब मैं सोना चाहता था तो यह मुझे अपनी खुराफ़ात सुनाने के लिए जगाता था। इसी सिलसिले में इन हज़रत ने कल रात अपने को बिलकुल बेनक़ाब कर दिया।"

और यह कहकर हमने सब बातें ज्यों-की-त्यों दोहरा दीं। हम देख रहे थे कि उसका एक रंग आता है और एक जाता है। मगर वह शांत भाव से सारी कहानी सुनती रही। यहाँ तक कि पिंडी के रेलवे स्टेशन पर जो बातें हुई थीं, वे भी जब उसे सुना दीं तो सचमुच उसकी आँखों में आँसू डबडबा आये और हमें कहना पड़ा—"यह क्या वाहियात हरक़त है। एक चुग़द आदमी की बात का आप असर ले रही हैं।"

रश्ना ने मुश्किल से अपने ऊपर क़ाबू हासिल करके कहा—"आप उसे चुग़द कहते हैं, जो कमीना अब भी यह कहे कि आज चाहूँ तो लौंडिया को ग़ायब कर दूँ। उसको आप चुग़द कहते हैं? अच्छा, आप अब भी मेरा एक कहना मान लें।"

हमने कहा—"हुक्म दीजिये।"

रश्ना ने सविनय कहा—"अभी उसे पेशावर की गाड़ी न मिली होगी, ज़रा आप जल्दी स्टेशन तक चलिये।"

हमने हँसकर कहा—"क्या आप उसे मुर्गी बनायेंगी? मैंने तो यह बात तुम्हें इसलिए सुना दी है कि दरअसल हम दोनों को इन हज़रत की तरफ़ से काफ़ी होशियार रहने की ज़रूरत है। मेरा अन्दाजा यह है कि यह आदमी सिर्फ़ बेवकूफ़ नहीं..."

रश्ना ने बात काटकर कहा—"बल्कि बहुत ही खतरनाक भी है। और अगर मुझे रात ही पता चल जाता कि वह आपसे इस हद तक बातें कर चुका है तो कभी मैं आपको न सोने देती उस कमरे में।"

हमने कहा—"ख़ैर, सोया तो मैं भी नहीं। दो-ढाई बजे तक तो वह आदमी दिमाग़ चाटता रहा। इसके बाद मैं इस उधेड़बुन में रहा कि इस जानवर से आख़िर कैसे निपटा जाये।"

रश्ना ने कहा—"अच्छा इसमें आपकी क्या राय है कि यह बातें डैडी और मम्मी को बता दी जायें?"

हमने कहा—"ख़ाहमख़ाह बात बढ़ेगी।"

रश्ना ने कहा—"देखिये ना बात तो किसी-न-किसी दिन बढ़नी ही है। जब एक आदमी की नीयत डैडी के पैसे के लिए भी ख़राब है और जब वह आदमी गुंडागर्दी पर भी उतरने को तैयार है, तो ज़रूरत इस बात की है कि

ठीक वक्त पर हम अपने बुज़ुर्गों तक यह बात पहुँचा दें और खुद अपनी ज़िम्मेदारी से छुट जायें।"

हमने गम्भीरता में थोड़ी चंचलता मिलाकर कहा—"एक बात कहूँ अगर आप शरमा न जायें ?"

रअना ने बहुत बढ़िया बात कही—"मुझसे तो ज़्यादा आप खुद शर्मीले हैं।"

हमने कहा—"मालूम नहीं मेरा यह उसूल सही है या ग़लत और मज़हबी ख़याल से तो ज़ाहिर ही है कि ग़लत ही है कि मैं एक तो किसी बेवा से शादी नहीं कर सकता। दूसरे, किसी ऐसी लड़की से शादी नहीं कर सकता जिसकी शादी पहले कहीं ठहर चुकी हो। वजह इसकी सिर्फ़ यह है कि औरत जिन्दगी में सिर्फ़ एक बार मुहब्बत करती है। इसके बाद या तो वह अपने-आपको धोखा देती है या उसे धोखा देती है जिसे अपनी मुहब्बत का यक़ीन दिलाये। बेवा ज़ाहिर है कि अपने पहले शौहर की मुहब्बत और उससे अपनी मुहब्बत भुला नहीं सकती। इसी तरह जब एक लड़की की मँगनी किसीसे हो जाती है तो वह उस आदमी को अपने दिल में बिठा लेती है। इसलिए कि उसे यक़ीन होता है कि अब उसीकी बनकर रहना है। वह उसीके ख़याल में अपने को गुम रखती है; मगर जब उसे मालूम होता है कि उसकी शादी किसी और से हो रही है तो वह ऊपर से भले ही चुप रहती है, मगर उसका दिल इसके ख़िलाफ़ होता है, इसलिए उसे अपने ही दिल से काफ़ी झगड़ना पड़ता है। इस नए उम्मीदवार को अपनाने के लिए शादी के बाद वह समझती है कि मैं कामयाब हो गई; मगर उसकी पहली मुहब्बत इस तरह दिल के अन्दर छुपी रहती है कि जिन्दगी-भर कभी-न-कभी किसी-न-किसी खिड़की के सामने आती रहती है।"

रअना ने बड़ी गम्भीरता से यहाँ तक सुनकर कहा—"तौबा है! आपने तो अच्छी-ख़ासी फ़िलासफ़ी झाड़ना शुरू कर दी। हालांकि इस तस्वीर का दूसरा पहलू यह है कि पहली मुहब्बत की तरह पहली नफ़रत भी बड़ी गहरी होती है, बल्कि मेरा ख़याल है कि मुहब्बत से ज़्यादा गहरी होती है। उस आदमी के अलावा मैंने कभी किसीसे नफ़रत नहीं की और मालूम नहीं क्यों मुझे अपनी इस नफ़रत पर फ़ख्र है। मुझे कुछ ऐसा महसूस होता है कि जैसे

मैं उससे नफ़रत न करती तो मुझमें कोई कमी रह जाती।"

इस तरफ़ से सन्तुष्ट होकर जरा घटिया बातें करने को जी चाहने लगा—"अच्छा, तो आपके दिल में अभी तक किसी भले आदमी ने जगह नहीं पाई है ?"

रअना ने बड़ी गम्भीरता से कहा—"अगर मैं कह दूँ कि 'नहीं' तो यह झूठ होगा।"

हमने कहा—"नहीं; झूठ की शर्त नहीं है, मैं तो सचमुच पूछ रहा हूँ।"

रअना ने कहा—"जो कुछ सच था वह मैं कह चुकी हूँ।"

हमने सिर होते हुए कहा—"साहिबा, मैं इतना समझदार नहीं हूँ कि बारीक़ इशारों को समझ सकूँ। मैं बिलकुल नहीं समझा कि आप क्या कह चुकी हैं ?"

रअना ने अब वाक़ई शरमाने की कोशिश करते हुए कहा—"अच्छा, अब स्टार्ट कीजिये गाड़ी। समझ-बूझकर बेकार बातें करने की न जाने क्या सूझी है ?"

हमने कहा—"अब तो कॉफ़ी पीकर चलेंगे। निकालिए अपना थरमस और जवाब दीजिए मेरी बात का।"

रअना ने विचित्र दृष्टि से देखकर कहा—"यह क्या बेकार की ज़िद है। आप ऐसी उथली बातें क्यों कर रहे हैं आज ?"

हमने स्वीकार किया—"भई बात यह है कि—

"बनता नहीं है बादा उसे सागर कहे बग़ैर"

रअना ने सैंड विचिज़ का डिब्बा खोलकर सामने रख दिया और कॉफ़ी की प्याली बढ़ाते हुए कहा—"अपनी कार में यह आइना आप ख़ूब रखते हैं।"

हमने कहा—"ख़ैर, बात न टालिये, यह बताइये कि आपके दिल पर किसीका राज कभी हुआ या नहीं ?"

रअना ने कार का आइना हमारे सामने फेरते हुए कहा—"देख लीजिये इन राज करने वाले साहब को और ख़त्म कीजिये ये बच्चों-जैसी बातें।"

आज से ज़्यादा स्पष्ट बातें कभी नहीं हुई थीं; मगर आज से ज़्यादा आदर भी रअना का कभी न हुआ था। हम प्रसन्न अवश्य थे; मगर साथ-ही-साथ सतर्क भी कि यह प्रसन्नता सीमा के बाहर न होने पाये।

: १७ :

घर पहुँचकर हमने देखा कि सब सकुशल हैं। हद तो यह है कि वालिद साहब और वालिदा साहिबा अपनी कोठी के बाग़ में टहल रहे थे। यह देखकर हमें वाक़ई प्रसन्नता हुई। इस प्रसन्नता के कई कारण थे, एक तो यह कि इन दोनों में कितने अच्छे सम्बन्ध स्थापित हो रहे हैं। दूसरे, वालिदा साहिबा वाक़ई इतनी बदल चुकी थीं कि अब अगर उनके बारे में क़सम खाकर भी यह कहें कि यह असल जाति की नाइन है तो किसीको विश्वास नहीं आ सकता। निहायत सलीके से गरारा पहने बड़े ही शिक्षित ढंग के बाल बनाये बड़े रख-रखाव से वह इस समय बाग़ में मौजूद थीं और वाक़ई नवाब अज़मतुल्ला ख़ाँ की बेगम नज़र आ रही थीं। वालिदा साहिबा की यह प्रगति तो ख़ैर हम पहले ही से देख रहे थे; मगर हमारी इस कुछ दिन की अनुपस्थिति में वे घर के बाहर भी आ गई थीं। हमें देखकर वालिद साहब एकदम जैसे चौंक पड़े—"अरे तुम!······तुम इतनी जल्दी कैसे आ गए? मैं तो समझ रहा था कि अभी कम-से-कम एक हफ़्ता और ग़ायब रहोगे।"

वालिदा साहिबा ने हमें ध्यान से देखकर वालिद साहब से कहा—"और आप तो कहते थे कि सुर्ख़ होकर आयेगा पहाड़ से। यह तो ज्यों-का-त्यों लौट कर आ गए।"

हमने कहा—"कुछ दिन और ठहरते तो शायद सुर्ख़ भी हो जाते; मगर यहाँ से पहुँच गया वह कोफ़्ता।"

वालिद साहब ने चकित होकर पूछा—"कोफ़्ता? कोफ़्ता कैसा?"

हमने कहा—"जी, वह शिब्बू मियाँ, जो मुस्तक़िल क़ोफ़्ता हैं। उन हज़रत की वजह से भागना ही पड़ा वहाँ से।"

वालिद साहब ने हँसकर कहा—"अच्छा, वह! भई, वह तो अजीब बेहूदा आदमी निकला। तुम दोनों के जाने के बाद उसने मिस पाल से पैंग बढ़ाना

शुरू किए और गधा इस पाए का निकला वह कि एक दिन मिस पाल से इश्क़ बघारने बैठ गया। उसने ज़मीन-आसमान एक कर दिया और वह आफ़त मचाई कि ख़ान बहादुर साहब तक को ख़बर हो गई। चुनाचे अब जो वह हज़रत ग़ायब हुए हैं तो तुम्हारे तार से पता चला है कि वह मरी में मर रहे हैं।"

ठीक इसी समय मिस पाल ने हमें देखते ही हल्लो का नारा बुलन्द किया और दौड़ती हुई हमारे करीब पहुँचीं तो हमने उनको बधाई दी—"मुबारक हो मिस पाल ! सुना है, आपने शिब्बू मियाँ को शहीद किया।"

मिस पाल का चेहरा एकदम सुर्ख़ हो गया। बोली—"भाग ही गया वह ईडियट, वरना मैं मज़ा तो चखा देती। मगर आप इतनी जल्दी कैसे आ गये ?"

हमने कहा—"शिब्बू मियाँ ने भेजा है ताकि मैं आपको मनाने की कोशिश करूँ।"

मिस पाल ने मुँह बनाकर कहा—"लानत भेजिए उनपर। वाक़ई आप इतनी जल्दी लौट क्यों आए ?"

हमने कहा—"आपने अपनी बला हम लोगों की तरफ़ जो उछाल दी थी। वह हज़रत यहाँ से सीधे पहुँचे मरी और हमको मजबूर कर दिया कि भागो यहाँ से।"

वालिद साहब ने एकदम उच्च स्वर से कहा—"तश बन्दा नवाज़ !"

और वालिदा साहिबा बावजूद इतना बदल जाने के ख़ान साहब को आता देखकर लपककर बरामदे में से होती हुई कोठी के एक दरवाज़े में ग़ायब हो गईं। ख़ान बहादुर साहब रअना के साथ पहुँच चुके थे और बेगम साहिबा धीरे-धीरे तशरीफ़ ला रही थीं। ख़ान बहादुर साहब ने आते ही मिस पाल को देखकर हमसे कहा—"अपनी मिस पाल की हरक़त सुनी आपने फ़रहत मियाँ ?"

मिस पाल ने ठिठककर कहा—"लीजिए, यह भी मेरी ही हरक़त हुई।"

ख़ान बहादुर साहब ने कहा—"मैंने तो शुक्र किया था कि मिस पाल

के बहाने से सही, मगर वह यहाँ से दफ़ा तो हुआ; मगर फिर तुम्हारा तार आया कि वह हज़रत तुम दोनों के लिए मुसीबत बन गये।"

रअना ने कहा—"डैडी, हम दोनों को भागना पड़ा महज़ शिब्बू भाई की वजह से, वरना कुछ दिन और भी रहते। सचमुच मरी जाना बेकार ही हो गया।"

ख़ान बहादुर साहब ने बड़े दुलार से कहा—"तुम तो हो बेवक़ूफ़ बेटी, निकाल दिया होता वहाँ से। तुमसे यह किसने कहा था कि उसकी मेहमान-दारी शुरू कर दो। सुना है कि फ़रहत मियाँ, तुम्हें इस पगले ने काफ़ी परेशान किया।"

हमने रअना को देखते हुए कहा—"वह बेचारे किसीको परेशान करें या न करें—"

ख़ान बहादुर साहब ने बात काटकर कहा—"मगर आदमी ख़ुद-बख़ुद परेशान हो जाता है उनसे।"

इसी बीच में बेगम साहिबा भी धरती को समतल बनाती हुई आ पहुँचीं। वालिद साहब ने उनका स्वागत किया और मिस पाल ने हमारे सबके लिए तुरन्त गार्डन चेयर्स की व्यवस्था कर दी, जिन पर सब लोग घेरा बाँधकर बैठ गये तो बेगम साहिबा ने फूली हुई साँसों को रोककर मुझसे कहा—"मिस पाल का क़िस्सा सुन चुके होगे तुम ?"

मिस पाल ने तुनककर कहा—"बेगम साहिबा, मेरा क़िस्सा क्यों होता वह ? उन्हीं मजनू और फ़रहाद का किस्सा कहिये न।"

ख़ान बहादुर साहब ने कहा—"मैं पहले ही समझ गया था कि नामाक़ूल तुम दोनों को वहाँ न ठहरने देगा। मगर मैं मिस पाल का शुक्रगुज़ार हूँ कि इनकी वजह से कम-से-कम यह तो हुआ कि वह हज़रत अब इधर का रुख़ तो न करेंगे।"

बेगम साहिबा बोलीं—"जी और क्या, ऐसे ही तो ग़ैरतदार हैं वह ! देख लेना थोड़े दिनों में फिर चिकना घड़ा बने तशरीफ़ ले आयेंगे।"

ख़ान बहादुर साहब ने बड़े जोश से कहा—"जी नहीं, अब मेरे घर में उनके लिए कोई जगह नहीं। मैंने उनके अब्बा जान को साफ़ लिख दिया है

कि साहबजादे को लगाम देकर अपने ही पास रखें। वह इधर का रुख़ फिर कभी न करे। मैं तो यों भी उनके आने के ख़िलाफ़ था; मगर यह बहाना मिस पाल की वजह से मिल गया।"

बेगम साहिबा ने फिर कहा—"मैं कहती हूँ बड़ा बोल न बोलो, अभी तो यह जोशो-ख़रोश है और अगर वह आ गया तो फिर हम सब मजबूर हो जायेंगे। भला किसी घर आये को निकाला कैसे जा सकता है? मगर मैं इतना बताए देती हूँ कि अब मैं रअना को उनसे कभी न मिलने दूँगी।"

रअना ने इस बात से विचित्र लाभ उठाया, और सबके सामने हमें सम्बोधित करते हुए कहा—"यह न समझियेगा कि मैंने कुछ किया है। यह तो सिर्फ़ मिस पाल वाले क़िस्से का नतीजा है।"

हमने बात टालने के लिए कहा—"यह न मालूम हुआ कि मिस पाल से इन हज़रत ने क्या कहा था?"

ख़ान बहादुर साहब ने बड़े मज़े से कहा—"और क्या कहना था। पहले मिस पाल के सामने खंजर रखा होगा—

फिर कलेजा रख दिया, दिल रख दिया, सर रख दिया।"

मिस पाल ने कहा—"यह क़साई की दुकान वह मेरे सामने खोलते तो फिर न कलेजा वापस मिलता, न दिल, न सिर।"

ख़ान बहादुर साहब ने रअना से कहा—"हाँ, तो तुम क्या कह रही थीं बेटी? यह तो ख़ैर ज़ाहिर ही है कि वहाँ भी वह मरदूद अपनी हरक़तों से बाज़ न आया होगा। मगर बात क्या हुई वहाँ?"

रअना ने हमारी ओर पलटकर कहा—"इन्हींसे पूछिये, यह मुझसे वायदा ले चुके हैं कि मैं उनकी कोई बदतमीज़ी किसीको न बताऊँगी।"

हमने कहा—"बात तो ख़ैर कोई ख़ास नहीं थी, अलबत्ता वह हैं ही कुछ अजीब चीज़।"

बेगम साहिबा ने अपनी मोटी-सी गरदन हिलाते हुए कहा—"नहीं, नहीं, फ़रहत मियाँ। बात गोल न करो, मैं कहती हूँ ज़रूर कोई ख़ास बात हुई है।"

ख़ान बहादुर साहब ने कहा—"भई, इस नामाक़ूल की हर बात तुम्हें चाहिए कि मुझे बता दो। और अगर तुमने उसकी कोई बात मुझसे छुपाई तो

इसका मतलब यह होगा कि तुम एक साँप को पालने का मौक़ा दे रहे हो।"

रअना ने कहा—"यही मैंने भी फ़रहत साहब को समझाया है।"

वालिद साहब ने भी यही कहा—"वाक़ई तुमको चाहिये कि तुम सारी बातें भाई साहब के सामने दोहरा दो ताकि वह इन साहबज़ादे के बारे में किसी सही नतीजे पर पहुँच सकें।"

ख़ान बहादुर साहब ने वालिद साहब से कहा—"भाई जान, मैं तो मुद्दत से सही नतीजे पर पहुँच चुका हूँ। सब उसे महज़ बेवक़ूफ़ समझते हैं; मगर मैं उसे जरायम पेशा भी समझता हूँ। मुझे तो वह छटा हुआ लोफ़र नज़र आता है। हाँ बेटे, तो तुम मुझे अन्धेरे में न रखो। मैं जानता हूँ कि तुम्हारी अपनी शराफ़त का तक़ाज़ा यही होगा कि तुम उसके ऐब छिपाओ, मगर मैं हर बात से वाक़िफ़ होना चाहता हूँ।"

अब हमारे लिए इसके अलावा और कोई उपाय न था कि शिब्बू मियाँ से जो बातें हुई थीं वह तनिक सावधानी के साथ सबके सामने दोहरा दी जायें। मगर तौबा कीजिये। रअना तहिया को मौक़ा देने वाली कब थी। जब हम पूरा क़िस्सा सुना चुके तो वह बोली—"और वह उल्लू की ज़बान जो मम्मी ने भूनी थी......?"

ख़ान बहादुर साहब ने आश्चर्य से कहा—"उल्लू की ज़बान? यह क्या बात है?"

और हमको विवश होकर उल्लू की जबान का क़िस्सा भी सुनाना पड़ा। अभी यह किस्सा खत्म भी न होने पाया था कि रअना ने कहा—"अरे, वह लौंडिया को ग़ायब करने की बात?"

नतीजा यह हुआ कि वह बात भी बतानी पड़ी, जिसे सुनते ही ख़ान बहादुर साहब तिलमिलाकर उठ खड़े हुए—"गुंडा; बदमाश! मेरे सामने आ जाये तो गोली से उड़ा दूँ।"

वालिद साहब ने हैरत से कहा—"साहब, अजीब बेहूदा आदमी निकला यह तो।"

बेगम साहिबा ने दाँत पीसकर कहा—"यह इन्हींकी ज़िम्मेदारी है भाई साहब, जो इस वक़्त बैठे तिलमिला रहे हैं। हमेशा इन्होंने इस मोए लफंगे

आवारागर्द को सिर चढ़ाया। इस बार भी कुछ नहीं, हज़ार-डेढ़-हज़ार के कपड़े ही बनवा दिये।"

वालिद साहब ने कहा—"नहीं साहब, यह तो हद है! और इसका मतलब यह है कि यह आदमी मुस्तक़िल ख़तरा है।"

ख़ान बहादुर साहब ने फ़रमाया—"अजी लाहौल विला कुव्वत! ख़तरा तो खैर क्या होता। मगर मैं उसे ऐसा नंगे ख़ानदान का भी न समझता था। मैं आज ही उसके वालिद को तफ़सीली ख़त लिखता हूँ।"

बेगम साहिबा ने कहा—"यह उल्लू की ज़बान जो मैंने तुम्हें खिलाई है, यह चर्चे तो उनके घर होते ही रहते हैं। इस तरह की बातें मैं पहले भी सुन चुकी हूँ। असल में तो काँटे की तरह खटकती हूँ मैं।"

ख़ान बहादुर साहब ने बड़ी गम्भीरता से कहा—"भई, यह तो हर बीवी को हक़ है कि वह अपने शौहर को कब्ज़े में रखे। उल्लू की ज़बान खिलाई तो अच्छा किया, किसीके बाप का क्या इज़ारा है। मगर और जो बेहूदा बातें की हैं उस गधे ने। मैं अभी लिखता हूँ उसके बाप को ख़त......"

और ख़ान बहादुर साहब वाक़ई जोश में उठकर अपनी कोठी की ओर चले गये।

: १८ :

हम टेनिस खेलने जा रहे थे, कपड़े बदल चुके थे। रैंकेट उठा रहे थे कि मिस पाल ने कमरे में दाखिल होते हुए कहा—"मिठाई खिलवायें तो एक बात बताऊँ।"

हमने कहा—"क्या हुआ? शिब्बू मियाँ का कोई मोहब्बत-भरा ख़त तो नहीं आ गया?"

मिस पाल ने तुनककर कहा—"चूल्हे में गये शिब्बू मियाँ और भाड़ में गया उनका मुहब्बत-भरा ख़त? मैं तो आपके लिए खुशख़बरी लाई हूँ और आप मुझे जला रहे हैं।

हमने कहा—"अच्छा, चलिए, खिला देंगे मिठाई भी। अब बताइये क्या बात है?"

मिस पाल ने वाक़ई खिलकर कहा—"बस, अब तो आपकी होने वाली है।"

हमने कहा—"पहेली में बात न कहिये, कौन मेरी होने वाली है?"

मिस पाल ने कहा—"जिन्हें होना चाहिये, साहबज़ादी रअना बेगम।··· अभी नवाब साहब से ख़ान बहादुर साहब कह रहे थे कि आपको पूरा अख़्त्यार है जब चाहें इस फ़र्ज़ से छुटकारा पा लें। मेरे यहाँ पूरी तैयारी हो चुकी है और मुझे कोई इन्तज़ाम नहीं करना है। इस पर नवाब साहब ने जवाब दिया कि बस ज़रूरी मशविरे कर लो। इसके बाद पहले तो बड़ी सादगी से निकाह हो जाये, ताकि शादी के वक्त शरारत करने वालों को शरारत का मौक़ा न मिले।"

हमने कहा—"अच्छा साहब! आपकी मिठाई तो पक्की हो गई; मगर मिस पाल, अल्लाह जाने रअना भी इस रिश्ते को पसन्द करती है या नहीं।"

मिस पाल ने बड़ी तीखी चितवनों से कहा—"अल्लाह जानता है,जब आप ऐसी बात करते हैं तो सख्त गुस्सा आता है। आप आखिर मुझे इतना बेवक़ूफ़ क्यों समझते हैं। मैं आप जैसी आला दिमाग़ न सही, मगर सिर में सिर्फ़ जूट और पटसन के खेत ही तो नहीं थोड़ी बहुत अक़्ल भी है।"

हमने कहा—"अच्छा तो इसी थोड़ी-बहुत अक़्ल से काम लेकर बताइए, क्या रअ्ना इस रिश्ते को पसन्द करेगी ?"

मिस पाल ने कमर पर हाथ रखकर बड़े तीखे अन्दाज़ से कहा—"मियाँ-बीवी तो पहले ही राजी हो चुके हैं, क़ाज़ी तो ख़ाह-मख़ाह आ रहा है। आप क्यों मेरी ज़बान खुलवा रहे हैं। न जाने कैसे-कैसे वायदे हो चुके होंगे, न जाने कैसे-कैसे इश्क़ बिखर चुके होंगे। अब चले हैं आप मुझसे पूछने कि वह इस रिश्ते को पसन्द करेंगी ?"

हमने कहा—"अगर आप यक़ीन करें मिस पाल तो मैं बताऊँ कि मेरे और रअ्ना के दरम्यान न कोई इश्क़ बिखरा है, न कोई वायदा हुआ है। इसमें शक नहीं कि मैं उसे बहुत पसन्द करता हूँ, मगर चूँकि पसन्द करने से ज़्यादा उसकी इज़्ज़त करता हूँ इसलिए मैंने उसकी बेइज़्ज़ती कभी नहीं की कि इश्क़ बिखरने का बाज़ारीपन करता।"

मिस पाल ने बड़े आश्चर्य से कहा—"लो और सुनो, यह बाज़ारीपन हो गया। आप किस क़दर संजीदगी से मज़ाक़ करते हैं !"

हमने वाक़ई गम्भीरता से कहा—"मैं आपसे सच कहता हूँ। मैं मज़ाक़ बिलकुल नहीं कर रहा हूँ। मैंने सौ बातों की एक बात कह दी है, मैं उसकी इज़्ज़त करता हूँ।"

मिस पाल ने कुछ न समझते हुए कहा—"न जाने आप क्या कह रहे हैं ? यह जो दिन-रात का साथ उठना-बैठना है, यह जो तनहाइयाँ हासिल हैं, यह जो पहाड़ों पर आप उन्हें लिए फिरते हैं और यह जो सिनेमा के अन्धेरे आपको नसीब होते रहते हैं, इनके बाद आपकी ये बातें मेरी समझ में तो आ नहीं सकतीं।"

हमने कहा···"आपकी समझ में ये बातें इसलिए नहीं आ रही हैं कि आप उचक्केपन को शायद मुहब्बत समझती हैं। न मैं इतना गिरा हुआ था

और न रअना को इस क़दर घटिया समझता था कि इस क़िस्म की बातें करता। मैंने इन तमाम तनहाइयों से और इस एक साथ घूमने से सिर्फ़ एक काम लिया है कि रअना के दिल में अपना विश्वास पैदा करूँ और उसके विश्वास को मजबूत बनाऊँ।"

मिस पाल ने एकदम अंग्रेज़ बनकर कहा''''"यह तो कुछ-बहुत ऊँची बातें हैं ! मैं तो इसी पर हैरान थी कि मरी जाकर आपने बजाय एक के होटल के दो कमरे क्यों लिये ?"

हमने कहा''''"देखिये मिस पाल, यह बात भी गिरह में बाँध लीजिए, कि जो आदमी किसी लड़की से शादी करना चाहता है, अगर शादी से पहले ही अपने जज़बात का शिकार होकर उसके जज़बात से खेलना शुरू कर देता है तो मेरे ख़याल से उससे ज़्यादा नीच और कोई नहीं हो सकता। और इसका मतलब अलावा इसके और कुछ नहीं कि वह जिस लड़की से शादी कर रहा है पहले उसकी असमत बिगाड़ रहा है इसके बाद एक ऐसी लड़की को बीवी बनाकर फ़ख्र करता है। हालाँकि यह उसके लिए डूब मरने की बात है।"

मिस पाल कुछ खोये-खोये अन्दाज़ से कुर्सी पर बैठकर बोलीं''''"यह आपने बहुत क़ीमती बात कही है, और इसका एक पहलू यह भी है कि ऐसी बीवी की इज़्ज़त शौहर कभी नहीं कर सकता, जो शादी से पहले भी उसे हासिल हो चुकी हो।"

हमने कहा''''"हाँ, अब आप मेरी बात तक पहुँच गई हैं; अब आप ही बतायें, क्या मैं झूठ कह रहा हूँ ?"

मिस पाल ने कहा''''"मगर आमतौर पर होता इसका उल्टा है।"

हमने कहा—"चुनाचे आमतौर पर मुहब्बत जैसी मीठी चीज़ कड़वी साबित होती है। आपने सुना होगा कि मुहब्बत की शादियों का अन्जाम ज़्यादातर नाख़ुशगवार होता है। इसकी वजह सिर्फ़ यही है कि शादी से पहले ही तमाम मिठास ख़त्म हो जाती है और घरेलू जिम्मेदारियों का कड़वापन बाक़ी रह जाता है। जबकि मुहब्बत के सर्द साँस और गर्म अश्क़ के बजाय नून-तेल-लकड़ी की फ़िक्र अपनी हक़ीक़तों को बेनक़ाब करके सामने आ जाता है।"

मिस पाल ने कहा···"तौबा ! तौबा ! इतना भी आदमी समझदार न हो ! मुझे आपकी ये बातें सुनकर इस वक़्त अपनी सहेली मिसेज़ इख़लाक़ याद आ रही हैं, जो ख़ुद बेहद समझदार थीं। आप जहाँ इस क़िस्म की बातें उन्होंने सुनीं, और उन्हें दहशत हुई। वह हमेशा यह कहा करती थीं कि अगर आदमी ऐसा ही समझदार बनकर रह जाए तो यह दुनिया भी जिसकी रौनक़ दरअसल भूलों ही की वजह से है, इतनी बाक़ायदा बनकर रह जाएगी, जैसे कोई बैंक हो, जहाँ अपने दस्तख़त तक बदलने का अख़्त्यार नहीं होता ! आपसे यह ख़ुश्क समझदारी की बातें सुनकर मुझे अफ़सोस ही हुआ है। मैं आपको एक अल्हड़, मनचला और वेफ़िक्रा समझे बैठी थी। आज मालूम हुआ कि जिसे मैं दीवाना समझ रही थी, वह असल में मौलाना है।"

हमने दाद दी—"बात आपने अपनी कही है ! मैं महसूस करता हूँ कि जो रौनक़ खिलिदड़पन में है, वह इस संजीदगी में नहीं है। मगर मिस पाल, मैं दुनिया के चाहे हर काम में खिलिन्दड़ा नज़र आऊँ, मुहब्बत को खेल नहीं बना सकता।"

मिस पाल ने बड़े अफ़सोस से कहा—"इसका मतलब यह हुआ कि क़िस्मत ने जितनी तनहाइयाँ आपको दी थीं, एक साथ रहने के जितने मौक़े आपको मिले थे, वे सब आपने खो दिये।"

हमने कहा—"मिस पाल, बात यह है कि मेरे असूल की तो आप क़ायल हो चुकी हैं। मगर यह असूल चूँकि आपके निजी तजुर्बा के ख़िलाफ़ हैं, इसलिए हठधर्मी फ़रमा रही हैं।"

मिस पाल ने चौंककर कहा—"मेरे निजी तजुर्बे कौनसे हैं भला ?"

हमने शरारत से कहा—"अपने निजी तजुर्बों को मुझसे ज्यादा आप ख़ुद जानती होंगी।"

मिस पाल इस बात पर शायद बुरा मानने की कोशिश कर रही थीं; मगर उन्हें वालिद साहब के एकाएक आ जाने से इसका अवसर न मिल सका। वालिद साहब को देखकर एकदम घबरा उठीं और बोलीं—"नवाब साहब, मैंने यह ख़ुश-ख़बरी साहबज़ादे साहब को पहले ही पहुँचा दी है।"

वालिद साहब ने कहा—"आपका शुक्रिया कि आपने मुझे इस ख़बर पहुँचाने की तकलीफ़ से बचा लिया। बहरहाल, अगर आप इजाज़त दें, तो मैं इनसे कुछ ख़ास बातें कर लूँ। और हाँ, ये बातें बेगम साहिबा तक न पहुँचें, तो मैं कर लूँ इनसे बातें ?"

मिस पाल ने उठकर जाते हुए कहा—"ज़रूर, ज़रूर ! मुझे तो अब खुद जाना था। बेगम साहिबा को हवाख़ोरी के लिए ले जाना है।"

मिस पाल के जाने के बाद इतमीनान से कहा—"बहरहाल तुम्हें यह तो ख़बर हो ही गई कि आज मेरे और ख़ान बहादुर साहब के दरम्यान सब बातें तय हो गईं। मगर मैंने उन्हें मशविरा दिया है कि पहले निहायत ख़ामोशी और सादगी के साथ निकाह कर दें। इसके बाद शादी में जो अरमान चाहें पूरे करें। बात असल में यह है कि उन्हें तो मैंने सिर्फ़ यह समझाया है कि शिब्बू मियाँ और उसके माँ-बाप की तरफ़ से शरारत हो सकती है; लेकिन उन्हें ख़बर ही उस वक़्त हो जब निकाह हो जाय। मगर मैं अपने यहाँ के हालात देखते हुए भी यह ज़रूरी समझता हूँ कि पहले निकाह हो जाये।"

हमने कहा—"हमारे यहाँ के हालात क्या हैं ?"

वालिद साहब ने धीरे से कहा—"साहबजादे हैं आप, बेटा यह कभी न समझना कि तुम्हारी माँ, जो इतनी बदल चुकी हैं, अपनी असलियत ही भूल गई होंगी। उनकी ज़िन्दगी-भर की तमन्ना यह है कि नज्जो को बहू बनाकर लायें। अगर पहले से उन्हें ख़बर भी हो गई, तो वह इन तमाम बातों को लाकर रख देंगी और एक ख़ालिस नाइन बनकर सामने आ जायेंगी।"

हमने कहा—"तो यह मतलब क्या है आपका। गोया निकाह उनसे भी छिपाया जायेगा ?"

वालिद साहब ने कहा—"यही तो सलाह लेना चाहता हूँ कि आख़िर सूरत क्या हो ? बात यह है कि बुरा वक़्त आते देर नहीं लगती। अल्लाह जाने कितने लोग बराबर उधर-से-इधर आ रहे हैं। न जाने अपना कोई सम्बन्धी आ मरे—और सारा भाँडा फूट कर रह जाये। इसलिये ज़रूरी है कि जल्द-से-जल्द निकाह हो ही जाये।"

हमने कहा—"और अगर निकाह के बाद यह भाँडा फूटा तो ?"

"वालिद साहब ने कहा—"फिर क्या होगा ? फिर तो ख़ान बहादुर खुद अपनी इज़्ज़त के ख़याल से इस पर हर तरह से पर्दा डालेंगे। वह इतने वेवक़ूफ़ नहीं हैं कि लड़की का निकाह कर देने के बाद दुनिया-भर में यह कहते फिरें कि दामाद जाति का नाई है। अलबत्ता अगर निकाह से पहले उसे मालूम हो गया तो बना बनाया खेल बिगड़ जायगा।"

वालिद साहब हमसे तो यह कहकर चले गये कि तुम भी विचार करो; मगर हम विचार सिर्फ़ यह कर रहे थे कि कितनी नीचता की जा रही है एक भले आदमी के साथ, और कितना बड़ा धोखा दिया जा रहा है इस ग़रीब को।

: १९ :

आज रञ्जना की सहेलियाँ जमीला और सरवर भी आई हुई थीं। हमें क्या मालूम कि ख़ान बहादुर साहब के यहाँ आज क्या तूफ़ान आया है? हम नियमपूर्वक रञ्जना के कमरे में घुसते चले गये—और वहाँ कोश में 'उर्दू' का वह नारा बुलन्द हुआ है कि वापस लौटने की घबराहट में हमको चिलमन से उलझ जाना पड़ा। मगर इसी समय रञ्जना की आवाज़ आई—"भागे कहाँ? आ जाइये ना।"

और हम फिर जाते-जाते पलटे, तो रञ्जना ने आगे बढ़कर कहा—"इन दोनों से आप पहले ही मिल चुके हैं। अब यह भागना कैसा? यह वही जमीला है जिसने बैडमिंटन खेलते हुए आप पर न जाने कितनी आवाज़ें कसी थीं। और यह है—सरवर। इन्हें भी उस दिन आपने देखा होगा?"

हमने दोनों को सलाम करते हुए कहा—"जी हाँ, अब मैं पहचान गया दोनों को।"

जमीला ने कहा—"पहले सिर्फ़ शटल काक इधर-से-उधर उछल जाया करता था, उसके बदले आप ख़ुद······"

हमने वाक्य पूरा कर दिया—"उधर-से-इधर आने लगे।"

सरवर ने कहा—"हमें तो पहले ही यह उम्मीद थी कि यह पड़ौस रंग लाकर रहेगा।"

हमने कहा—"मगर कोई ख़ास रंग तो लाया नहीं।"

जमीला ने कहा—"जी हाँ, आमतौर पर यही होता है, जो हुआ है।"

रञ्जना ने डाँट दी—"क्या मतलब है तुम्हारा?"

जमीला ने आँखें मटकाकर कहा—"क्या ख़ूब! इसीको कहते हैं उल्टा चोर कोतवाल को डाँटे?"

रञ्जना ने भी बड़े अभिनय के साथ कहा—"हुज़ूर कोतवाल साहब, इस

चोर पर चोरी साबित करें !"

सरवर ने चोर-निगाहों से हमारी ओर देखकर कहा—

"चे दिलावर अस्त दुज्दे कि बक़्फ़ चिराग़ दारद ।"

(चोर कितना साहसी है कि वह अपनी हथेली पर चिराग़ रखे हुए है।)

हमने पूछा—"क्या मैं पूछ सकता हूँ कि इस अदालत में मेरी हैसियत चोर की है या·········?"

जमीला ने बात काटकर कहा—"जी नहीं, चिराग़ की ।"

हमने हाथ जोड़कर अर्ज़ किया—"मगर यह ख़ाकसार मुंशी चिराग़अली मरहूम अर्ज़ करता है कि आप दोनों अगर मज़ाक़ कर रही हैं तो दूसरी बात है। अगर यह बातें संजीदगी से हो रही हैं, तो मुझे अफ़सोस है कि आप सही नतीजे पर नहीं पहुँचीं ।"

रअना ने मुँह बनाकर कहा—"आप भी किन मसखरियों की बातों में आ गये। इन्हें आपके बारे में तो ख़ैर कुछ नहीं मालूम; मगर मेरा अन्दाज़ा इन्हें अच्छी तरह है ।"

सरवर ने बड़े गर्व से कहा—"साहब, यह तो अच्छी ज़बरदस्ती है कि आँखें जो-कुछ दिखा रही हैं, उसे ग़लत समझो। और जो अन्धा अन्दाज़ा कर बैठी हो उसीकी क़ायल रहो ।"

हमने एक कुर्सी की ओर बढ़ते हुए कहा—"यह बात चूँकि कुछ खोलकर कहने की है इसलिए अगर इजाज़त हो तो मैं ज़रा बैठ जाऊँ ।"

जमीला ने कहा—"मुलज़िम को इजाज़त तो नहीं होती; मगर ख़ैर आप तशरीफ़ रख सकते हैं ।"

हम सलाम करके बैठ गये और फिर बात शुरू की—"पहले तो मैं यह मालूम करना चाहता हूँ कि वह अन्दाज़ा, जो ग़लत साबित हुआ है वह क्या था ?"

सरवर ने मानो अकड़कर कहा—"सवाल यह है कि आपको क्यों बताया जाये ?"

हमने कहा—"अदालत को चाहिए कि सफ़ाई पेश करने का पूरा मौक़ा दे ।"

रअना ने कहा—"मगर चूँकि अदालत बेवक़ूफ़ है, इसलिए इस तरह की उम्मीद आपको अदालत से नहीं रखनी चाहिए।"

जमीला ने कहा—"मुसम्मात रअना बेगम! आप पर तौहीने अदालत का मुक़दमा चल सकता है। मगर चूँकि यह अदालत तौहीन प्रूफ़ है इसलिए अपने ऊपर मुक़दमा चलवाने की इस खुशी में आप नाकाम रही हैं।"

रअना ने कहा—"अदालत गई जहन्नुम में! मगर वाक़ई तुम्हारा क्या अन्दाज़ा था, जो ग़लत साबित हुआ?"

सरवर ने रअना की आँखों-में-आँखें डालकर कहा—"फिर कोशिश की तुमने चील के घोंसले में हाथ डालने की। भूल गई वह दिन जब बड़ी फ़लास-फर बनकर लैक्चर दिया करती थीं कि यह रोमांस सब ढकोसला है। अगर हो भी जाए, तो मुझे उसके मुहब्बत होने पर भी शक है।"

रअना ने कहा—"मैं अब भी इसकी क़ायल हूँ। और मेरे नजदीक इससे सस्ता छिछोरापन है और कोई हो ही नहीं सकता कि मुहब्बत जताई जाये, इश्क़ फ़रमाया जाए, आरज़ूओं की दास्तानें बनें...।"

हमने कहा—"मिर्ज़ा शौक़ की तरह मसनवी ज़हरे इश्क़ लिखी जाए।"

रअना ने कहा—"खुद न लिखी जा सके तो किसी और के इश्क़-भरे शेर खस की टट्टियों में भिगोकर लम्बी सर्द आहों के साथ सुनाए जायें—तौबा, तौबा—? किस क़दर बाज़ारी हरक़तें हैं!"

सरवर ने कहा—"अब अगर हमको हक़ होता तो पूछते कि आप दोनों में आखिर क्या बातें होती हैं!"

रअना ने कहा—"मौसम के बारे में बातें होती होंगी। माली, समाजी, इखलाक़ी, सियासी, अदबी और दुनिया-भर के मसलों पर बहसें होती होंगी।

जमीला ने कहा—"ज़बान तो खैर खूब चली है क़ैंची की तरह! मगर हम दोनों में वह बकवास कभी नहीं हुई, जो आपके नज़दीक एक नौजवान लड़के और एक नौजवान लड़की में होना ज़रूरी है।"

सरवर के कहा—"ऐ नौजवान लड़की, तूने बड़ी बूढ़ियों की वह कहावत ज़रूरी सुन होगी कि लड़की वह जो लड़कियों में खेले न कि लड़कों में जाकर डंड पेले।"

रअना ने कहा—"जी हाँ, यह उन बड़ी-बूढ़ियों की कहावत है जिनके दिमाग़ में वहम भरे थे। और कोई माक़ूल बात जिन्हें आती ही न थी।"

जमीला ने कहा—"मगर यह भी तुमने सुना होगा कि जहाँ नौजवान मर्द और एक नौजवान औरत होती है, वहाँ शैतान भी ज़रूर तशरीफ़ रखते हैं।"

रअना ने कहा—"शैतान खुद कभी नहीं आता, बुलाया जाता है। और अगर वह ऐटीकेट भी नहीं जानता कि बिना इजाज़त के नहीं आना चाहिये, तो हममें इतनी जुर्रत है कि हम इसे अपनी महफ़िल से निकाल दें।"

हमने कहा—"मगर मुझे तो ताज्जुब हो रहा है कि आपकी ये दोनों सहेलियाँ भी बिलकुल औरतों-जैसी बातें कर रही हैं।"

जमीला ने रअना से कहा—"भई इन्हें हम दोनों के जाने के बाद बता देना कि हम वाक़ई औरत ही थीं।"

हमने हँसकर कहा—"मेरा मतलब यह है कि आप दोनों को रअना की सहेली होने के नाते इतना समझदार तो होना ही चाहिये था कि आप औरतों की तरह एक औरत और एक मर्द के आपसी ताल्लुक़ का सिर्फ़ एक ही मतलब न समझतीं ...."

सरवर ने कहा—गोया रअना की सहेली होने के नाते हमें समझदार होना चाहिये था वरना अपने तौर पर हमें समझदार होने का भी हक़ नहीं ?

जमीला ने कहा—"मगर हमें इस समझदारी का मौक़ा ही नहीं मिल सका। यहाँ आते ही ख़ाला जान यानी इनकी वालिदा साहिबा से पहले ही मालूम हो गया कि जल्द ही आप दोनों एक-दूसरे के कुछ होने वाले हैं।"

सरवर बोली—"फिर यहाँ आकर बैठे ही थे कि जनाब तशरीफ़ ले आये। हमें क्या मालूम कि आप जो-कुछ कर रहे हैं, वह ठीक है। या तैयारियाँ जो कुछ हो रही हैं वे दुरुस्त हैं।"

शुक्र है कि इस अवसर पर बेगम साहिबा कमरे में पधारीं और इन दोनों बलाओं से हमें छुटकारा दिलाया। वह आते ही बोलीं—"लो फ़रहत मियाँ तो यहाँ मौजूद ही हैं। मैं तो यह कहने आ रही थी कि चाय पर इन्हें भी बुला लिया जाये। यह लड़कियाँ देखना चाहती हैं।"

जमीला ने कहा—"ख़ाला जान, अब आपको कम ही मौक़ा मिल सकेगा,

कि आप इन्हें बुलवाने का अरमान पूरा कर सकें। वह इंशा अल्लाह यहीं मौजूद मिलेंगे हर वक़्त ?"

सरवर बोली—"मगर ख़ाला जॉन, अब इन दोनों का पर्दा करा देना चाहिये।"

बेगम साहिबा ने कहा—"मैंने तो ख़ुद कहा था, मगर रअना के अब्बा कहते हैं कि यह सब वाहियात है। वह इसे चौंचला और फ़िज़ूल रस्म कहते हैं।"

जमीला ने शरारत से कहा—"मगर सुना है ख़ाला जान कि इस तरह दुलहा-दुलहिन पर नूर नहीं उतरता, ठीकरे बरसते रहते हैं।"

बेगम साहिबा ने कहा—"कुछ भी हो बेटा, मगर इस घर में तो उनके बाबा जान का राज है, मेरी सुनता ही कौन है। कहा जा रहा है कि पहले चुपचुपाते निकाह हो जाये, किसीको कानों-कान ख़बर न हो और उसके बाद शादी हो।"

सरवर ने कहा—"ख़ाला जान, हम दोनों को तो अब ख़बर हो गयी है मगर वह चुपचुपाता निकाह है कब ?"

बेगम साहिबा ने कहा—"आज ही कल में तारीख़ तय हो जायेगी। नवाब साहब से तो रअना के अब्बा ने कह दिया है कि वह जब चाहें, दो बोल पढ़वा दें। और सच पूछो तो हमें करना ही क्या है। जिस दिन से रअना ने होश सम्भाला है, हम बराबर तैयारियाँ कर रहे थे। दूसरे यह कि दहेज-वहेज़ तो हमें कुछ देना है नहीं।"

जमीला ने कहा—"क्या मतलब है आपका ख़ाला जान ? मेरी बहन क्या यों ही बैरंग भेज दी जायेगी।"

बेगम साहिबा ने कहा—"वह शालामार रोड वाली कोठी तो देखी है न तुम दोनों ने ! ऐ हाँ, देखी क्यों नहीं है ! वही जिसमें पिछले साल रअना की साल-गिरह की पार्टी हुई थी। इनके अब्बा ने इसी कोठी को ठीक कर दिया है। तमाम फरनीचर, क़ालीन, बरतन, कपड़े, घर-गिरस्ती का सामान, मोटर सभी कुछ इसमें है। वही इन्हें मिल रहा है दहेज़ में। आज ही उसमें रेडियोग्राम और रेफ्रिजरेटर लगवाना है।"

सरवर ने कहा—"और क्या चाहिये इन्हें ? इस पर भी आप कह रही थीं कि दहेज नहीं मिल रहा है कुछ !"

बेगम साहिबा ने कहा—"मेरा मतलब यह था कि अब हमें कोई इन्तज़ाम नहीं करना है।"

नौकरानी चाय और नाश्ते की ट्रे लिये हुए भीतर आई तो बेगम साहिबा ने उठते हुए कहा—"लो, अब तुम लोग चाय पी लो।"

हमने कहा—"आप भी यहीं पी लो ना।"

बेगम साहिबा ने कहा—"नहीं बेटा, मैं तो इस वक़्त बादाम का शीरा पीती हूँ। दूसरे तुम्हारे चाचा के लिए जब तक मैं न बनाऊँ चाय वह पीते ही नहीं किसी और के हाथ की। उनके बूढ़े चोंचलों के मारे और भी नाक में दम है।"

बेगम साहिबा के जाने के बाद हम और रुख़ना भी बोलने के क़ाबिल हो सके वरना ज़िक्र ही ऐसा छिड़ गया था कि बोलते क्या।

: २० :

ख़ान बहादुर साहब को यही प्रतीक्षा थी कि वालिद साहब उनको कौनसी तारीख़ देते हैं, कि एक और क़िस्सा शुरू हो गया। ख़ान बहादुर एक दिन सहसा हमारे यहाँ पधारे, और ठीक उसी समय जब संयोग से हम भी वालिद साहब की सेवा में उपस्थित थे। उन्होंने आकर वालिद साहब से कहा—"मुबारिक हो भाई साहब, इस कुत्ते ने अपना कमीनापन शुरू कर दिया है। देखिये, यह गुमनाम ख़त भेजा है मुझे, ज़रा पढ़कर देखिये।"

वालिद साहब ने हमसे कहा—"ज़रा तुम्हीं सुनाओ, मेरी ऐनक ग़ालिबन अन्दर है।"

ख़ान बहादुर साहब ने कहा—"हाँ, हाँ; तुम्हीं सुनाओ बेटा। तुम तो इस फ़साने के हीरो हो गोया।"

हमने ख़त लेकर पढ़ना शुरू किया'—अज रावलपिंडी।'

जनाब ख़ान बहादुर साहब किबला आदाब अर्ज़ !

इस ख़त के लिखने वाले से आप वाक़िफ नहीं हैं; और न ही यह खाकसार इसकी ज़रूरत समझता है कि जानकारी पैदा की जाये। बेहतर यही है कि मैं ख़ुद परदे में रहकर आपसे कुछ परदे की बातें करूँ ताकि ख़ुदा आपको समझने की अक़्ल दे और जिस आग से आप खेल रहे हैं उससे अपना दामन बचा सकें। बहरहाल मैं आपको ठीक समय पर बताकर अपना फ़र्ज़ पूरा कर रहा हूँ।

आपके पड़ौसी नवाब अज़मतउल्ला ख़ाँ साहब के साहबज़ादे फ़रहतउल्ला ख़ाँ जो आजकल आपकी निगाहों में चढ़े हुए हैं और आप-जैसे तजुर्बेकार शख़्स की आँखों में धूल झोंक रहे हैं। शायद इनसे आप अच्छी तरह वाक़िफ नहीं हैं, वरना अपनी साहबज़ादी के और इनके बेतक़ल्लुफ़ मेल-जोल को कभी मुनासिब न समझते। यह साहबज़ादे मेरे बड़े अच्छे दोस्त हैं और मैं इनकी

इन महफ़िलों में भी रह चुका हूँ। जिनमें इनकी मुस्तकिल रखैल शहनाज़ के घर पर जुआ खेला जाता है। जब मैं लाहौर से रावलपिंडी आया उस वक़्त मैं फ़रहत और शहनाज़ के ताल्लुक़ात अच्छे छोड़ कर आया था। मगर हाल ही में वह मुझे मरी में एक नई लड़की के साथ नज़र आये। जो शर्मनाक सीन मैंने देखे हैं, उनकी तफ़सील की ज़रूरत नहीं। ज़ाहिर है कि वह लड़की तो आवारा होगी, वरना उसके साथ इस मौसम में मरी को क्यों जाते और वहाँ ये शर्मनाक बातें खुल्लम-खुल्ला क्योंकर होतीं। मगर फ़रहत की हालत पर मुझे हैरानगी है। मैं उन्हें ज़रूर समझाता मगर इस बार वह मुझे सलाह के क़ाबिल ही न लगे। एक और साहब भी उनके साथ थे। मगर इनसे छिपकर यह मरी की पहाड़ियों में अपनी मनमानी करने में लगे हुए थे और वह तीसरे साहब अकेले होटल में पड़े रहते थे। मैं आपको यह बात हरगिज़ न लिखता, मगर फ़रहत से जो ताल्लुक़ मेरा है उसका तकाज़ा यही है कि मैं आप को आगाह कर दूँ कि आप फ़रहत के सुधार की तरफ़ ध्यान दें। अगर आप फ़रहत को सुधार सकें तो यक़ीन जानिये कि उससे बेहतर दामाद आपको नहीं मिल सकता! इन कुछ ऐबों के अलावा, जो खाते-पीते घरानों के नौजवानों में पैदा हो जाते हैं, वह बड़ा शरीफ़ और मोतियों में तुलने वाला शख़्स है। और अगर इसके सुधार की तरफ़ से मेरी तरह आप भी मायूस हो जायें तो खुदा के लिए अपनी बेज़बान बेटी का सब्र न समेटिये और जान-बूझकर उसे अन्धे कुएँ में न झोंकिए। औलाद खुदा की एक अमानत है, जो माँ-बाप को मिलती है। अगर आपने अपनी बच्ची के साथ ज़्यादती की तो यक़ीन जानिये कि क़यामत के दिन आपको जवाब देना पड़ेगा। मैं चूँकि खुद एक लड़की का बाप हूँ इसलिए अपने दिल में आपकी बच्ची के लिये भी एक दर्द पाता हूँ। बहरहाल मैं यह ख़त लिख कर अपना फ़र्ज़ अदा कर रहा हूँ।

आपका एक ख़ैरख़्वाह।

यह ख़त सुनाकर इधर हम मुसकरा कर ख़ामोश हुए, उधर वालिद साहब ने मुँह का पान जल्दी-जल्दी चबाकर ख़ान बहादुर को देखना शुरू किया। ख़ान बहादुर ने वालिद साहब को ग़ौर से देखकर फ़रमाया—

"सुना आपने यह ख़त ? और अब तो आपको यक़ीन आया कि यह किस

क़द्र ख़तरनाक आदमी है।"

वालिद साहब ने कहा—"मगर भाई साहब मैं तो आज से इस बात का क़ायल हो गया हूँ कि यह शख़्स बेवक़ूफ़ तो हरगिज़ नहीं है और चाहे कुछ भी हो। इस ख़त में उसने काफ़ी समझदारी का सुबूत दिया है। मिसाल के तौर पर उसने यह नहीं लिखा कि रअना उसके साथ थी। वरना यह सवाल पैदा होता कि अगर इन साहब का आपसे कोई ताल्लुक़ नहीं, तो रअना को उसने कैसे जाना! दूसरी बात यह है कि चूँकि वह रअना के सिलसिले में बेहूदा बकवास करना चाहता था और ख़त भेज रहा था इसलिए उसने रअना को रअना न कह कर बकवास भी सब कुछ कर दी, और पहलू भी साफ़ बचा गया।"

ख़ान बहादुर साहब ने कहा—"नहीं, ख़ैर बेवक़ूफ़ तो वह अव्वल दर्जे का है मगर शरारत में भी वह अपना जवाब नहीं रखता। अपने नज़दीक बड़े-बड़े तीर मारे हैं उस गधे ने इस ख़त में। यह भी लिखा है कि उभ से बेहतर दामाद मुझे कोई नहीं मिल सकता बशर्ते कि इनका सुधार हो जाए। मगर चूँकि वह सुधार की हद पार कर चुके हैं इसलिए मुझे चाहिए कि मैं रअना का सब्र न समेटूँ।"

हमने कहा—"लिखते हैं—कि फ़रहत को ज़रूर समझाता मगर वह सुधार की हद से गुज़रे हुए नज़र आये। और ऊपर लिख चुके हैं कि मैं उनकी उन महफ़िलों में भी शरीक़ रहा हूँ, जिनमें शहनाज़ के घर जुआ खेला जाता था, शराब पी जाती थी। गोया इन तमाम हरकतों में जनाब मेरे शरीक थे। और अब मेरा सुधार भी करना चाहते हैं।"

ख़ान बहादुर साहब ने कहा—"जी हाँ, मगर मैं तो भाई साहब को उनकी हिमाक़त का ऐसा सुबूत देने वाला हूँ कि आप जो बड़े यक़ीन के साथ उन्हें समझदार कह रहे हैं वह यक़ीन ख़त्म हो जाये। देखिये यह ख़त लिखा गया है गोया रावलपिंडी से और लिफ़ाफ़े पर मुहर है पेशावर की, जहाँ साहबज़ादे आजकल रहते हैं। बेटे, पढ़ना ज़रा यह मुहर।"

और हमने देखा—कि वाक़ई लिफ़ाफ़े पर पेशावर की मुहर साफ़ थी। हम खिलखिलाकर हंस पड़े। अभी शिब्बू मियाँ की हिमाक़त पर वालिद

साहब और खान बहादुर साहब को कुछ और आलोचना करनी थी कि मिस पाल क्रोध से लाल एक पत्र हाथ में लिए हुए आईं और काँपते हुए स्वर में बोलीं—"देखिये नवाब साहब यह ख़त ! ख़ान बहादुर साहब आप भी देखिये, यह ख़त आपके उन भतीजे साहब ने मुझे भेजा है । मैं उन पर मुक़दमा चला दूँगी । आखिर उन्होंने समझ क्या रखा है मुझे ?"

खान बहादुर साहब ने कहा—"लीजिये यह भी खूब रही ! पढ़ो बेटा, यह खत भी पढ़ो ।"

और हमने ख़त पढ़ना शुरू कर दिया—

"अज़ पेशावर
बाजार क़िस्सा ख़ानी,
मार्फ़त खान अब्वदुल अजीज़ खाँ

"ऐ काफ़िर अदा !"

मारे हँसी के हमसे आगे न पढ़ा गया । जरा इस कमबख़्त को देखिये मिस पाल के लिए 'काफ़िर अदा' की उपाधि कहाँ से ढूँढ़कर लाया है ! वालिद साहब को भी बेसाख्ता हँसी आ गई । और वह बोले—"मान गये साहब, जवाब नहीं है इन साहबजादे का, क्या बात कही है !"

मिस पाल ने जलकर कहा—"आपको हँसी आ रही है और मैं खौल रही हूँ । अभी ज़रा आगे तो सुनिये ।"

हमने अपने-आपको संयत करके आगे पढ़ने की बजाय फिर पढ़ना शुरू किया—

"ऐ काफ़िर अदा,

उफ़ ! तेरी काफ़िर जवानी जोश पर आई हुई !"

ख़ान बहादुर साहब ने झट कहा—"लाहौल विला क़ुव्वत !"

हम पढ़ते रहे—

"आपका गुस्सा सिर आँखों पर । मगर आपने शायद यह नहीं सुना कि—

'उनको आता है प्यार पर गुस्सा,
मुझको गुस्से पर प्यार आता है ।'

हमारी मुहब्बत का जवाब आपने जिस तरह दिया है यह कोई नई बात

नहीं और न मैं इसकी शिकायत करता हूँ—

"ज़ोरो जफ़ा तो हुस्न के जायज़ हक़ूक़ हैं,
ज़ोरो जफा का शिकवाए बेजा न कीजिये।"

मगर आपको शायद मालूम नहीं है कि मुहब्बत आपसे भी ज़्यादा है। यह कमबख्त ने इन बातों से बुझती है न जफ़ा के मुक़ाबले में वफ़ा हार मान सकती है। अपना तो यही कौल है कि—

'जफ़ायें तुम आज़माए जाओ, वफ़ा के खूँगर वफ़ा करेंगे।
हमारे कहने में दिल नहीं है, तो हम ही दिल का कहा करेंगे।'

आप यह न समझ लीजियेगा कि आपके इस रवैये से मैं मायूस होकर वहाँ से चला आया हूँ। अगर मेरी मुहब्बत आरज़ी और दिखावटी होती, तो शायद यह मुमकिन हो सकता मगर मैं आपको यक़ीन दिलाता हूँ कि आज आपने जिसे ठुकराया है कल उसी की वफ़ा का दम भरेंगी। अब मैं आपके करीब नहीं हूँ; मगर आप मेरे करीब हर वक्त हैं। मैंने आपसे दूर होकर अपने को हर मुमकिन तरीके से जाँचने और परखने की कोशिश की, सब्र करना चाहा, दिल बहलाना चाहा, तफ़रीह में रहने की कोशिश की; मगर सब बेकार। आप हैं कि मेरे ज़िहन से हटने का नाम ही नहीं लेतीं। जितना-जितना भुलाता हूँ, उतना ही याद आती हैं। अब तय हो चुका है कि या तो आप मुझे सहारा देकर मेरी ज़िंदगी को ज़िंदगी बनायेंगी, वरना मैं ज़िन्दगी का मकसद सिर्फ़ आपको हासिल करना समझूँगा और आप ही के लिए भटकता रहूँगा। मैं आपसे यह नहीं कहता कि आप मुझसे मुहब्बत करें; मगर मुझे मुहब्बत करने का हक़ देकर आप मुझे खरीद सकती हैं। उम्मीद तो नहीं कि आप मुझे जवाब देंगी; मगर मुझे अपनी मुहब्बत पर भरोसा है और अगर मेरी मुहब्बत सच्ची है तो आपको आज न सही, कल मेरी तरफ़ आना पड़ेगा। आप हर तरह आज़मा कर देख लें, यह दिल खोटा साबित न होगा।

आपका और सिर्फ़ आपका शहाब"

मिस पाल ने कहा—"मान न मान मैं तेरा मेहमान।"

वालिद साहब ने कहा—"मिस पाल मुहब्बत को ठुकराया नहीं करते। ऐसा करना गुनाह है।"

मिस पाल ने फिर जलकर कहा—"नवाब साहब, आप यह बात हँसी में न टालिये। मैं इस ख़त को अपनी सख़्त तौहीन समझती हूँ।"

ख़ान बहादुर साहब ने कहा—"बेशक तौहीन है; मगर मिस पाल चाँद को देखकर कुत्ते भौंका ही करते हैं। आप परवाह ही न कीजिये। मैं तो इस वक्त एक और बात पर ग़ौर कर रहा हूँ। भाई साहब मुलाहिज़ा फ़रमाइये, इन दोनों ख़तों के कागज़ और लिफ़ाफ़े तक एक हैं। गधा कहीं का, चला है बेवक़ूफ़ बनाने और खुद अकल ठिकाने नहीं।"

मिस पाल हैरान थीं; मगर हमने उन्हें चुपके-चुपके पहले तो सारा क़िस्सा सुनाया और इसके बाद वह गुमनाम ख़त उन्हें दे दिया कि वह खुद पढ़ लें। वालिद साहब और ख़ान बहादुर साहब फिर इधर-उधर की बातें करते रहे और हम वहाँ से उठ आये।

: २१ :

मिस पाल सुबह के कामों से निपट कर आज का अख़बार लेने हमारे कमरे में पहुँची ही थीं कि रअना को बैठा देखकर पहले तो मुसकरा कर कुशल-क्षेम पूछी; मगर तुरन्त ही उसके हाथ में अपने नाम शिब्बू मियाँ का प्रेम-पत्र देखकर उनके माथे पर बल पड़ गये और कटुता के स्वर में कहा—"देखा आपने साहबज़ादी साहिबा यह ख़त ?"

रअना ने कहा—"जी हाँ, काफ़िर अदा, बड़े मज़े का ख़त है यह।"

हमने कहा—"बैठ जाइये मिस पाल। अच्छा हुआ कि आप ख़ुद आ गईं, वरना आपको बुलवाना पड़ता। मैंने इस ख़त पर काफ़ी ग़ौर किया है और मैं इस ख़त से बड़ा काम लेना चाहता हूँ, बशर्ते कि आप मदद करें। रअना भी इस वक़्त मौजूद है। सब मिलकर एक दिलचस्प प्लाट बनाते हैं। यह बहुत ही अच्छा मौक़ा मिला है, इसे हाथ से खोना नहीं चाहिए।"

रअना ने कहा—"कुछ मालूम तो हो कि इनका इरादा क्या है ?"

हमने कहा—"मैं अपना प्लाट तो बाद में बताऊँगा। पहले मिस पाल से पता करें कि वह मदद करेंगी। साहब, मैं सच कहता हूँ कि अगर मिस पाल मेरे प्लाट पर अमल कर जायें तो बस मज़ा आ जाए। यह बेवक़ूफ़ भी क्या याद करेगा कि किन लोगों से पाला पड़ा था।"

मिस पाल ने कहा—"अगर इन हज़रत को सज़ा देने की कोई स्कीम है तो मैं गले-गले पानी शरीक हूँ।"

हमने कहा—"ऐसी सज़ा कि याद करे ज़िन्दगी-भर।"

रअना ने बड़ी उत्कंठा से कहा—"तोबा है अब बता भी दीजिये ?

हमने कहा—"मिस पाल से उसे इस ख़त का जवाब लिखवाता हूँ। पहले वह जवाब देख लें। आप दोनों उसके बाद सलाह दें। मैंने रात ही इस ख़त के जवाब का मस्विदा तैयार कर लिया है।"

और यह कहकर हमने मेज़ से उठाकर मस्विदा सुनाना शुरू किया—

"जनाबे मन, तस्लीम ।

आपका ख़त पढ़कर पहले गुस्सा आया । दूसरी बार फिर गुस्से में पढ़ा मगर यह गुस्सा अपने ऊपर जबर्दस्ती लाना पड़ा । तीसरी बार यह ख़त पढ़कर मुझे ज़रूरी मालूम हुआ कि मैं इसका जवाब दूँ और आपको ठंडे दिल से समझाने की कोशिश करूँ कि किसी की ख़ामोश ज़िन्दगी में ख़ामख़ाह हलचल पैदा करने का मज़ाक़ आपका निहायत बेरहमाना फ़ेल है । मैं इस क़िस्म के बहुत से खेल देख चुकी हूँ और उन नतीजों से नावाकिफ़ नहीं हूँ । औरत की ज़िन्दगी बग़ैर क़द्रदान के जंगल के फूल के अलावा और कुछ नहीं । उसको तलाश होती है अपने हुस्न की तारीफ़ करने वाली नज़रों की । पर इसका मतलब यह नहीं कि वह इन नज़रों से धोखा भी खा जाए । वह अपने कद्रदान के अलावा अपने लिए तारीफ़ की और भी कुछ चीज़ें ढूँढती है । मत-लब इस तारीफ़ में सचाई और उस पर कायम रहने की हिम्मत पर भी ग़ौर करती है। फिर अपने चाहने वाले तक पहुँच और अपने और उसके मिज़ाज के बारे में भी सोचना पड़ता है । ख़ैर मुझे इन सब बातों का तो इतमीनान है; मगर मुझे न मालूम कि आपने खुद अपने दिल को कहाँ तक टटोल कर यह कदम बढ़ाया है । मेरी दोस्ताना राय यह है कि पहले आप खुद अपने को तोलें और फिर मुझे सोचने का मौक़ा दें । इस बात को बच्चों का खेल और दिल की बाज़ी को दिल्लगीबाज़ी न बनाइये । मैं दरअसल यह ख़तो-किताबत भी इसलिए ग़लत समझती हूँ कि मुमकिन है कि आपका या मेरा कोई ख़त पकड़ा जाए और खामखाह की बदनामी हो । क्या यह मुनासिब न होगा कि आप निहायत ख़ामोशी से काम लेकर लाहौर आ जायें और मेरे अपने मकान में रह कर मुझे आपको समझने का और आपस में खयालात के बदलने का मौक़ा दें । मेरा मकान आपको गढ़ाशाहू बरगंजा रोड पर आसानी से मिल जाएगा । यह ख़त आपको आज के दूसरे दिन यानी १४ जनवरी को मिल जाएगा । अगर १५ जनवरी को चल कर १६ की सुबह को पहुँच जायें तो मैं आपको अपने ही मकान पर आपका इंतज़ार करते हुए मिलूँगी ।

आजकल यहाँ के हालात भी दिगरगूँ हैं । आपको मालूम ही होगा कि

आपकी चचेरी बहन रअना बेगम से मेरे मालिक फ़रहत साहब की शादी होने वाली थी। मगर कुछ ख़तूत ख़ान बहादुर साहब के पास इस क़िस्म के आये हैं कि यह शादी गड़बड़ हो गई है। मैं आपकी तरफ़ से इसलिए और भी डरती हूँ कि अब आपके लिए उधर से भी कोशिश की जायगी और आपके लिए उधर भी अच्छा मौका होगा। इसके बाद शायद मैं आपको याद न रह सकूँ। बहर सूरत आपका तशरीफ़ लाना जरूरी है।

मेहरबानी फ़रमाकर इस ख़त का कोई जवाब न दें। मैं १६ जनवरी को सुबह आपका इन्तज़ार करूँगी।

आपकी

राजरस पाल।"

यह ख़त सुनकर पहले तो एक सन्नाटा रहा। इसके बाद रअना ने आँखों में एक चमक पैदा करके कहा—"ऐसी लाजवाब सूझी है आपको कि मैं दाद नहीं दे सकती। इस ख़त से वह यक़ीनन चकमे में आकर दौड़ा हुआ आएगा।"

हमने कहा—"सोलह जनवरी की सुबह को आप उसे यहीं लीजिए।"

मिस पाल ने कुछ हैस-बैस के साथ कहा—"तमाशा तो अच्छा है। मगर मेरा घर ख़ाहमख़ाह रख रहे हैं आप। सारे मुहल्ले में मुफ़्त की बदनामी होगी।"

रअना ने कहा, "यह भी ठीक कह रही हैं। किसी होटल में क्यों न कहा जाये उन्हें ठहरने को?"

हमने कहा—"मेरे ज़िहन में भी पहले होटल ही आया था। मगर होटल में उनकी रिहायश हम दोनों के लिए बेकार हो जायेगी। मिस पाल के घर में यह आसानी है कि हम दोनों भी छिप कर यह तमाशा देख सकते हैं।"

मिस पाल ने कहा—"अगर आप दोनों भी उनके आने से पहले सोलह की सुबह को मेरे मकान पर पहुँच जायें तो मुझे कोई एतराज़ नहीं है। फिर तो मैं यह कह सकूँगी न, कि मेरे यहाँ मेहमान आए हैं। मैं तो सिर्फ़ इन हज़रत की मौजूदगी से घबराती हूँ।"

रअना ने कहा—"मगर हम लोग आख़िर कहाँ तक आपके यहाँ रहेंगे। वह आ रहे हैं तो ज़रा तफ़सील से रहेंगे।"

यह बात वाक़ई विचार करने की थी। दूसरे यह भी कि मिस पाल स्थायी

रूप से यहाँ का काम छोड़ कर अपने घर नहीं रह सकती थी। अतएव हमने सलाह दी—"देखिये ना, वह आयेंगे तो अपने घर उन्हें बाक़ायदा नाश्ता करायें, बल्कि दिन का खाना भी खिला दीजिए। इसके बाद उन्हें मश्विरा दीजिए कि इस क़िस्से को छिपाये रखने के लिए ज़रूरी है कि आप किसी होटल में ठहरें। वरना मुमकिन है कि नवाब साहब के यहाँ से कोई आकर आपको यहाँ देख ले।"

रअना ने भी समर्थन किया—"हाँ, यह ठीक है, उन्हे कह दीजियेगा कि ख़ाली वक़्त में मैं नवाब साहब के यहाँ से और आप होटल से यहाँ आते रहिये।"

मिस पाल ने भी अनुमति दी—"हाँ, यह ठीक है और ज़ाहिर है कि दो-तीन दिन से ज़्यादा यह तमाशा क्या रहेगा?"

हमने कहा—"यह कुछ नहीं कहा जा सकता, मिस पाल। यह तो तमाशा शुरू होने के बाद अन्दाज़ा होगा कि प्लाट कितना तवील है और उसे कितने सीन पर फैलाया जाये।"

मिस पाल ने कहा—"मगर कुछ उस तमाशे का खुलासा तो मालूम हो जाता।"

हमने कहा—"खुलासा फ़िलहाल इतना ही सुन लीजिए कि जब वह आप से मिलेंगे तो उनके इस ख़त और इस जवाब की रोशनी में उनसे आपकी बातें होंगी। ज़ाहिर है कि वह आपके शक मिटाने के लिए तरह-तरह के वायदे करेंगे। और हमें तो दरअसल यह देखना है कि वह आपके सामने किस रंग में नमूदार होते हैं। अब तक तो दरअसल उनका रंग खिला ही नहीं है। उनको कभी खुल-खेलने का मौक़ा ही न मिल सका। इसलिए कि हर जगह वह कुछ दबे हुए से रहे। मगर अब ख़ुदा ने वह दिन दिखाया है कि उनकी हिमाक़त को ढील मिले तो वह अब कुछ और ही नज़र आयेंगे।"

रअना ने कहा—"यह तो निहायत बोदा प्लाट है। मैं तो इसे कुछ और ही बनाना चाहती हूँ।"

हमने कहा—"भई, इस ड्रामे के लेखक तो दरअसल हम तीनों ही हैं आप जो चाहती हैं वह भी फ़रमायें।"

रअना ने कहा—"उस कमबख़्त से यह ज़रूर क़बूल करवा लिया जाये कि यह ख़त जो डैडी को उसने भेजा है यह उसी का लिखा हुआ है।"

हमने कहा—"वह तो मालूम ही है सबको।"

रअना ने कहा—"नहीं; मैं चाहती हूँ कि डैडी और अंकल ख़ुद अपने कानों से सुन लें और जो इल्ज़ाम उसने आप पर और मुझ पर लगाये हैं उसमें वह ख़ुद मुब्तला होकर उनकी निगाहों के सामने आ जायें।

हमने कहा—"इसका मतलब यह हुआ कि आप ख़ान बहादुर साहब को और वालिद साहब को भी यह तमाशा दिखाना चाहती हैं। मगर मैं इस के हक़ में नहीं हूँ। फिर यह तमाशा संजीदा बन कर मुमकिन है तकलीफ़देह हो जाय।"

मिस पाल ने भी कहा—"ख़ान बहादुर साहब वाक़ई गुस्सा ज़ब्त न कर सकेंगे। इसे तो बस एक दिलचस्प तमाशा की हद तक रहने दीजिए।"

रअना की समझ में यह बात आ गई और उसने बुझे हुए दिल से कहा—"जैसी आपकी मर्ज़ी। मगर फिर भी यह तमाशा इतना मुकम्मल हो कि ग़ालिब के पुर्ज़े उड़ जायें। यह न हो कि—

'देखने हम भी गए थे पै यह तमाशा न हुआ।'

हमने कहा—"इसका तमाम दारोमदार मिस पाल पर है। वह जितना अच्छा एक्टिंग करेंगी, उतना ही अच्छा तमाशा होगा। इसमें शक नहीं कि इन्हें अपने दिल पर क़ाबू रखना पड़ेगा क्योंकि शिब्बू मियाँ से इश्क़ करना कोई मामूली बात नहीं हैं।"

मिस पाल ने कानों पर हाथ रख कर कहा—"न बाबा मुझ से इश्क़-विश्क नहीं हो सकता।"

रअना ने कहा—"तो फिर आप उन्हें किस सिलसिले में बुला रही हैं? देखिये न मक़सद तो बेवक़ूफ़ बनाना है। इसमें शक नहीं कि जिस हद तक वह अल्लाह की तरफ़ से बेवक़ूफ़ बने हुए हैं, वही हमारे लिए बहुत है; मगर हम तो हिमाक़त के समुद्र की गहराइयों का तमाशा देखना चाहते हैं।"

हमने मिस पाल को समझाया—"साहब, आपको यह इतमीनान तो होना ही चाहिये कि पर्दा के पीछे आपकी जान और इज़्ज़त के दो रखवाले मौजूद

होंगे। फिर आप डरती क्यों हैं ? जरा मीठी-मीठी बातें कीजिएगा ताकि वह तय कर लें कि बस जीत ली उसने बाज़ी। और फिर देखिए कि उस आशक़-सादिक का हाल क्या होता है ? बखुदा मैं तो इस हालत में उन्हें ज़िहन में लाता हूँ तो बेसाख़्ता हँसी आ जाती है। आप घबराइये नहीं। मैं आपको काफ़ी रिहर्सल करा दूँगा।"

इस इतमीनान के साथ मिस पान्त ने ख़त लिखने का कागज़ सँभाला और चाहे वह उर्दू जरा टटोल-टटोल कर लिखती हैं; मगर ख़त ज्यादा बुरा नहीं। थोड़ी-सी देर में उन्होंने खत लिखकर और लिफ़ाफे पर पता लिखकर मेरे हवाले कर दिया और हम तीनों शिब्बू मियाँ की तशरीफ़-आवरी के जश्न के प्रोग्राम देर तक बनाते रहे। यहाँ तक कि रञ्जना के यहाँ से उनका बैरा यह संदेश लाया कि साहब याद करते हैं। अतएव सलाह-मश्विरा की यह महफ़िल बरखास्त करनी पड़ी।

: २२ :

हमें बुलाया गया था और जिस समय हम पहुँचे वालिद साहब क़िबला बाग़ में अपने उन्हीं तेवरों के साथ टहल रहे थे, जो तेवर महायुद्ध के अवसर पर सदा देखे गये हैं। जब कभी वह वालिदा साहिबा से नाराज़ होते हैं, उसी अंदाज से टहलना शुरू कर देते हैं कि दोनों मुट्ठियाँ भिंची हुई हैं और होंठों-ही-होंठों में कुछ बुदबुदा रहे हैं। और निहायत तेजी से इधर-से-उधर और उधर-से-इधर टहल रहे हैं। इसे टहलना न कहिये, न यह दौड़ना है। दोनों के बीच की चीज़ है, जिसे सैनिक परिभाषा में क्विक-मार्च कहते हैं। ये तेवर देखकर हमने मन-ही-मन में कहा कि खुदा ख़ैर करे। और जैसे आगे बढ़कर वालिद साहब क़िबला के सामने आये हैं, उन्होंने आँखों से आग बरसाते हुए कहा—"देख ली तुमने इस हरामजादी की हरक़त ?"

यह न समझियेगा कि यह गाली मिस पाल अथवा घर की किसी नौकरानी अथवा जमादारनी वग़ैरह को दी गई है। जी नहीं, हमारे घर में यह उपाधि सिर्फ़ बेग़मात के लिए ही इस्तेमाल होती है। अतएव हम तुरन्त समझ गये कि यह तारीफ़ वालिदा साहिबा के सिवा और किसी की नहीं हो सकती। हमने सादर पूछा—"बात क्या है ?"

वालिद साहब ने बदस्तूर मुँह से फूल बरसाते हुए कहा—"बात यह हुई है कि जी चाहता है कि चुड़ैल को जूतियाँ मारकर घर से निकाल दूँ। तुमको इतमीनान था कि मिस पाल की तालीम और सोहबत ने उसे आदमी बना दिया है। मगर मैं जानता था कि कुत्ते की दुम बारह बरस नलकी में दबी रहे, इसके बाद भी निकाली जायेगी तो टेढ़ी ही होगी। लुटिया ही डुबो दी इस कमबख़्त औरत ने। और मेरी समझ में नहीं आता कि अब होगा क्या ? यह औरत जूते-लातों की आदी थी। लातों के भूत बातों से नहीं मानते। आख़िर है न असल-नसल की नाइन। अपनी असलियत पर

आ गई।"

अब कौन समझाता वालिद साहब को कि क़िबला व क़ाबा असलियत तो हुज़ूर की भी यही है। यह दूसरी बात है कि आप भूल जायें। बहरहाल अब तो मालूम यह करना था कि बात क्या हुई है। इसलिए अर्ज़ किया—"मगर बात तो मालूम हो।"

वालिद साहब ने झिड़ककर कहा—"मियाँ, जहन्नुम में गई बात। जो बात बनी हुई थी, वह इस घामड़ औरत ने बिगाड़ दी। किसी को मुँह दिखाने के क़ाबिल नहीं छोड़ा। समझ में नहीं आता कि किधर मुँह काला कर जाऊँ।"

हमने फिर हाथ जोड़कर अर्ज़ किया—"मगर क्या हुआ?"

वालिद साहब ने हमें ध्यान से देखा। फिर बोले—"हुआय ह कि आपकी वालिदा साहिबा ने, खुदा उन्हें ग़ारत करे, अपने भैया को ख़त लिखा है कि फ़रहत की शादी उसके बाप एक रईस लड़की से किये देते हैं। अगर पहुँचना है तो अभी पहुँचो, वरना फिर कुछ न हो सकेगा और उस ख़त के जवाब में उस चुग़द का यह ख़त आया है लो सुनो।"

यह कहकर उन्होंने ख़त सुनाना शुरू कर दिया—"हमशीरा साहिबा सलाम!

आपका ख़त मिला, पढ़कर सख़्त रंज हुआ कि भाई साहब दौलत पाकर अपनों को भूल गये। और जो रिश्ता बचपन से तय हो चुका है, उसका भी ख़याल न किया। मैं जानता हूँ कि आप मजबूर हैं और शौहर के मुक़ाबिला में आपकी चल नहीं सकती। मैं बहरहाल लाहौर पहुँचने की कोशिश कर रहा हूँ। जैसे ही पासपोर्ट का इन्तज़ाम हो गया, मैं लाहौर पहुँच जाऊँगा। मगर आप शादी में देर कराइयेगा कि मेरा आना बेकार ही न जाये। कोशिश करूँगा कि नज्जो और उसकी वालिदा को भी साथ लाऊँ। मगर क़तई तय नहीं हुआ है।"

वालिद साहब ने यहीं तक ख़त पढ़कर हमसे कहा—"सुन लिया आपने, जल्द आ रही है यह आफ़त और अब हमारी असलियत का भाँडा ऐसा फूटेगा कि तबीयत साफ़ हो जायेगी।"

हमने वाक़ई चिन्तित होकर कहा—"यह तो बहुत बुरा हुआ। सवाल यह है कि अब क्या किया जाए ?"

वालिद साहब ने चिल्लाकर कहा—"मुझसे क्या पूछते हो ? उस हराम-जादी से पूछो, जिसने यह गुल खिलाया है। साहबज़ादे मुझे यक़ीन था कि यह जो हम शरीफ़ज़ादे बने बैठे हैं, इसकी पोल अगर कभी खुली तो उसमें इसी औरत का हाथ होगा। साहब, नाई हम भी हैं। हमारे बाप, दादा खरे नाई थे; मगर यह तो कुछ बहुत ही नाइन निकली। अब इसका इलाज सिर्फ़ यही है कि सिर मूँडकर चोटी हाथ में रख दी जाए और निकाल बाहर किया जाए घर से।"

हमने कहा—"ख़ैर, आप शोर न मचायें। मुझे भी ग़ौर करने दें और आप खुद भी ग़ौर करें कि आई बला किसी सूरत से टल भी सकती है या नहीं।"

वालिद साहब ने कहा—"अब क्या टलेगी। मुमकिन है कि आज ही कल में पहुँच भी जाए। मगर इतना मैं बताए देता हूँ कि चाहे ख़ान बहादुर के यहाँ यह रिश्ता इस वजह से न हो सके कि हमारा नाई होना उछल जाएगा; मगर मेरी जिन्दगी में नज्जो भी बहू बनकर इस घर में नहीं आ सकती। अगर वह नाई हैं, तो मैं भी नाई हूँ। वह मेरी मूँछ मूँड रहा है तो मैं उसका सिर मूँडकर रख दूँगा और जूते मारकर घर से निकाल दूँगा भाई-बहन दोनों को।"

हमें अकस्मात् एक उपाय सूझा और हमने वालिद साहब से पूछा—"क्या इस ख़त की बात वालिदा साहिबा को मालूम हो चुकी है ?"

वालिद साहब ने फ़रमाया—"अभी नहीं। मैंने तुम्हें इस मशविरे के लिए बुलाया है।"

हमने कहा—"बस तो ठीक है। फिर अभी वालिदा साहिबा की ओर से तार दिए देते हैं कि शादी हो गई। अब मत आओ। मैं खुद पहुँच रही हूँ। पासपोर्ट का इन्तज़ार है।"

वालिद साहब की आँखों में भी एक चमक-सी आ गई और सारा क्रोध जैसे काफ़ूर हो गया। बड़े ही रहस्यमय ढंग से बोले—"भाई माशा अल्लाह,

जीते रहो। आखिर किस बाप के बेटे हो। वाक़ई यह तार काम कर जाएगा बशर्ते कि वह तार से पहले ही चल ना पड़ा हो।"

हमने कहा—"तोबा कीजिए। पासपोर्ट मिलना इतना आसान नहीं है। दौड़ते-दौड़ते जूतियाँ टूटेंगी, पतलून लंगोटी बनेगी, फिर कहीं जाकर पासपोर्ट मिल सकेगा और अभी तो वह रुपए का इन्तज़ाम करेंगे। उनके पास इतना पैसा कहाँ है कि तीन आदमियों को लेकर हवाई जहाज़ पर आ जायें।"

वालिद साहब ने कहा—"भाई लाजवाब तरकीब सूझी है। वाक़ई इतनी जल्दी वह कैसे चल सकता है? यह तार मिलने के बाद वह इरादा ही मुल्तवी कर देगा और इधर हम वाक़ई में जल्दी करेंगे। यह तो खैर ठीक हो गया, मगर अपनी माँ की इस हरकत को तो देखो।"

हमने कहा—"बहरहाल अब आप उनसे कुछ न कहियेगा वरना वह सनक जायेंगी कि शायद उनका ख़त या उसका जवाब पकड़ा गया है। हम और आप तो ऐसे चुप रहें, जैसे हमें कुछ ख़बर ही नहीं है।"

वालिद साहब ने वचन दिया कि चुप रहेंगे। और हमसे प्रस्तावित विषय का तार लिखवाकर खुद मोटर पर तारघर तशरीफ़ ले गए। मगर हम अजीब उधेड़-बुन में मुब्तला हो गए कि यह जो कुछ हो रहा है कहाँ तक सही है। इस समय रञना की सरल और निरीह कल्पना हमारे सामने थी। और हमें महसूस हो रहा था कि वह हम पर अब भी वही विश्वास करती है, जो सदा करती आई है। मगर हमारा दिल चोर है और हम अपने को इस विश्वास के योग्य नहीं समझते। हम उसके दिल में भेस बदलकर समाये हुए हैं और उसी को धोखा दे रहे हैं, जिसकी सरलता और निरीहता ने अपनी शराफ़त और पारिवारिक प्रतिष्ठा को हमारे सुपुर्द कर रखा है। आज हम पहली बार खुद अपनी नज़रों में गिरते हुए महसूस हुए। इसलिए नहीं कि हम नाई हैं। हमारे नज़दीक एक नाई भी शराफ़त का दावेदार हो सकता है और एक नाई को भी यह अधिकार प्राप्त है कि वह अपने नाई होने पर गर्व करे। मगर हमें यह अधिकार इसलिए प्राप्त नहीं था कि हमने अपनी जाति को खुद नीच समझकर अपने को कुछ और बना रखा था। अपनी दृष्टि में गिरने का कारण यह था कि हमने यह भेद रञना पर भी प्रकट न किया था, वह हमें नवाब-

ज़ादा ही समझ रही है । काश ! वह हमें ख़ास नाई समझ कर रद्द कर देती, पर हमारा यह फ़रेब न खाती । उसे नहीं मालूम कि वह एक बहुरूपिये, धूर्त्त और कपटी के फ़रेब में पड़ी हुई है । और हम उसे धोखा दे रहे हैं, जिसे अपने जीवन का साथी बनाना चाहते हैं । इसका अर्थ यह हुआ कि हम जीवन-भर के लिए एक स्थायी धोखा ख़रीद रहे हैं—मगर इस कल्पना में तस्वीर का दूसरा रुख़ भी सामने आने लगा कि ये सब दिखावे की बातें हैं दुनिया में । कोई इनसान किसी से ऊँचा नहीं है । यह उच्चता और नीचता अपने व्यक्तिगत आचरण से उत्पन्न होती है । इसलामी दृष्टिकोण तो यह है ही, लेकिन आज-कल की फ़ैशनेबल मान्यतायें भी इसका समर्थन करती हैं । हमारा नाई होना ऐसा ही है जैसे कोई डिप्टी-कलक्टर हो जाए । यह क्या वाहियात् है कि जो सूई लेकर कपड़ा सिये वह तो दर्ज़ी कहलाये और उसका पेशा उसकी जाति बन जाये और जो टेलरिंग हाऊस खोले वह कुलीन-का-कुलीन रहे । जूता गाँठने वाला मोची कहलाए और जूतों का व्यापार करने वाला श्रेष्ठ-का-श्रेष्ठ ।

मगर इसके बावजूद हमारी कमज़ोरी यह थी कि हमने रश्रना से आख़िर नाई होना छिपाया ही क्यों ? ज़ाहिर है कि हम ख़ुद अपने को नीच समझते थे और हीन भाव के शिकार थे, वरना हमारा सबसे पहला कर्तव्य यह था कि अगर वह श्रेष्ठताभाव का शिकार होती तो उसे उसकी कल्पित ऊँचाई से उस स्तर पर लाने का प्रयत्न करते जहाँ सब इनसान होते हैं । दो हाथ, दो पैर, दो आँखें, दो कान और दो आँख वाले इनसान । हमें चाहिये था कि रश्रना को इस जातिगत भ्रम से छुटकारा दिलाते और उसे व्यक्तिगत सज्जनता और योग्यता का क़ायल बनाते । मगर हमने यह न किया, इसलिये कि हम ख़ुद शरीफ़ बनने के लिए निहायत ग़ैर-शरीफ़ाना तरीक़ा अख़्त्यार किये हुए थे ।

ख़ुदा जाने हम कब तक इस उधेड़-बुन में पड़े रहते; मगर रश्रना ने हमें चौंका दिया । वह आज कुछ बहुत ही बढ़िया वस्त्र धारण किये हुए थी । हमने रश्रना को लिबास के बारे में कभी सादगी की सीमा से आगे बढ़ते नहीं देखा था । यह और बात है कि सादगी में भी असाधारण आकर्षण होता था । आम-तौर पर उसे सफ़ेद लिबास पसन्द था । गर्मियों में तो ख़ैर सफ़ेद लिबास का जवाब ही नहीं । पहनने वाली की तबीयत भी ख़ुश होती है और देखने वाले

की निगाहों में भी ठंडक पड़ती है। मगर रअना बेगम तो जाड़ों में भी सफ़ेद ही लिबास पसन्द फ़रमाती थीं। अतएव इस समय सफ़ेद शलवार, सफ़ेद कमीज़ और सफ़ेद ही दुपट्टे पर अपना वह जफ़रका सफ़ेद कोट पहने हुए तशरीफ़ लाई कि जैसे किसी वर्फ़िस्तान का दूत चला आ रहा हो। हमने जनवरी की सर्दी में इस लिबास पर एतराज़ करते हुए कहा—"मुमकिन है कि आपको आपके इस गर्म कोट ने गर्म कर दिया हो। मगर यह सफ़ेद रंग देखकर देखने वाले को जो सर्दी लगती है, उसका भी आपके पास कोई इलाज है।"

रअना ने मुसकराते हुए कहा—"मालूम नहीं क्या बात है? मुझे कभी और रंग का कपड़ा पहनते शर्म आती है। मुझे रंगीन कपड़ा पहनकर न जाने यह एहसास क्यों होता है कि जैसे मैंने बनने-सँवरने की कोशिश की हो।"

हमने कहा—"वाक़ई मैंने आपको किसी और रंग के कपड़ों में देखा ही नहीं।"

रअना ने कहा—"नहीं, खैर रंगीन कपड़े भी हैं तो मेरे पास; मगर जहाँ तक हो सकता है, मैं सफ़ेद ही कपड़े अपने लिए पसन्द करती हूँ। क्यों, क्या आपको पसन्द नहीं हैं?"

हमने कहा—"नापसन्द होने की तो कोई वजह ही नहीं। सफ़ेद रंग को आपकी शख़सीयत में बड़ा दख़ल हासिल हो चुका है। मगर कभी-कभी देखने वालों की निगाहों का मजा बदलने के लिये अगर कोई दूसरा रंग भी पसन्द कर लिया करें आप, तो क्या मजायक़ा है?"

रअना ने कहा—"देखने वालों की निगाहों का मजा, खूब कहा आपने! बहरहाल आप इस बेफ़िक्री से न खड़े रहें। आज हम दोनों को सरवर के घर चाय पीना है। उनकी खैर से सालगिरह है। मैं ने आपकी और अपनी तरफ़ से दो तोहफ़े ख़रीदे हैं। मगर अब आप जल्दी चलिए, देर काफ़ी हो गई है।"

हम तैयार तो थे ही। जाते देर क्या लगती। रवाना हो गये।

: २३ :

अगर मिस पाल घर पर होतीं तो कोई बात नहीं थी। वह खुद जगा देतीं; मगर वह तो रात ही से आज की छुट्टी पर जा चुकी थीं और हमें रंजना के साथ उस समय उनके पास पहुँचने के लिए टाईमपीस अलार्म लगाकर रखना पड़ा था ताकि अँधेरे मुँह उठकर तैयार हो सकें, और ऐसे समय मिस पाल के घर पहुँच जायें कि उनके मेहमान साहब उस समय तक न पहुँचे हों। अतएव जैसे ही अलार्म बजा, हम बावजूद सख़्त नींद के एक चौकड़ी भरकर चारपाई से उठ ही तो गए वरना ज़रा तकल्लुफ़ से काम लेते तो सुबह की यह सर्दी हमें अच्छी तरह लिहाफ़ में लपेट कर फिर से सुला देती। मगर हमें ख़ुद आश्चर्य है कि यह सिपाहियों-जैसी तत्परता हममें कहाँ से आ गई। बहरहाल उठते ही जल्दी-जल्दी शेव किया और दाद दीजियेगा कि ग़ुसल भी कर आये। मगर इस दाद की पात्र वास्तव में मिस पाल हैं, जिनके कारण जुमा-जुमा ग़ुसल करने वाले हम, जाड़ा, गर्मी, बरसात—हर मौसम में सुबह के ग़ुसल के आदी हो चुके थे और मरी की बर्फ़बारी में भी ग़ुसल न छूट सका हमसे। ग़ुसल के बाद कपड़े बदलकर टाई बाँध ही रहे थे कि कमरे के दरवाज़े पर एक उंगली से किसी ने खट-खट किया। किसी ने क्या, ज़ाहिर है कि यह रंजना के अतिरिक्त और कौन हो सकता था। हमने दरवाज़ा खोल कर उसे बुलाया।

हम ने कहा—"कमाल किया आपने, इतनी जल्दी तैयार भी हो गईं ?"

रंजना ने कहा—"कमाल तो मुझे आपकी तैयारी में नज़र आ रहा है, मैं तो समझी थी कि अलारम बजा होगा, उसे आपने थपक कर फिर सुला दिया होगा, और फिर करवट बदल कर ख़ुद भी सो गये होंगे। अब मैं जगाऊँगी तो जागेंगे। और फिर मैं नहाने से रोकूँगी तो लड़ाई होगी।"

हमने कहा—"अब आप ख़ुद ही देख लीजिये कि मैं नहा-धोकर बिलकुल तैयार हूँ। बात यह है कि मैं वाक़ई न आलसी हूँ और न सुस्त; यह सब दुश्मनों का प्रोपैगण्डा है जो मेरे ख़िलाफ़ किया गया है। दुश्मन इस तरह की अफ़वाहें फैलाते ही रहते हैं।"

रअना ने हँसकर कहा—"ये बातें शायद इसलिए बन रही हैं कि मुझे आपकी नामुकम्मिल तैयारी का अहसास न होने पाये। अभी टाई बँध रही है। इसके बाद जुराबें पहनी जायेंगी और फिर जूता कसा जायगा।"

हमने कहा—"जूता भी पहना ही जायगा। जूता जिनको कसना चाहिए, उन्हीं का स्वागत करने तो जा रहे हैं। बहरहाल आपने देखा कि टाई बँध गई और अब यह देखिये कि यह आप ही की कारीगरी का एक नमूना है, जो स्वेटर के तौर पर पहन रहा हूँ।"

रअना ने कहा—"हाँ, इसे तो मैं भूल ही गई थी। बल्कि इसके ऊपर कोट और फिर कोट पर चैस्टर भी पहना जायगा।"

हमने कहा—"आपके इतमीनान के लिए अर्ज़ है कि मैं चैस्टर बिलकुल नहीं पहनूँगा। जब से मैंने शिब्बू मियाँ को चैस्टर पहन कर लिहाफ़ में घुसते हुए देखा है, मुझे न जाने यह खयाल क्यों हो गया है कि जो इस शिद्दत से चैस्टर पहनने लगे, वह शिब्बू मियाँ बनकर रह जाता है। मेरे लिए यह कोट ही काफ़ी है"

रअना ने ज़बर्दस्ती शुरू कर दी—"ग़ज़ब कर रहे हैं आप। इस क़यामत की सर्दी में बिना चैस्टर के निकलेंगे इस वक़्त आप।"

हमने कहा—"जो इस सर्दी में सुबह उठकर नहा ले, वह चैस्टर पहनने का मुहताज नहीं हो सकता। हुज़ूरवाला, सर्दी हो या गर्मी इन दोनों बहनों का तरीका यह है कि यह असल में डोमनियाँ हैं। जहाँ इन्हें मुँह लगाया और इनके नख़रे बरदाश्त किये तो यह गाना शुरू कर देती हैं ताल-बेताल। बहरहाल इस सारी बातचीच का नतीजा यह हुआ कि मैं बिलकुल तैयार हो गया। और आपको तैयारी के मज़ीद तकाज़ों का मौक़ा ही न मिल सका। बहरहाल अब तशरीफ़ लाइये।"

हम दोनों इस सुरमई प्रभात के दृश्य में खोये हुए अपने कम्पाउंड से

निकल कर खान बहादुर साहब के कम्पाउंड में आ गये, जहाँ दोनों भयानक कुत्ते हमारे स्वागत के लिए खड़े दुम हिला रहे थे। जैसे ही रञ्जना ने मोटर का दरवाज़ा खोला 'रञ्जकस' ने मोटर में बैठने की कोशिश की और 'नरिन' ने इस विश्वास के बाद कि वे भी साथ जायेंगे, मारे खुशी के उछलना शुरू कर दिया। मगर रञ्जना ने रञ्जकस को पुचकार कर निहायत प्यार से समझाया, 'जी नहीं, इस वक़्त आप हमारे साथ नहीं जा सकते। हम दोनों बहुत छिपकर जा रहे हैं और आप हमारे छिपने की चोरी खोल देंगे। आपको फिर किसी समय सैर कराई जायगी।'

और रञ्जकस ने गर्दन झुका कर यह फ़ैसला इस प्रकार सुना, जैसे वह सब कुछ समझ गया है और अवसर की गम्भीरता को भाँप लिया। उनके समझ जाने के बाद हम दोनों गाड़ी की पिछली सीटों पर बैठ गये और ड्राइवर को चलने का आदेश दिया। ड्राइवर को साथ लेना इसलिये आवश्यक था कि कार वहाँ से कहीं और भिजवानी थी ताकि शिब्बू मियाँ को किसी प्रकार का सन्देह न हो सके। जिस समय हम मिस पाल के मकान पर पहुँचे, वह अत्यन्त अधीरता से हमारी प्रतीक्षा कर रही थीं। हमें देखते ही उनकी जान-में-जान आ गई और हमारा स्वागत करते हुए बोलीं—"मुझे तो डर था कि कहीं वह हज़रत आ मौजूद हों और आप दोनों न पहुँचें तो क्या होगा ?"

हमने कहा—"असल तो यह हो ही कैसे सकता था ? दूसरे हम आपको बार-बार रिहर्सल कराके इतना पक्का तो कर ही चुके हैं कि आपको डरने की कोई वजह तो न होनी चाहिये।"

मिस पाल ने ड्राइवर से कहा—"तुम यह गाड़ी ले जाओ वापस। और दो बजे जब लाना तो इस सामने वाली गली के मोड़ पर रोक लेना; मगर खुद न आना इत्तला करने। हम खुद ही मालूम कर लेंगे कि तुम आ गये हो या नहीं।"

हमने भी समर्थन किया—"हाँ, भई बात ही कुछ ऐसी है कि तुम्हारी या इस कार की मौजूदगी का पता न चले। बस तुम कार लाकर खामोशी से हमारा इन्तज़ार करना।"

कार वापस करके मिस पाल हमें एक कमरे में लाई, जहाँ निहायत पुर-

तकल्लुफ़ ब्रेक फ़ास्ट तैयार था। मिस पाल ने हमें बैठाते हुए कहा—"बस यह है आप दोनों का कमरा। इसके साथ यह ग़ुसलख़ाना है। और वह हज़रत इस सामने वाले कमरे में बैठेंगे। आप दोनों इस कमरे से उस कमरे की हर बात भी सुन सकेंगे और सब चीज़ भी आपके सामने होगी।"

रअना ने कहा—"मगर मिस पाल आपकी और हमारी यह शर्त तो न थी कि आप इतना तक़ल्लुफ़ करेंगी।"

मिस पाल ने सचमुच मेज़बान बनकर कहा—"क्या बातें करती हैं साहब-ज़ादी आप भी! हम ग़रीब आदमी भला क्या तकल्लुफ़ करतीं। आप हमारे घर आयें हमारे लिए यह इज़्ज़त ही क्या कम है? रात गये तो मैं आ सकी कोठी से, सचमुच जाने क्या-क्या जी चाहता था; मगर कुछ न हो सका। बहरहाल अब आप जल्दी से नाश्ता कर लें, वरना वह आ जायगा।"

हमने घड़ी देखकर कहा—"अगर ट्रेन सही वक़्त पर पहुँच रही है तो उसके आने में अभी पूरा आधा घंटा बाक़ी है। मगर मिस पाल आपने अपने प्यारे मेहमान के लिए भी नाश्ते का इन्तज़ाम किया है या नहीं?"

मिस पाल ने कहा—"भला यह कैसे हो सकता था, कि मैं अपने मेहमानों के लिए इन्तज़ाम करती और मेहमानों के मेहमान के लिए न करती?"

रअना ने हँसकर कहा—"मिस पाल उन्हें अपना मेहमान भी मानने को तैयार नहीं। बहरहाल वह हमारे ही मेहमान सही; मगर आपकी मेज़बानी में कोई कमी न रहे।"

मिस पाल ने नाश्ते की ओर हमारा ध्यान दिलाते हुए कहा—"वह तो मैं करूँगी कि याद रखेंगे वह हज़रत भी।"

हमने डरकर कहा—"मेहरबानी करके अपनी तरफ़ से कोई हरकत न कर बैठियेगा।"

मिस पाल ने हमें विश्वास दिलाया कि वह हमारे निर्देश के विरुद्ध किसी प्रकार का अभिनय न करेंगी। इस विश्वास के बाद हमने उस पुरतकल्लुफ़ नाश्ते की ओर ध्यान दिया. जिसकी तैयारी में मिस पाल ने ज़रूरत से ज़्यादा तकल्लुफ़ से काम लिया था। और वह विशुद्ध पूर्वी ढंग से इस समय भी इस चिंता में थीं कि हम दोनों में से कोई तकल्लुफ़ न कर जाए। एक-एक चीज़ बड़े

आग्रह से आगे बढ़ाती थीं और ज़बर्दस्ती खिलाये ही जा रही थीं। "लीजिये तो सही एक-आध मछली का टुकड़ा, एक-आध गुर्दा और।" वह तो कहिये कि टाँगे की आवाज़ सुनकर हम सब हड़बड़ा कर रह गये और मिस पाल को भागना पड़ा हमें हमारे हाल पर छोड़कर। हमने बड़ी सावधानी से कमरे का दरवाज़ा बन्द कर दिया, जो उस कमरे में खुलता था, जिसमें मियाँ शिब्बू पधारने वाले थे और फिर एक सन्नाटा-सा छा गया। वाक़ई इस कमरे से उस कमरे का प्रत्येक दृश्य स्पष्ट दिखाई पड़ता था। हमें किसी कष्टदायक कोने से देखने की ज़रूरत न पड़ी। आराम में कुर्सी पर बैठे हम दोनों को उस कमरे की एक-जैसी हँसी सुनाई दी, जो उनके नज़दीक बड़ी मधुर और आकर्षक हँसी है। ख़ाहमख़ाह कोशिश करके वह बड़ी व्यर्थ हँसी हँसते हैं। हँसी की इस आवाज़ के पीछे-पीछे उन्होंने एक पेशावरी फरगल में लिपटे हुए केंचवे की भाँति बल खाते कमरे में प्रवेश किया।

उन्होंने आते ही कहा—"यह भला कैसे मुमकिन था कि मैं न आता। मैं तो रात को ट्रेन पकड़ने के लिए कल दोपहर ही को स्टेशन पर आ गया था।"

मिस पाल ने कहा—"नहीं, मुझे डर यह था कि कहीं आप ग़रीबख़ाने पर तशरीफ़ लाना अपनी शान के ख़िलाफ़ न समझें। बहरहाल तशरीफ़ तो रखिये न उस सोफ़े पर। नहीं, इस पर बैठिये। इस सोफ़े के स्प्रिंग ख़राब हैं ज़रा।"

यह कहकर मिस पाल ने शिब्बू मियाँ को हमारे बिलकुल निकट बैठा दिया। शिब्बू मियाँ ने बैठते हुए कहा—"मैं और आपके घर आना अपनी शान के ख़िलाफ़ समझूँ? जी तो चाहता है कि सिर के बल पहुँचूँ।"

मिस पाल ने तुरन्त कहा—"सिर के बल? सिर के बल तो रक़ीब के कूचे में जाते हैं।"

ज़ाहिर है कि मिस पाल को यह बात समझाई नहीं गई थी। मगर कमबख़्त ख़ुद भी तो बड़ी समझदार और चालाक हैं और मुक़ाबिला है उनका जो एकदम भड़क उठे—"अच्छा-अच्छा। वह मिसरा—

'मैं कूचा-ए रक़ीब में भी सर के बल गया।'

अच्छा ज़रा वे दोनों टोकरे मुलाज़िम से कह कर खुलवा दीजिये, वरना फल ख़राब हो जायेंगे। पेशावर से और क्या लाता? थोड़े से फल ला सका

हूँ और एक पेशावरी चप्पल भी लाया हूँ :—

'गर क़बूल उफ़्तद जहे इज्ज़ो शर ।'

अगर स्वीकार हो तो हमारे लिए इससे अधिक आदर की बात और क्या हो सकती है !"

मिस पाल ने कहा—"आपने ख़ाहमख़ाह तक़ल्लुफ़ किया। मुझे इनमें से हर चीज से ज्यादा आपके ख़ुलूम की जरूरत है । शिब्बू मियाँ आपको नहीं मालूम कि आप बिना सोचे-समझे जो खेल खेल रहे हैं, उसमें आपकी हिम्मत और हौसले का इम्तिहान हो जाएगा।"

शिब्बू मियाँ ने कहा—"मैं हर इम्तिहान और हर आज़मायश के लिए तैयार हूँ। मेरा फ़ैसला है कि मुझे सारी दुनिया को छोड़ना पड़े; मगर आपको नहीं छोड़ सकता।"

मिस पाल ने कहा—"ऐसा बड़ा बोल न बोलिये, आपको नहीं मालूम कि ख़ान बहादुर साहब आपकी तलाश में हैं। साहबज़ादे फ़रहतुल्ला ख़ाँ को जवाब मिल चुका है और रअना बीबी के लिए अब आप ढूँढे जा रहे हैं।"

शिब्बू मियाँ ने कहा—"ख़ूब, ख़ूब ! जैसे मैं ऐसा ही पालतू हूँ कि जब उनकी साहबज़ादी की कहीं शादी न हो सके तो घर की मुर्ग़ी याद आए, सवाल तो यह है कि यह दिल का सौदा है। मेरे दिल में वख़ुदा रअना के लिये कोई जगह नहीं।"

मिस पाल ने कहा—"यह मुझे मालूम है कि अगर आपके दिल में कोई जगह होती तो इस दिल में मेरे लिए जगह क्यों कर निकलती ?" मगर एक बात आप भूल रहे हैं कि रअना का मतलब है ख़ान साहब की पूरी दौलत।"

शिब्बू मियाँ ने कहा—"मगर मैं अपने दिल से मजबूर हूँ और आपसे दरख़्वास्त है मेरी कि मेरे सामने रअना का ज़िक्र न करें।"

मिस पाल ने उसी कमरे में उनके लिए नाश्ते का प्रबन्ध कर दिया और उन्हें बातों-ही-बातों में समझा दिया कि यहाँ आपका ठहरना ख़तरनाक है। सम्भव है कि किसी को पता चल जाये। आप किसी होटल में रिहायश करें और हर रोज़ दोपहर के बाद तशरीफ़ ले आया करें। शिब्बू मियाँ ने यह प्रोग्राम पसन्द कर लिया और नाश्ता करने के बाद ही कुछ देर बातें करके रवाना हो गया।

: २४ :

अब हम सब का प्रोग्राम यह हो गया कि चूँकि शिब्बू मियाँ चार बजे अपने होटल से मिस पाल के यहाँ पहुँच जाया करते थे; इसलिए हम सब मिस पाल समेत तीन बजे उनके मकान पर पहुँच जाया करते। घंटा-डेढ़ घंटा यह तमाशा देखते, इसके बाद वह अपने होटल या कहीं और आवारागर्दी करने चले जाते और हम अपने घर लौट आते। मिस पाल ने शिब्बू मियाँ को सीमा से तो खैर आगे नहीं बढ़ने दिया; मगर वह अपनी जगह सन्तुष्ट थे कि मिस पाल अन्त में सोलह आने उनकी है। उन मुलाक़ातों में उस कमबख़्त ने बाज़ारी क़िस्म के इश्क़ की तो ख़ैर हद ही कर दी थी। मगर रञ्जना और अपने ख़ान-बहादुर साहब के बारे में वे-वे बातें मिस पाल से कहीं कि रञ्जना मारे क्रोध के काँप-काँप जाती थी मगर चुप रहने के लिए मजबूर थी। यह तो ख़ैर वह कई बार कह चुके थे कि रञ्जना उन पर जान देती है और उन्होंने रञ्जना से सदा घृणा की है। फिर रञ्जना की ओर से प्रेम जताने की कहानियाँ और अपनी ओर से उपेक्षा की दास्तानें सुना-सुना कर कान पका दिये थे। मगर दाद देनी पड़ती है मिस पाल को, इस सफलता से वह पार्ट अदा कर रही थीं कि कोई अभ्यस्त अभिनेत्री क्या करेगी? हमारा निर्देशन बहरहाल सीमित था और ऐसी-ऐसी परिस्थितियाँ भी उत्पन्न हो रही थीं, जिनके बारे में हमने कभी सोचा तक नहीं था। मगर सुब्हान अल्लाह, मिस पाल किस ख़ूबी से ये मंज़िलें पार कर रही थीं। आज तक कोई अवसर ऐसा न मिल सका कि मिस पाल ने अनाड़ी होने का परिचय दिया हो। मगर अब हमें रञ्जना की ओर से यह शंका उत्पन्न हो रही थी कि यह किसी दिन एकदम भड़क न उठें। और अगर भड़क न उठें तो संयम का उन पर बहुत ही नागवार असर पड़ सकता है। हमने उसे लाख समझाया कि जब तुम्हें, मुझे, मिस पाल को भली प्रकार मालूम है कि यह हज़रत किस प्रकार के व्यक्ति हैं तो आख़िर, क्रोध किस बात का है?

मगर रअना भी ठीक ही कहती थी कि यह सब कुछ जानते हुए भी वह कमबख़्त बात ऐसी कहता है कि तन-बदन में आग ही तो लग जाती है। बहरहाल आज हम तीनों तीन बजे मिस पाल के घर पहुँचे। मिस पाल को हमें और रअना को बराबर समझाना पड़ा; इसलिए कि वह हँस जरूर रही थी; मगर कुछ ज़बरदस्ती की हँसी थी। मानो उन्हें मुश्किल से हँसना पड़ रहा था।

आख़िर मिस पाल ने कहा—"देखिये न साहबज़ादी, गुस्सा दरअसल मुझे आना चाहिए, वह मुझ से इश्क़ फ़रमा रहे हैं। और फ़ख़्र करना चाहिये आपको कि आपसे वह बेज़ारी का इज़हार कर रहे हैं। सच पूछिये तो मरी जा रही हूँ आपकी बलायें लेकर।"

हमने कहा—"मिस पाल वाक़ई आपको इतनी बातें बनानी आती हैं कि मैं तो हैरान हूँ। उस दिन आपने शिब्बू मियाँ से कहा कि सिर के बल तो रक़ीब के कूचे में जाते हैं। मैं तो ख़ुदा की क़सम भड़क उठा था सुनकर।"

रअना ने कहा—"और इस वक़्त कह रही हैं कि मैं मरी जा रही हूँ आपकी बलायें लेकर।"

मिस पाल ने कहा—"रअना बीवी, इसमें मेरा तो कमाल नहीं। यह तो आप ही लोगों में घुल-मिल कर कुछ आ गया है मुझे। ख़ैर ये बातें तो होती रहेंगी; मगर आज तो मैंने उनसे क़तई जवाब देने का वायदा किया है, उसका क्या होगा?"

हमने कहा—"देखिये मिस पाल, अपना एक्टिंग करने में आपने अपने डायरेक्टर को उठाकर ताक पर रख दिया है। आपने खुद तय कर लिया होगा कि आप इसका क्या जवाब देंगी। यह सिर्फ़ आपकी ख़ाकसारी है कि हम लोगों से पूछ रही हैं। अच्छा वाक़ई बताइये आपने तय क्या किया है?"

मिस पाल ने कहा—"मैं आपसे सच कहती हूँ कि मैं पहले से कुछ तय नहीं करती। उसी वक़्त जो समझ में आता है, कह देती हूँ। मगर इन हज़रत से इतनी बार मिलने के बाद मेरी यह राय ज़रूर बन गई है कि उन्हें बेवक़ूफ़ बनाने के लिए किसी ख़ास मेहनत या अक़्ल की ज़रूरत नहीं है। वह ख़ुदा के फ़ज़ल से इतने पेट-भर कर बेवक़ूफ़ हैं कि जो चाहिए उनसे कह दीजिए। अच्छा यह बताइये कि वह सिनेमा जाने के लिए जो कह रहे हैं।"

हमने कहा—"यह दावत आप ज़रूर क़बूल कर लीजिए। इस दावत का प्रोग्राम मैं बना चुका हूँ। बड़ा मज़ा रहेगा कि यह हज़रत तमाशा देखने जायेंगे और खुद तमाशा बन कर रह जायेंगे।"

रश्ना ने पूछा—"आख़िर तय क्या किया है ?"

हमने कहा—"ये दोनों तो इधर से जायेंगे और हम दोनों बेख़बरी में वहाँ पहुँच जायेंगे और मिस पाल हमें देखकर शिब्बू मियाँ से कहेंगी कि अब फूटा भाँडा और अब मुझे भी छिपाओ और खुद भी छिपो।"

मिस पाल ने एक क़ानूनी नुक़्ता निकाला—"मगर यह तो ग़लत है; इसलिए कि शिब्बू मियाँ को बताया जा चुका है, फिर यह साथ-साथ घूमना कैसा !"

हमने कहा—"यही बात तो आप शिब्बू मियाँ को समझायेंगी कि देखिए ख़ान बहादुर साहब तो रिश्ता छोड़ चुके हैं, मगर ये दोनों उसी तरह चोरी-छिपे मिल रहे हैं।"

हम लोग ये बातें कर ही रहे थे कि दरवाज़े पर दस्तक हुई और मिस पाल ने लपक कर इस कमरे का दरवाजा बन्द करके उस कमरे का दरवाजा खोल दिया, जिसमें शिब्बू मियाँ अपने ख़ास सोफ़े पर सधे हुए जानवर की भाँति आकर आप ही बैठ जाया करते थे। अतएव आज शिब्बू मियाँ शेरवानी और चूड़ीदार पायजामे में जैसे ही तशरीफ़ लाए तो मिस पाल ने माथे पर बल डालकर कहा—"तो यह लिबास किसने कहा था आपसे पहनने को ? एक तो अजीब चीज़ मालूम होते हैं आप, दूसरे यह लिबास तो किसी-किसी पर अच्छा मालूम होता है। आप तो मुझे मेरे मोहल्ले में बदनाम कर देंगे कि खुदा जाने इनके पास कौन साज़िदा आता है।"

और हमने देखा कि शिब्बू मियाँ जो अपनी समझ में बन-ठन कर आये थे, जैसे कुछ बुझकर रह गये और सोफ़े पर बैठते हुए बोले—"तो गोया आप का ख़याल यह है कि मुझ पर अंग्रेज़ी कपड़े अच्छे लगते हैं।"

मिस पाल ने अत्यन्त गम्भीरता से कहा—"अच्छे तो ख़ैर वे भी नहीं लगते, मगर हाँ इस लिबास से फिर भी ग़नीमत नजर आते हो। और यह आपने सुरमा लगाया है इतना ! हाँ, यह अलबत्ता मेरी आँखों में ख़ाक, अच्छा

लगता है। यह आप हमेशा क्यों नहीं लगाते ?"

शिब्बू मियाँ ने कुछ खुश होकर कहा—"बात यह है कि रात नींद न आ सकी और सुबह से आँखें झपक रही थीं, इसलिए लगा लिया सुरमा।"

मिस पाल ने बड़े काफ़िर अन्दाज़ से कहा—"तो क्या आपको भी नींद नहीं आयी ?"

शिब्बू मियाँ और प्रसन्न हो गए। बोले—"यानी आप किस सिलसिले में जागती रहीं ?"

मिस पाल ने कहा—"जब आँख किसी की बीमार हो जाय तो निंदिया बैरन हो जाती है।"

शिब्बू मियाँ ने बड़े ही दार्शनिक भाव से कहा—"अच्छा, वह गाना निंदिया बैरन भई।"

मिस पाल ने तुरन्त कहा—"भई अल्लाह इतनी समझदारी की बातें न किया करो। अपनों की भी नज़र लग जाती है।"

शिब्बू मियाँ ने सोफ़े की बिलकुल कमर तक सरकते हुए कहा—"अच्छा, तुम्हें मेरी क़सम यह बताओ कि तुम क्यों जागती रहीं ?"

मिस पाल ने जैसे लजाकर और आँचल थामने में व्यस्त होकर कहा—"जान-बूझकर पूछते हैं। बड़े मासूम हैं बेचारे। आपने ही आँखों की नींद चुराई और आप ही ये बातें पूछते हैं।"

शिब्बू मियाँ ने कहा—"अच्छा आज तुमने मुझे क़तई जवाब देने का वायदा किया था। सवाल यह है कि हम दोनों इन मुलाक़ातों के बावजूद आखिर कब तक दूर-दूर रहेंगे ? काश ! तुम्हें मालूम होता कि मेरे दिन किस बेचैनी में गुज़र रहे हैं।"

मिस पाल ने कहा—"जो बात मैं कहने वाली होती हूँ, वह तुम पहले ही कह जाते हो। बेचैनी में दिन तो मेरे गुज़रते हैं कि न जाने मेरी क़िस्मत में क्या लिखा है। ख़ान बहादुर साहब बराबर तुम्हें तलाश कर रहे हैं और उनका ख़याल यह है कि जैसे ही तुम मिल गये निकाह पढ़वा देंगे तुरन्त रअना से। इस हालत में मुझसे कोई क़तई जवाब तुम्हें क्या मिल सकता है ?"

शिब्बू मियाँ ने कहा—"तुम्हें मुझ पर विश्वास नहीं। इसलिए तो मैं

कहता हूँ कि चाहे अपने तरीक़े पर, चाहे मेरे तरीक़े पर और चाहे अदालत में, जिस तरह चाहो निकाह पढ़वा लो। इसके बाद ख़ान बहादुर साहब की तमाम ख़ान बहादुरी धरी रह जायेगी। अगर उन्हें मिला भी तो शादीशुदा मिलूँगा, फिर वह क्या करेंगे ?"

मिस पाल ने कहा—"फिर भी सब कुछ हो सकता है। तुम्हें मजबूर किया जा सकता है कि तुम मुझे छोड़ दो। दौलत की चमक दिखा कर तुम्हें फुसलाया जा सकता है। लाठी मारे पानी जुदा नहीं हो सकता। तुम फिर एक हो जाओगे और मैं न दीन की रहूँगी न दुनिया की।"

शिब्बू मियाँ ने निरुत्तर होकर कहा—"मैं तुम्हें कैसे यक़ीन दिलाऊँ कि तुम्हारा यह शुबहा ग़लत है। तुम मुझसे चाहे, जैसी क़सम ले लो कि यह कभी न होगा। मैं तुम्हारा हूँ और तुम्हारा ही रहूँगा।"

मिस पाल ने कहा—"मैं जानती हूँ कि तुम सच कह रहे हो। मगर बाद के हालात तुम्हें मजबूर भी कर सकते हैं।"

शिब्बू मियाँ ने कहा—"अच्छा तो हम दोनों शादी करके कहीं बाहर चले चलें।"

मिस पाल ने तत्परता प्रकट करते हुए कहा—"हाँ, यह माना कि हनीमून पेरिस में मनाया जाय।"

शिब्बू मियाँ घबरा गये—"हूँ, क्या कहा ? पेरिस यानी विलायत ? वहाँ का तो बहुत किराया होगा ?"

मिस पाल ने बनाते हुए कहा—"तो क्या तुम्हारा मतलब यह है कि छाँगा-माँगा या मियाँ चन्नू चले चलें ?"

इधर हम दोनों ने बड़ी मुश्किल से हँसी रोकी।

शिब्बू मियाँ ने कहा—"मैं कराची तक जाने का इन्तज़ाम तो कर सकता हूँ।"

मिस पाल ने कहा—"और वहाँ से वापसी का इन्तज़ाम ख़ुद ख़ान बहादुर साहब कर देंगे। यह ग़लत है। जाना ही है तो इस देश से बाहर जायेंगे, वरना मेरा आख़िरी फ़ैसला यह है कि जब तक रअना की शादी कहीं नहीं होती, यह ख़तरा हरगिज़ मोल न लूँगी।"

शिब्बू मियाँ ने कहा—"कमाल कर रही हो तुम। रश्रना जैसी बदनाम लड़की से अब कौन शादी करेगा ?"

और रश्रना को एक बार फिर क्रोध आया, मगर हमने उसे इशारे से खामोश किया।

मिस पाल ने कहा—"खैर यह तो ग़लत है। उसके बाप की इज्ज़त और दौलत सलामत है तो हज़ार उम्मीदवार मिल जायेंगे। बहरहाल मेरा फ़ैसला यही है। मैं तुम्हें विश्वास दिलाती हूँ कि मैं अब तुम्हारे सिवा और किसी की नहीं हो सकती, बशर्ते कि मुझे यह विश्वास हो जाय कि तुम मेरे सिवा और किसी के न होगे और यह विश्वास रश्रना की शादी से पहले नहीं हो सकता।"

शिब्बू मियाँ ने कहा—"तुम फिर सोच लो। मेरा तो खयाल है कि तुम्हारा यह शुबहा ग़लत है।

मिस पाल ने इस समस्या को अधिक बढ़ाना उचित न समझा और उन्हें बातों में उलझा कर सिनेमा का ज़िक्र छेड़ दिया। आखिर यह तय हो गया कि कल शाम को सिनेमा देखा जाएगा। चाय के बाद सिनेमा का वायदा लेकर वह हज़रत तो विदा हुए। और हमने वाक़ई आज दिल खोलकर मिस पाल को उनके सफल अभिनय और सुन्दर वार्तालाप पर बधाई दी। मगर रश्रना का पारा आज फिर चढ़ा हुआ था; इसलिए हमें और मिस पाल को उन्हें अलग-अलग समझाना पड़ा।

: २५ :

मिस पाल से दिन ही में तय हो गया था कि वह किस पिक्चर में जायेंगी। अत: वह नियमपूर्वक अपने घर रवाना हो गईं और हम दोनों इधर ही से सिनेमा पहुँचने की तैयारियाँ करने लगे। हम दोनों ठीक समय पर सिनेमा पहुँचे। शायद मिस पाल और उनके भालू अभी तक नहीं आए थे। मगर मिस पाल से तय हो चुका था कि किस दर्जे में बैठेंगे, इसलिए इसी दर्जे के दो टिकट लेकर हम दोनों जाकर बैठ गये। अभी हमें वहाँ बैठे मुश्किल से दस मिनट हुए होंगे कि ये दोनों भी पहुँच गये और मिस पाल ने एक ही नज़र सारे हाल पर डाल कर हम दोनों को देख लिया। ठीक हमारे सामने आकर शिब्बू मियाँ के साथ बैठ गईं। हमारी और उनकी सीटों के बीच का फ़ासला इतना अधिक न था कि हम उनकी बातें न सुन सकते। अलबत्ता अगर कानाफूसियाँ हों तो दूसरी बात है। शिब्बू मियाँ ने बैठते ही अपना पाइप सुलगाया, जो शायद मिस पाल पर रौब डालने के लिए ख़रीदा गया था और जो आप के मुँह में इस हुलिए के साथ ऐसा मालूम होता था जैसे अभी किसी बारात के जुलूस में कलारंट बजा कर अभी तशरीफ़ लाए हैं। आपने बड़ी बेहूदगी से पाईप का धुआँ इधर-उधर छोड़ कर मिस पाल से पूछा—"कुछ चाय, आईस क्रीम वग़ैरह ?"

मिस पाल ने कहा—"जी नहीं, शुक्रिया। मगर आप को यह बाक्स का टिकट लेने की क्या सूझी थी ?"

शिब्बू मियाँ ने अपने दोनों पाँव अगली कुर्सी पर रखते हुए कहा—"कुछ नहीं। अलबत्ता वहाँ ज़रा तनहाई रहती है और किसी की मदाख़लत का डर नहीं होता। अब यहाँ हर एक देख सकता है।"

मिस पाल ने कहा—"ऐसा ही सबके देखने का डर था तो बुर्क़ा पहन कर तशरीफ़ लाए होते। और क्या मैं पूछ सकती हूँ कि आप तनहाई क्यों

चाहते थे ?"

शिब्बू मियाँ ने कहा—"जी, वह तनहाई तो गोया यानी, बस यों ही कि ज़रा बेतकल्लुफ़ बैठ सकेंगे।"

मिस पाल ने कहा—"तो यहाँ आप कौन तकल्लुफ़ बरत रहे हैं ?" ज़रा अपने पवित्र चरण देखिए कि कहाँ हैं ?"

शिब्बू मियाँ ने जल्दी से टाँगें सीधी करते हुए कहा—"यह तनहाई की बात नहीं होती न यहाँ।"

मिस पाल ने कहा—"आप को तो किसी बात का अन्दाज़ा ही नहीं होता। आपने जिस वक़्त बाक्स माँगा, टिकट देने वाले ने हम दोनों को बड़ी शक की नज़रों से देखा था। आप आगे के लिए इस क़िस्म के शक-शुबहा वाली बातें न कीजिए। आपका क्या जायगा बदनाम तो मैं हूँगी और आख़िर आप सचमुच यह क्यों नहीं कह देते कि आप दर-असल ख़ानबहादुर साहब के यहाँ के लोगों से डरते हैं कि कहीं वे आप को मेरे साथ देख न लें। इसलिए बाक्स में छिपकर बैठना चाहते हैं।"

शिब्बू मियाँ ने कहा—"लाहौल विला क़ूवत ! ख़ुदा की क़सम आपका यह ख़याल ग़लत है। मुझे कौनसा डर पड़ा है ख़ान बहादुर साहब का ? वह ख़ान बहादुर होंगे तो अपने घर के होंगे। डरूँ तो जब अगर मुझे उनकी लड़की लेनी होती। उनकी दौलत हथियाना होती, उनके घर के किसी आदमी की तो बात ही क्या अगर वह मुझे ख़ुद भी देख लें तो भी मुझे परवाह नहीं है।"

मिस पाल ने बात और पक्की करने के लिए कहा—"जी और क्या, अभी कोई नज़र आ जाए उनके घर का आदमी, फिर मैं देखूँ आपकी बहादुरी।"

शिब्बू मियाँ ने कहा—"ख़ुदा की क़सम यह बात नहीं है। दरअसल आप मुझे जानती नहीं कि मैं किस क़िस्म का आदमी हूँ।"

इतने में एक चाकलेट वाला अपनी ट्रे लिए हुए सामने से गुज़रा और शिब्बू मियाँ ने अब के बिना पूछे कई पैकेट चाकलेट के लिये और मिस पाल के हवाले कर दिये। इसी समय हाल की रोशनी बुझ गई और पिक्चर शुरू हो गई। अभी थोड़ी देर हुई थी कि मिस पाल ने अपना हाथ पीछे बढ़ाकर

चाकलेट के कुछ पैंकेट रअना की गोद में उछाल दिये। वह आश्चर्य-चकित रह गई कि यह क्या गिरा है। मगर हमने उसके कान में कहा—"मुफ़्त का माल है बटवारा करो तुरन्त।"

अतएव दो पैंकेट हमारे हिस्से में भी आये और हम चाकलेट, पिक्चर और इस तमाशे का एक साथ आनन्द लेते रहे, इस विचार के मस्तिष्क में आते ही हमने फिर रअना से कहा—"एक टिकट में तीन मज़े—पिक्चर, चाकलेट और शिब्बू मियाँ।"

रअना ने हमें चुप रहने का संकेत किया और हम पिक्चर देखते रहे। खुदा जाने यह शिब्बू मियाँ नहूसत थी या क्या कि इतनी घटिया पिक्चर आज तक नज़र से नहीं गुज़री थी। हम पिक्चर देखने में व्यस्त थे कि मिस पाल की आवाज़ आई—"आखिर आप मुझे क्यों समझा रहे हैं। मैं ख़ुद पिक्चर देखना जानती हूँ और किसी बताने वाले की ज़रूरत मुझे कभी नहीं पड़ी।"

यह बात निस्संदेह बहुत ही धीरे कही गई थी ताकि दूसरे बेगुनाह तमाशाई बोर न हों। मगर हमारे कान चूँकि उसी ओर लगे हुए थे; इसलिए हमने यह बात भी सुन ली और फिर शब्बू मियाँ का सम्भल कर अलग हटना भी देख लिया। वह शायद मिस पाल को पिक्चर का आशय समझाने के लिए उनके बहुत ही समीप आ गये थे और वह शायद इस बात से नाराज़ थीं; वरना इस बुरी तरह न झिड़कतीं। इसी प्रकार आधी पिक्चर समाप्त हो गई और इन्टरवल में हाल फिर रोशनी से जगमगा उठा। हाल में प्रकाश होते-होते ही तमाशाइयों ने अपने-अपने स्थान से उठना शुरू कर दिया और जब वातावरण फिर शान्त हुआ तो मिस पाल ने एक हल्की-सी चीख़ मारी। बोली—ग़ज़ब हो गया फ़रहत और रअना बीबी।"

शिब्बू मियाँ एकदम जैसे सटपटा गये—"ख़ाहमख़ाह।"

मिस पाल ने ज़रा आवाज़ दबाकर कहा—"तुम्हारी क़सम दोनों बैठें हैं पिछली सीटों पर।"

शिब्बू मियाँ ने घबरा कर कहा—"अब क्या होगा?"

मिस पाल ने कहा—"कुछ नहीं बस चुपके बैठे रहो। ख़बरदार, उठना नहीं वरना पकड़े जाओगे।"

शिब्बू मियाँ ने चिंतित स्वर में कहा—"और जो उन्होंने पहले ही देख लिया हो तो ?"

मिस पाल ने कहा—"तो आखिर तुम क्यों घबरा रहे हो ? घबराना तो मुझे चाहिए, जिसकी रोजी का सवाल है। फ़रहत मियाँ ने देख लिया मुझे तुम्हारे साथ, तो भला मैं रह सकती हूँ उनके यहाँ ? निकाल बाहर करेंगे। डरना मुझे चाहिए और डर रहे हैं जनाब।"

शिब्बू मियाँ ने घबरा कर कहा—"डर नहीं रहा हूँ, मगर बेहतरी इसी में है कि वे मुझे यहाँ न देखें।"

मिस पाल ने कहा—"अच्छा तो गोया अब बेहतरी याद आई। मैंने तो पहले ही कह दिया था कि ख़ान बहादुर साहब या उनके घर के किसी आदमी ने आपको अगर देख लिया तो सारी क़लई खुल जायगी हुज़ूर की।"

शिब्बू मियाँ ने ज़बर्दस्ती अपने को सम्भाल कर कहा—"ख़ुदा की क़सम मैं इनसे डरता नहीं हूँ। देख लिया है तो देख लें मेरी बला से। लेकिन अगर नहीं देखा है तो अच्छा यही है कि न देखें।"

मिस पाल ने कहा—तो गोया डरते नहीं आप किसी से ? यही बात है तो उठकर मिलिये ना फ़रहत मियाँ से।"

शिब्बू मियाँ ने कहा—ख़ाहमख़ाह, यह तो वही बात हुई कि आ बैल मुझे मार।"

मिस पाल ने कहा—"मगर यह आप दुबके क्यों जा रहे हैं ? अपने को समेटे क्यों लेते हैं ?"

शिब्बू मियाँ ने अब दूसरा रुख़ अख़्तियार किया—"ख़ुदा की क़सम मैं नहीं चाहता कि तुम्हारी बदनामी हो, वरना मुझे क्या परवाह हो सकती है किसी फ़रहत की या किसी रअना की ?"

मिस पाल ने कहा—"अब तो बदनामी का मुझे भी डर नहीं। दूसरे, मेरा ख़याल यह है कि वे दोनों शायद हम दोनों को देख चुके होंगे, इसलिए ज़्यादा अच्छा यही होगा कि बजाए छिपने के हम ख़ुद क्यों न मिल लें ताकि हमारी नीयत की तरफ़ से कोई शुबहा न हो सके उन्हें।"

शिब्बू मियाँ ने घटी हुई आवाज़ में कहा—"नहीं-नहीं ऐसा ग़ज़ब भी न

करना ख़ुदा के लिए । ख़ाहमख़ाह् की मुसीबत खड़ी हो जायगी । बस चुपकी बैठी रहो ।"

मिस पाल ने कहा—"यही तो मैं कह रही थी कि आप उनमें से किसी पर यह ज़ाहिर करना नहीं चाहते कि आपको मुझसे कोई दिलचस्पी है । बात यह है न कि उधर भी तो उम्मीद बँधी हुई है ।"

शिब्बू मियाँ ने कहा—"ख़ुदा की क़सम यह बात नहीं है । आपके प्यारे सिर की क़सम यह बात नहीं है मिस पाल ।"

मिस पाल ने कहा—"झूठी क़समें खाने को यह मेरा ही सिर मिला है फ़ालतू आपको । अब तो यह बात बिलकुल खुल गई ना कि आप कितना डरते हैं इन लोगों से ।"

शिब्बू मियाँ ने फिर समझाते हुए कहा—"भई, मैं अपने लिए नहीं तुम्हारे लिए डरता हूँ ।"

मिस पाल ने कहा—"मेरे लिए डरने की क्या बात है ? जब आप मुझसे शादी करने वाले हैं तो मुझे इस नौकरी की परवाह क्यों हो ? और नौकरी के अलावा मेरा उनका कोई रिश्ता भी नहीं है । आपसे अलबत्ता कुछ रिश्ते हैं, कुछ और रिश्ते आप चाहते हैं कि अब हो जायें ।"

शिब्बू मियाँ ने लगभग रो देने के अंदाज़ से कहा—"अल्लाह जानता है यह बात नहीं । मैं डंके की चोट आपसे शादी करने को तैयार हूँ । मुझे किसी की परवाह नहीं, मैं किसी से नहीं डरता ।"

मिस पाल ने कहा—"बस तो फिर ठीक है । आओ हम दोनों उन दोनों से मिलें और अगर उनमें से कोई पूछे कि हम दोनों साथ-साथ कैसे, तो साफ़ कह देंगे कि हम तो ज़िंदगी के साथी बन रहे हैं । यह साथ क्या मानी ?"

शिब्बू मियाँ ने फिर घबरा कर कहा—"नहीं, अभी नहीं । यह मौक़ा नहीं इस ऐलान का ।"

मिस पाल ने उठने के लिए पर तोलते हुए कहा—"ख़ैर आपको अख़्तियार है; मगर मैं क्यों ख़ाहमख़ाह चोर बनूँ । मैं तो मिले लेती हूँ इन दोनों से ।"

शिब्बू मियाँ ने घबराकर मिस पाल का हाथ पकड़ते हुए कहा—"अल्लाह यह ग़ज़ब न कीजिये । इस वक़्त आपकी इस जल्दबाज़ी से मेरा तो दिल डूब

रहा है।"

मिस पाल ने कहा—"'जी और क्या ? मेरी जल्दबाजी से डूब रहा है या इस वजह से डूब रहा है कि अगर रअना बीबी ने आपको मेरे साथ देख लिया तो आपके साथ क्या गुज़रेगी।"

अब शिब्बू मियाँ बहुत ही व्यग्र थे। व्यथित स्वर में बोले—"इस्तग़फ़रुल्लाह ! आपको तो जैसे इस नाज़ुक मौक़ा पर कुछ ज़िद ही हो गई है।"

मिस पाल ने कहा—"जी हाँ, ज़िद हो गई है और ज़िद का कारण सिर्फ़ यह है कि अगर आपको रअना से कोई मतलब नहीं है तो फिर यह डर क्यों ? जब आप जैसा कि आपने ख़ुद कहा, उनसे ताल्लुक़ ही तोड़ चुके हैं तो फिर आख़िर लिहाज़ किस बात का है ? यही न कि आपको अन्त तक कुछ उम्मीदें बाक़ी हैं।"

शिब्बू मियाँ ने घबराकर अपना हाथ बढ़ाते हुए कहा—"देखिये, ख़ुदा की क़सम हाथ-पैर ठंडे हो गये हैं।"

मिस पाल ने कहा—"हुज़ूर वैसे तो मैं पसीना भी देख रही हूँ आपके माथे पर।"

यह क़िस्सा अभी और तूल खींचता; मगर हाल में अँधेरा हो गया और मिस पाल को चुप हो जाना पड़ा। शायद इस अँधेरे को शिब्बू मियाँ ने अपने लिए ग़नीमत ही समझा होगा। वह कुछ और भी बोले; मगर इतना धीरे कि हम कुछ न सुन सके। और इसके बाद एक दम निस्तब्धता छा गई। पिक्चर के पहले आधे भाग की भाँति न अब शिब्बू मियाँ ने मिस पाल की ओर झुकने की चिन्ता की, न कोई कानाफूँसी फ़रमाने का इरादा किया। मूर्ति की भाँति बिलकुल चुप बैठे पिक्चर देखते रहे। और पिक्चर ख़त्म होने के बाद भी जब हाल में रोशनी हुई और मिस पाल ने उठना चाहा तो इन हज़रत ने चैस्टर का कालर उलट कर मिस पाल का दामन पकड़ कर उन्हें बिठाते हुए फिर कुछ चुपके-से कहा। शायद मतलब यह होगा कि हम दोनों पहले जायें। अतएव हम दोनों निहायत ख़ामोशी से उठ कर हाल से बाहर आ गये। फिर ख़ुदा जाने मिस पाल और शिब्बू मियाँ कब निकले।

रअना ने हाल से बाहर आकर कहा—"आज तो मिस पाल ने वाक़ई इस

बेवक़ूफ को दिल के दौरे डाल दिये।"

हमने कहा—"आज मिस पाल पहली बार कुछ और एक्टिंग कर गईं। मगर ख़ैर इतनी ओवर भी न थी, जितने हमारे फ़िल्मी एक्टर हो जाया करते हैं, मगर लुत्फ़ आ गया आज।"

रञ्जना ने कहा—"मगर मिस पाल को यह समझाने की जरूरत है कि ज़्यादा उखड़ी-उखड़ी बातें न किया करें।"

हमने भी इसका समर्थन किया, क्योंकि शिब्बू मियाँ को डराना-धमकाना नहीं, बल्कि प्यार-मुहब्बत से चुग़द बनाना अभिप्रेत था।

: २६ :

सच कहा है किसी ने मुसीबत बिना सूचना के अज्ञात मार्गों से आया करती है। अतएव आज हमारे यहाँ जो मुसीबत आई है, वह कुछ इस प्रकार की है। वालिदा साहिबा के भाई एक दिन सहसा परिवार-समेत यानी मामी और बीबी नज्जो को साथ लेकर आ मौजूद हुए। वालिद साहब का तो खैर कहना ही क्या, एक रंग आता था और एक जाता था। कुछ समझ में न आ रहा था कि करें तो क्या करें। ऊपर से हँस-हँसकर इन मेहमानों का स्वागत भी कर रहे थे और दाँत भी पीसते फिरते थे। आख़िर जब मामू साहब कुछ देर इधर-उधर की बातें करके अन्दर तशरीफ़ ले गए तो वालिद साहब ने हमारे कमरे में आकर लगभग रो देने के अन्दाज़ में कहा—"बना-बनाया खेल बिगड़ गया न? ज़रूर इस हरामज़ादी ने बाद में भी ख़तूत भेजे होंगे और हमारे तार वाले झूठ का पोल भी खोल दिया होगा। अभी तक तो इसका कोई ज़िक्र नहीं आया है; मगर मैं दावे से कहता हूँ कि यही बात है।"

वालिद साहब ने फिर कहा—"झूठ खुल जाए तो खुल जाए। मैं तो साफ़ कह दूँगा कि मैंने दिलवाया था यह तार और इसलिए दिलवाया था कि जिस रिश्ते पर आप लोग अड़े बैठे हैं, उससे सब्र कर लें इसलिए कि किसी भी क़ीमत पर यह रिश्ता न होने दूँगा।"

हमने कहा—"मगर इसका नतीजा बदनामी के सिवा और क्या होगा? मामू साहब को आप जानते हैं वह ढिंढोरा पीट देंगे हमारी असलियत का, और हम जो बड़े ख़ानदानी नवाब बने बैठे हैं किसी को मुँह दिखाने के क़ाबिल न रह जायेंगे।"

वालिद साहब ने कहा—"जो कुछ क़िस्मत में लिखा है, वह होकर रहेगा। मगर मैं क़सम खाकर कहता हूँ कि तुम्हारे मामू की लड़की मेरी बहू नहीं बन सकती, नहीं बन सकती, नहीं बन सकती। मैं तुम्हारे लिए कोई मेहतरानी ब्याह

कर लाऊँ, कोई चमारन उठा लाऊँ, मगर यह लड़की क़यामत तक इस घर में बहू बनकर नहीं आ सकती। और दूसरी बात यह सुन लो कि अगर तुम्हारी माँ ने ज़रा भी तीन-पाँच की तो अपने बाप की औलाद न समझना मुझे अगर इस हरामज़ादी को तलाक़ देकर घर से न निकाल दिया। बड़ी अपने भैया पर फूली हुई है! साले को खुले बाज़ार वह जूतियाँ लगवाऊँगा कि याद करे वह भी—"

यह साला जो गाली के तौर पर इस्तेमाल हुआ था, असल में वाक़ा भी था। हम वालिद साहब को इस सिलसिले में कुछ समझाना ही चाहते थे कि मिस पाल ने हमसे कहा—"आपको आपकी आँटी, क्या कहते हैं उन्हें ममानी, जी हाँ आपकी ममानी आपको बुला रही हैं।"

हमने मिस पाल को टाल खुद भी यहाँ ठहरना उचित न समझा और अपने कमरे से निकल कर 'मुल्ला की दौड़ मस्जिद तक' की कहावत के अनुसार ख़ान बहादुर साहब की ओर हो लिए। मगर इस ख़याल से हम रास्ते ही से लौट पड़े कि अब किस मुँह से वहाँ जा रहे हैं। आज ही कल में हमारी पोल खुल जायगी और कितना दुख होगा रअना को, जब वह यह सुनेगी कि जिसे वह न जाने क्या समझ रही थी, वह वास्तव में न सिर्फ़ नाई है, बल्कि इतना नीच मनुष्य भी है कि अब तक अपनी असलियत को छिपाये रहा। हम इन्हीं विचारों में उलझे हुए ख़ान बहादुर साहब के कम्पाउंड से निकल कर सड़क पर हो लिए और अनमने से शिमला पहाड़ी तक टहलने चले गये। सच पूछिये तो अब हिम्मत न होती थी रअना के सामने जाने की। मालूम होता था कि जो भेद रअना पर कुछ दिनों में खुलेगा, वह हम पर आज ही खुल गया है। हम अपनी दृष्टि में खुद ही गिर चुके थे और आज यह भावना बहुत ही कष्टदायक बनी हुई थी कि आख़िर हमने रअना से यह बात छिपाई ही क्यों? और अगर यह कोई छिपाने की चीज़ थी तो रअना से ये पेंगें इस हद तक बढ़ाने की ज़रूरत ही क्या थी? हमने इस मासूम को धोखा दिया। वह कैसे विश्वास करेगी कि हम कितने धोखेबाज़ हैं। मगर साथ-ही-साथ एक ख़याल यह भी आया कि अब आख़िर हम देर क्यों कर रहे हैं? यह ख़बर किसी-न-किसी तरह तो उसे हो ही जायगी कि हम क्या हैं फिर क्या यह बेहतर नहीं है कि हम ही साहस से काम लें और ख़ुद रअना के सामने स्वीकार

कर लें कि हम जाति के नाई हैं। ज़ाहिर है कि अब यह काम हमारे लिए सहज न था। मगर हमारी ज़्यादती का अगर कोई इलाज था तो सिर्फ़ यह कि हमें वीरता से काम लेकर इस परीक्षा को पार करना ही था और रअना के सामने सच बोलना था। कहते हैं कि साँच को आँच नहीं। क्या आश्चर्य है कि रअना पर हमारा यह सच असर कर जाय। और वह इन जातिगत विचारों को न मानती हो। मगर यह धारणा कुछ स्थायी सिद्ध न हो सकी। यह विचार भी आया कि कि अगर रअना ख़ुद इतनी उदार भी हुई तो भी ख़ान बहादुर साहब का क्या ठीक है? वह क्योंकर गवारा करेंगे कि उनकी बेटी ऐसे कुल में जाये और उनका दामाद एक नाई बने। मगर इसका मतलब यह तो नहीं हो सकता कि हम चोर बने अब भी बैठे रहें। जितना-जितना विचार किया यही बात समझ में आई कि जो सच हमारी कायरता अब तक न बोल सकी वह सच बोलने में अब हमें देर न करनी चाहिये। और इससे पहले कि इसका भेद किसी और साधन से खुले हमें कम-से-कम रअना पर असलियत अवश्य प्रकट कर देनी चाहिये। यह विचार इतनी देर से ज़रूर पैदा हुआ था; मगर अब भी पैदा हो गया था तो ठीक ही था। शुक्र है कि अब तक निकाह या मंगनी वग़ैरह की नौबत न आई थी, वरना इस धोखेबाज़ी का समर्थन हो जाता। विचारों का सिलसिला तो ख़ुदा जाने कहाँ-से-कहाँ जा पहुँचा; मगर हमने यह निश्चय कर लिया कि आज और इसी समय हमें जान पर खेलकर रअना को यह भेद अवश्य बता देना है। इस दृढ़-संकल्प के साथ हम फिर लौटे और ख़ान बहादुर साहब की कोठी पहुँच कर रअना के कमरे में आकर दम लिया। रअना इस समय पढ़ने में व्यस्त थी। हमें देखकर उसने पुस्तक रख दी और अपने उसी निरीह भाव से कहा—"आज तो बहुत से मेहमान आ गये आपके घर।"

हमने कहा—"जी हाँ, रिश्तेदार हैं अपने। मामूजान और उनके बाल-बच्चे आये हैं हिन्दुस्तान से।"

रअना ने कहा—"हिन्दुस्तान से? फिर तो बड़ी ख़ुशी की बात है कि बिछुड़े हुए मिले। मगर आप तो कुछ उदास-से मालूम होते हैं।"

हम सच बोलने पर तुले हुए थे। कहा—"जी हाँ, मैं उदास हूँ। मेहमानों

के कारण नहीं किसी और कारण से ।"

रअना भी चिंतित हो गई और हम शर्म से उड़ गये कि यह निरीह लड़की हमारे लिए चिंतित हो रही है। उसने वाक़ई व्यथित स्वर में पूछा—"बात क्या है ? आखिर खैरियत तो है ?"

हमने कहा—"मुझे नहीं मालूम कि खैरियत है या नहीं। इसका फ़ैसला आपसे बातचीत करने के बाद होगा ।"

रअना ने चिंताजनक विस्मय से कहा—"मुझसे बातचीत करने के बाद—? तो कीजिये न बातचीत यहाँ कोई न आएगा ।"

हमने कहा—"आज मैं तुमसे बहुत ही उथली बातें करना चाहता हूँ इसलिए कि उन्हीं बातों पर तमाम दारोमदार है। मैं बिना किसी भूमिका के यह पूछना चाहता हूँ कि इस हद तक मेरे क़रीब आने के बाद अगर यकायक तुम्हें यह मालूम हो जाय कि जो-कुछ मैं नज़र आ रहा था दरअसल वह नहीं हूँ। इससे नीच, बहुत ही नीच और तुम्हारी सतह से गिरा हुआ एक इनसान हूँ तो इसका असर तुम पर क्या होगा ?"

रअना ने भोलेपन से कहा—"मैं समझी नहीं आपका मतलब। आप मुझे डरा क्यों रहे हैं। जो कहना चाहते हैं साफ़-साफ़ कह दीजिये न ।"

हमने कहा—"मैं साफ़ ही बात कर रहा हूँ कि अगर तुमको यह मालूम हो कि जिन बुलंदियों पर तुम मुझे देख रही हो, वे बुलंदियाँ दरअसल पस्तियाँ हैं तो क्या तुम मुझे आसानी से नज़र-अंदाज़ कर सकोगी ?"

रअना ने कहा—"नज़र-अंदाज़ करने का तो खैर ख़याल ही दिल में न लाइये। यह सवाल तो पैदा ही नहीं होता। मगर आपको यह ख़याल आया कैसे ? आप जो कुछ कहना चाहते हैं, उससे पहले मुझसे सुन लीजिये कि अगर मुझे यह मालूम हो कि ख़ुदान-ख्वास्ता आपकी माली हालत ख़राब हो चुकी है तो मुझ पर इसका कोई असर नहीं पड़ सकता। अगर मुझे यह पता चले कि आपने किसी और को मुहब्बत करना शुरू कर दिया है तो मैं आप के रास्ते से हट कर चाहे खुद कैसी ही तकलीफ में मुतबला हूँगी; मगर आपको तकलीफ़ न उठाने दूँगी। अगर मुझे पता चले, खुदा न करे, कि आपको कोई ऐसा रोग लग गया है, जिसका इलाज मुमकिन नहीं तो मैं अपनी क़िस्मत का लिखा

समझूँगी; मगर मैं आपको न नज़र-अन्दाज़ करूँगी और न छोड़ सकूँगी।"

हमने बड़ी हिम्मत करके कहा—"रअना जो कुछ तुम कह रही हो, वह मुझे तुम्हारे बारे में मालूम था। इसलिए मैं तुम्हारे सामने आज बेनक़ाब आना चाहता हूँ, ताकि इस रंगीन नक़ाब से धोखा न खा सको। मैं तुम्हें धोखा नहीं दे सकता, तुमसे झूठ नहीं बोल सकता, मैं तुमसे किसी क़िस्म का दिखावा और कपट नहीं कर सकता। मेरे दिल की इतनी फटकार मेरे लिए काफ़ी है कि मैंने अब तक यह बात तुमसे क्यों न की। मगर आज मैं बेनक़ाब तुम्हारे सामने आ रहा हूँ। अगर तुम मुझसे नफ़रत करोगी तो मैं अपने को इसका मुस्तहक़ समझूँगा..."

रअना ने बात काट कर कहा—"यह आख़िर आपको हो क्या गया है? लेकिन इस कमबख़्त शिब्बू मियाँ ने तो कोई गुल नहीं खिलाया है? आख़िर ये आप कैसी बातें कर रहे हैं? मेरा दम उलझ रहा है ये बातें सुनकर।"

हमने कहा—"मुझे मुआफ़ कर दो रअना और ये कड़वे घूँट पी लो। मैंने बड़ी मुश्किल से आज अपने में यह जुर्रत पैदा की है कि तुम्हारे सामने इतना ख़तरनाक सच बोल ही दूँ कि मैं तुम्हारे क़ाबिल नहीं। तुम एक शरीफ़ ख़ानदान की बेटी हो। तुम्हारा बाप ख़ानदानी और समाजी एतबार से बहुत बुलंद है और वह शरीफ़ इनसान जितना बुलंद है, मैं उतना ही नीच हूँ। मैं तुम्हारी कसौटी पर पूरा नहीं उतरता। दर असल मैंने तुम्हारी तौहीन की है कि मेरा नाम तुम से जोड़ा जाता है।"

और हमने अपना पूरा इतिहास विस्तार के साथ रअना को सुना दिया कि हम क्या थे, किन हालात में हमें हिजरत करनी पड़ी और यहाँ आकर हम क्या से क्या बन गये। वालिद साहब ने जो ढोंग रचाया था, वालिदा साहिबा के पागलपन की जो कहानी मशहूर की थी, मिस पाल को जिस उद्देश्य से रखा गया था, सारांश यह है कि सभी कुछ रअना को सुना दिया। उसकी यह दशा कि वह मूर्ति बनी बैठी थी। और सिवाय इसके उसमें कोई परिवर्तन नहीं आया था। चेहरे का रंग धीरे-धीरे उड़ कर बिलकुल उड़ चुका था। यहाँ तक कि जब हम पूरी दास्तान सुना चुके तो भी वह उसी प्रकार मौन और अचल बैठी रही, यहाँ तक कि कुछ इन्तज़ार करने के बाद हमें ख़ुद उसे सम्बोधित करना पड़ा

—"अब मैं अपने असल रूप में तुम्हारे सामने हूँ और अब तुम मुझे अच्छी तरह देख सकती हो।"

यह सुनना था कि रअना दोनों हाथों से अपना मुँह छिपाकर एक घुटी हुई-सी चीख़ के साथ कुर्सी से उठी और लड़खड़ाती हुई कमरे से बाहर चली गई। हम देर तक किंकर्त्तव्यविमूढ़ से कमरे में अकेले बैठे रहे। रअकस आया और हमें सूँघकर चला गया। नीरो आया कुछ देर सिर हमारे पैरों से रगड़ा, कुछ देर मुँह उठाये हमें देखता रहा और आख़िर वह भी तनहा छोड़ गया। जब देर तक रअना वापस न आई तो हम भी उसके कमरे से निकल कर खोये-खोये-से अपने घर आकर अपने कमरे में बन्द हो गये। मगर बावजूद इस मानसिक कष्ट के मालूम होता था कि जैसे किसी भयानक ऑपरेशन का भय लगा हो और ऑपरेशन एक दम हो जाय। घाव की जलन और दुर्बलता का एहसास अवश्य होता है, मगर दिल में वह दुखप्रद भय नहीं होता। अब अगर कोई चिन्ता थी तो सिर्फ़ यह कि रअना पर जाने क्या बीती होगी। उसका वह हृदय-विदारक चीत्कार आत्मा में अब तक तैर रहा था। काश ! कोई उससे जाकर कह देता कि—

'अरे मुँह ढाँक कर रोने वाले,
दम उलट जायगा फ़रियाद न कर।'

मिस पाल ने खाने के लिए पूछा तो इनकार कर दिया और तबियत की ख़राबी का बहाना कर दिया। आराम से पड़े रहने के लिए कहा। मगर जब ज्यादा पूछ-ताछ होने लगी तो उससे सिर्फ़ इतना कहा कि ख़ान बहादुर साहब के घर जाइये और रअना का हाल मालूम करिये। मिस पाल ने ख़ान बहादुर साहब के यहाँ से आकर उत्तर दिया कि रअना बीबी को तो ख़ुदा जाने क्या हो गया है कि बेहोश पड़ी हैं और ज्वर से फुंक रही हैं। और दिल के दौरे मालूम होते हैं। ख़ान बहादुर साहब डाक्टर को लेने गये हैं अभी गाड़ी पर।

और शाम तक यह भी मालूम हो गया कि डाक्टर ने उसकी इस दशा को किसी गहरे आघात का असर बताया है और घर वालों को रोगिणी का मन बहलाये रहने की हिदायत की है। रअना को देखने वालिद साहब भी गये,

मिस पाल भी बार-बार गई, मगर हमारे लिए आप-ही-आप यह बहाना पैदा हो गया कि हमारे डाक्टर ने दिल की कमज़ोरी बता कर चलने-फिरने की मनाही कर दी और इसी कारण से मिस पाल को भी समझा दिया कि रञ्जना की बीमारी की कोई खबर हमें न पहुँचायें ।"

: २७ :

एक ओर तो क़िस्मत का लिखा यह पूरा हुआ और दूसरी ओर घर में जो कुछ हो रहा था, ख़ुदा न करे कि दुश्मन के घर में भी हो। वालिद साहब की मानसिक दशा इतनी बिगड़ गई थी कि उन्हें हमारा बीमार पड़ना भी खल रहा था और वह जब कभी हमें देखने आते थे यह अफ़सोस करते थे कि बीमार क्यों हैं; बल्कि हम ही से उन्हें गोया शिकायत होती थी कि इस आपत्ति के समय तुम से यह आशा न थी कि तुम भी इस प्रकार बीमार पड़कर मुझे बिलकुल अकेला छोड़ दोगे। इस मुसीबत का सामना करने के लिए आज भी जब वह मिर्ज़ा साहब के साथ तशरीफ़ लाये, हमें देखकर और मिस पाल से हमारा पूरा हाल सुनकर मिर्ज़ा साहब से कहने लगे—"साहब, अजीब आजकल की जवानियाँ और नौजवानियाँ होती हैं कि बड़े ही खर्राट क़िस्म के रोग लेकर यह नौजवान पड़ जाते हैं। भला बताइये दिल भी कहीं नौजवानी में कमज़ोर होता है ?'

मिर्ज़ा साहब ने तुरन्त समर्थन किया। बोले—"बल्कि हुज़ूर दिल तो बस एक ही चीज होता है जवानी और नौजवानी में।"

वालिद साहब इस समय हँसी-मजाक के मूड में न थे, मिर्ज़ा साहब को झिड़क दिया—"साहब, आप जाने क्या कह रहे हैं ? मैं यह अर्ज़ कर रहा था कि आख़िर मैं भी कभी इतनी उम्र का था। यह दिल की कमज़ोरी की क़िस्म के रोग मुझे तो कभी हुए नहीं।"

मिर्ज़ा साहब ने फिर दरबारदारी की—"हुज़ूर वाला, आप का ऐसा दिलो-दरिया आजकल के लोग कहाँ से लायेंगे ? मगर हुज़ूरवाला, मेरी राय है कि इस बीमारी में यह डाक्टरी इलाज तो है वाहियात—"

वालिद साहब ने बात काट कर कहा—"इलाज होना चाहिए दर असल आपका। मैं पूछता हूँ मिर्ज़ा तुम्हारा दिमाग़ आख़िर कितने पहलुओं से ख़राब

है ? पामिस्टरी के तुम उस्ताद, शायद तुम गवैये और आज डाक्टरी का भी दावा कर रहे हो ।"

मिर्ज़ा साहब ने कहा—"यह बात नहीं है हुज़ूरवाला, बल्कि बात यह है कि मेरे घराने में दिल के बीमार इस कसरत से थे और इस क़द्र तीमारदारियाँ करनी पड़ी हैं मुझे कि वाक़ई इस मरज़ का इलाज इंशा अल्लाह ग़लत न करूँगा ।"

वालिद साहब ने कहा—"मिर्ज़ा साहब, यह मेरा इकलौता बच्चा है, अंधे की लाठी । मैं इसे ज़बान की हिमाक़त पर क़ुर्बान करने को हरगिज़ तैयार नहीं हूँ ।"

मिर्ज़ा साहब खिसियानी हँसी हँसते हुए बोले—"दुरुस्त फ़रमाया हुज़ूर वाला, किसी हकीम को ज़रूर दिखा लीजिये । और अगर ना-मुनासिब हो तो फ़िलहाल बेद मुश्क का इस्तेमाल कसरत से हो और अगर सुबह निहार-मुँह साहबज़ादा साहब मुरब्बा आमला खा लिया करें तो सुब्हान अल्लाह ।"

वालिद साहब चिढ़ गये—"लाहौल विला क़ूवत ! साहब, कौन आपसे नुस्ख़ा लिखा रहा है । मैं आया था खुदा जाने क्या बातें करने इनसे और आपने यह दास्तान छेड़ दी । इनका जो इलाज हो रहा है, वह बिलकुल ठीक हो रहा है और हमें फ़िलहाल आपके डाक्टरी मश्विरा की कोई ज़रूरत नहीं । आप तो इन्हें यह बताइये कि उस अजीब जानवर को कहाँ देखा है ।"

मिर्ज़ा साहब ने फड़क कर कहा—"हुज़ूर यही मैं भी अर्ज़ करने वाला था । वाक़ई अजीब जानवर है । कहाँ ख़ान बहादुर साहब कहाँ उनके भतीजे शिब्बू मियाँ । वे निस्बत ख़ाकराना आलमेपाक । (धरती की पवित्र आकाश से क्या तुलना !)"

अब हम भी चौंके और पूछा—"क्या कहा शिब्बू मियाँ ? क्या आपने शिब्बू मियाँ को कहीं देखा है ?"

मिर्ज़ा साहब ने खास दास्तानगोई के अन्दाज़ से कहना शुरू किया—"हुज़ूर वाला, कल अचानक मेरा गुज़र अनारकली में जो हुआ तो देखता क्या हूँ कि यह हज़रत सर्राफ़ की दुकान पर खड़े अंगूठियाँ देख रहे हैं । मैं आदाब बजा लाया तो वह कुछ घबरा-से गये और बज़ाहिर बड़े तपाक से मिले;

मगर जैसे मेरा इस तरह मिलना उन्हें कुछ ज़्यादा पसन्द न आया हो। आख़िर जब मैं रुख़सत होने लगा तो मुझसे कहा कि मैं ज़रा एक ज़रूरी काम से चुपके-चुपके लाहौर आया हूँ। मेरी मौजूदगी और मुझसे अचानक मिलने का कोई ज़िक्र नवाब के हुज़ूर या ख़ान बहादुर साहब के घर में न कीजियेगा।"

वालिद साहब ने हमें सम्बोधित करते हुए कहा—"इसका मतलब यह है कि वह नामाकूल इन दिनों लाहौर में आवारागर्दी कर रहा है और शायद ख़ान बहादुर साहब को भी ख़बर नहीं है और ख़बर होती भी तो वह बेचारे उसके नाम से कानों पर हाथ रखते हैं उसका नाम सुनकर।"

वालिद साहब शिब्बू मियाँ की शान में क़सीदे पढ़ते रहे और हम बात पर विचार करते रहे कि आख़िर यह सर्राफ़ का दुकान पर किस लिए गया था। कहीं ऐसा तो नहीं कि मिस पाल को मोह लेने के लिए कुछ ज़ेवर वगैरह पेश करना चाहते हों। अफ़सोस तो यह है कि इस आकस्मिक घटना के कारण शिब्बू मियाँ वाला खेल अधूरा ही रह गया। और दो दिन से तो हमें ख़बर ही नहीं कि यह क़िस्सा आख़िर किस मंज़िल पर है। मगर किसी मंज़िल पर ख़ाक होता, मिस पाल को हमने यहाँ से जाते हुए देखा ही नहीं। वह बेचारा होटल में पड़ा सूख रहा होगा। हम इन बातों पर विचार कर रहे थे और इस बीच में वालिद साहब शिब्बू मियाँ की शान में क़सीदा पढ़ते-पढ़ते न जाने क्यों सहसा विषय बदल कर मामू जान के बारे में फ़रमाने लगे—"मिर्ज़ा साहब जिस दिन से यह क़ाफ़िला आया है, ख़ुदा की क़सम ज़िन्दगी से दिल खट्टा हो गया है।"

मिर्ज़ा साहब ने निहायत घटिया अन्दाज़ से फ़रमाया—"हालाँकि हुज़ूर, सुना यह है कि सारी ख़ुदाई एक तरफ़······"

वालिद साहब ने कहावत पूरी कर दी—"और जोरू का भाई एक तरफ़ मगर हमारे घर में तो नक़्शा यह है कि सारी ख़ुदाई एक तरफ़ और जोरू का भाई हर तरफ़। आज उस बदतमीज़ ने मेरे कमरे में अपना सड़ा हुआ हुक्क़ा लाकर न सिर्फ़ पीना शुरू किया, बल्कि वहीं चिलम पलट कर दूसरी चिलम भरना शुरू कर दी। अगर ज़बान से कुछ निकालें तो वही कहा जाएगा कि देखिये साहब बड़े आदमी हैं; इसलिए ग़रीब रिश्तेदारों की बेइज़्ज़ती करते

हैं; उन्हें हक़ीर और ज़लील समझते हैं।"

वालिद साहब की बात पूरी न हो पाई थी कि मिस पाल ने आकर कहा—"ज़रा इस कमरे में पर्दा करा दीजिए, साहबज़ादे को देखने ममानी साहब आ रही हैं।"

वालिद साहब ने तुरन्त कहा—"जल तू जलाल तू, साहबे कमाल तू, आई बला को टाल तू। कल से मेरी नाक में दम किया जा रहा है कि फ़रहत मियाँ को या तो अन्दर बुलाया जाए या हम सब जायेंगे उन्हें देखने बाहर। आओ भाई मिर्ज़ा, यह बला आकर टल ही जाए तो अच्छा है।"

वालिद साहब तो मिर्ज़ा साहब के साथ तशरीफ़ ले गए और हम ममानी साहिबा की दया पर अकेले रह गए। बात यह है कि बँधा हुआ मार खाता है। हम बिस्तर पर बीमार पड़े थे, भागने का कोई मार्ग नहीं था; इसलिए पकड़े गए। खैर ममानी साहिबा अकेली आतीं तो एक बात भी थी; मगर उनके साथ वालिदा साहिबा और सब के पीछे बी नज्जो भी चूड़ीदार पाजामा, लम्बा-सा कुर्ता और गहरे हरे रंग का दुपट्टा ओढ़े तशरीफ़ ले आईं। ममानी साहिबा ने आते ही बलायें लेना शुरू कर दीं और चूँकि उनके यहाँ रिवाज यह है कि हर कुर्सी और हर सोफ़ा छोड़ कर तीमारदारी करने वाले को अपनी विशिष्टता और घनिष्टता प्रकट करने के लिए खास तौर से मरीज़ की चारपाई पर बैठना चाहिए; इसलिए वह अपनी गुरगावी उतार कर छड़े से कड़ा और कड़े से छड़ा बजाती हुई हमारे बिस्तर पर बैठकर बोलीं—"एक तो योंही धान-पान ऊपर से ये मुई बीमारियाँ। मगर मेरे लाल कमाल करते हो तुम भी, बाहर पड़े हुए हो बीमार। ऐ बेटा! अन्दर होते तो हम लोग भी देख-भाल करते।"

अर्ज़ किया—"डाक्टर का हुक्म यही है कि शोर और तीमारदारी करने वालों की भीड़ से दूर रहना चाहिए।"

ममानी साहिबा ने चूड़ियों से लदे हाथ को मटकाते हुए कहा—"ये डाक्टर निगोड़े मारें मरीज़ को, और भी लोगों से डरा देते हैं। तुम यहाँ पड़े हो और हम सब घर में परेशान हैं। ऐ, इसे तो देखो नज्जो को, जो दो दिन से खील भी उड़कर गई हो मुँह तक। न खाने की है, न पीने की, चुप-चाप फिरा

करती है ।"

वालिदा साहिबा ने नज्जो से कहा—"ऐ बेटा, दरवाज़े से चिपटी खड़ी हो । बैठ जाओ न इधर कुर्सी पर ।"

बी नज्जो अपनी अँगुलियों के घुंघरू लगे हुए छल्लों से दरवाज़ा पर ढोल बजाने की कोशिश कर रही थीं । शायद अब जो हमने उन्हें देखा तो अपनी असलियत बेनक़ाब होकर सामने आ गई । कानों में बड़े-बड़े बाले, गले में तौक़, जो अब सिवाय हमारे परिवार के शायद ही और कहीं नज़र आता हो, और चिकन के कुर्ते में ज़ंजीरदार चाँदी के बटन । हाथों में कंगन और चूड़ियों की वह कसरत कि खुदा की पनाह और एक कलाई पर जेबी घड़ी के साईज़ की अत्यन्त भयानक घड़ी लगभग होल्डाल के तस्मों से बँधी हुई । अब कहाँ नज़र आती हैं ऐसी बहू-बेटियाँ ? हम उनके कानों के वज़नी ज़ेवर को निगाहों से तोल ही रहे थे कि ममानी साहिबा ने फ़रमाया—"अल्लाह जानता है ऐसी खुश-खुश आई थी यहाँ और तुम्हारी बीमारी से मुरझा कर रह गई । वाह री पगली ! लो और सुनो शरमा रही है बेचारी ।"

और वाक़ई वह मारे लज्जा के दुपट्टा खाए जा रही थीं । हमने उन्हें सम्बोधित करते हुए कहा—"भई, आज तो तुम इतनी बड़ी हो गई हो कि नज्जो आपा कहने को जी चाहता है ।"

ममानी जान ने दुलार से कहा—"खाक बड़ी हो गई हैं । मिज़ाज में वही बचपना है । अलबत्ता यह ज़रूर है कि अल्लाह रखे फर-फर पढ़ ज़रूर लेती है उर्दू का अखबार, ज़िद यह थी कि अँग्रेज़ी भी पढ़ूँगी; मगर बेटा मैंने तो साफ़ कह दिया कि अल्लाह रखे जब अपने घर की हो जाना फिर चाहे अंग्रेज़ी पढ़ना । मैं तो लड़की जात को अंग्रेज़ी पढ़वाने से रही ।"

वालिदा साहिबा ने कहा—"यह जो आँखों का पानी अब तक मरा नहीं है, इसकी यही वजह है और एक मैं हूँ कि मुझ बुढ़िया का गला घोंट-घोंट कर अंग्रेज़ी पढ़ाई जा रही है ।"

ममानी साहिबा ने अपनी साहबज़ादी के गुण वर्णन करते हुए फ़रमाया—"अल्लाह रखे, सूई का काम तो ऐसा करती है कि मेरी आँखों में खाक़, लोग देखते ही रह जाते हैं । तुम्हारे लिए भी तकिये के गिलाफ़ बड़े शौक़ से बनवा-

कर लाई हूँ । दे दो न वह गिलाफ़, दबोचे क्यों बैठी हो ?"

और नज्जो ने दबोचे हुए गिलाफ़ माँ की गोद में इस प्रकार उछाले कि उनकी सारी चूड़ियाँ खनक उठीं । ममानी साहिबा ने वे गिलाफ़ हमारे सामने खोलते हुए फ़रमाया—"बड़े शौक से बनाए हैं ये गिलाफ़ रातों को जाग-जाग कर ।"

इन गिलाफ़ों में से एक पर रेशम से एक कबूतर बनाया गया था, जो वास्तव में गिद्ध की जाति से था । उसकी चोंच में एक लिफ़ाफ़ा दिया हुआ था और इस लिफ़ाफ़े पर रेशम से काढ़ा गया था—"खुशआमदीद" (स्वागतम) । अब यह पूछियेगा कि तकिये के गिलाफ़ पर खुश आमदीद का क्या तुक है ? और खुश आमदीद का कबूतर से क्या सम्बन्ध है ? बहरहाल गिलाफ़ मेहनत से अवश्य बनाया गया था । रेशम के जितने रंग मिल सकते थे सब उस में खपा दिये गये थे । मिसाल के तौर पर कबूतर के पर गहरे सुर्ख़ रंग के थे और गर्दन हरे रंग की थी, दुम नीले रंग की और पंजे ऊदे रंग के । इसी प्रकार की तरकीब लिफ़ाफ़े और लिफ़ाफ़े पर लिखे हुए अक्षरों की थी । दूसरे गिलाफ़ पर घोड़ा था या शायद बकरी हो । बहरहाल इन दोनों में से एक था ज़रूर और उसके पैरों के नीचे शायद घास दिखाई गई थी । हमने घास इसलिए कहा कि उसका रंग नीला था और फिर एक फ़िकरा काढ़ा गया था इस तकिये पर । मुलाहिज़ा हो—

'उठो सोने वालो कि मैं आ रही हूँ ।'

अब विश्वास हो गया कि यह घोड़ा नहीं बकरी है, वरना वह यह क्यों कहता कि 'मैं आ रही हूँ ।' हमने बहरबाल इन गिलाफ़ों की तारीफ़ में ज़मीन-आसमान एक कर दिया और निहायत शुक्रिया के साथ उन्हें रख लिया । हालाँकि अभी यह भी तय न हुआ था कि इन्हें करेंगे क्या ? मगर उपहार का आदर करना भी आवश्यक है । ममानी साहिबा नज्जो के गुणों का वर्णन किये ही जा रही थीं कि डाक्टर के आने की सूचना पर हमारी जान बची और हमने लाखों पाये ।

: २८ :

मिस पाल एक ही चलती पुर्जा। वह समझ तो गई थी कि बात कुछ-कुछ ज़रूर है; मगर है क्या इसकी उसे ख़बर न थी और न हम से और न रअना से पूछने का उसका साहस होता था। वह रअना की तीमारदारी के लिए भीब राबर जाती रहती थी और हमारी तो तीमारदारी थी ही, मगर वह यह बात पूछते हुए जैसे कुछ डर रही थी। इधर हम जब मिस पाल को देखते थे, शिब्बू मियाँ का खयाल आता था कि खुदा जाने उन पर क्या बीत रही होगी। आखिर हमने खुद एक दिन मिस पाल से यह ज़िक्र छेड़ा—"मिस पाल आपने शिब्बू मियाँ की भी ख़बर ली।"

मिस पाल ने कहा—"चूल्हे में गये शिब्बू मियाँ। नहूस कहीं के! ऐसे सब्ज़ कदम आये कि सब कुछ बिगड़ गया। वह उधर पड़ी हैं बीमार और आप इधर पड़े हैं।"

हमने कहा—"भई बीमार तो खैर जिन्दगी की अलामत है, मगर आपने इस अजनबी मुसाफ़िर की भी तो ख़बर ली होती।"

मिस पाल ने कहा—"रोज़ आकर मेरे नौकर को एक ख़त दे जाते हैं और अब तो खान बहादुर साहब को भी ख़बर हो चुकी है कि वह लाहौर में हैं।"

हमने तुरन्त तह तक पहुँचते हुए कहा—"मिर्जा साहब ने यह ख़बर पहुँचाई होगी?"

मिस पाल ने कहा—"जी हाँ, मिर्जा साहब ने इन्हें देखा था। इसलिए यहाँ आकर नवाब साहब से कह दिया और ख़ान बहादुर साहब से भी कह दिया।"

हमने कहा—"सुना है कि वह आपके लिए कुछ जेवर ख़रीद रहे थे।"

मिस पाल ने कहा—"जी हाँ, एक अँगूठी मेरे लिए ख़रीदे हुए फिर रहे

हैं; मगर मैं मिली ही नहीं उनसे।"

हमने कहा—"भई आपको किसी-न-किसी तरह मिलना ज़रूर चाहिए।"

मिस पाल ने कहा—"और क्या ? फ़ुरसत भी बहुत है मुझे आजकल इन फ़िज़ूल बातों के लिए। कभी यहाँ हूँ, कभी रअना बीबी के पास। आप तो ख़ैर अब पहले से बहुत अच्छे हैं; मगर उनकी तरफ़ से बहुत परेशान हूँ। इतने ही दिनों में यह हाल हो गया है कि जैसे ख़ुदा न करे बरसों की बीमार हैं। ख़ान बहादुर साहब बेचारे डाक्टर-पर-डाक्टर बुला रहे हैं; मगर किसी के इलाज से कोई फ़ायदा नहीं।"

हमने कहा—"आख़िर हालत क्या है ?"

मिस पाल ने कहा—"एक बात पूछूँ ; मगर डर लगता है कि कहीं आप नाराज़ न हो जाएँ। ख़ैर नाराज हो जायेंगे तो मनवा लूँगी मगर डर तो यह है कि अल्लाह न करे, दिल का दौरा पड़ जाये।"

हमने बात टालने के लिए कहा—"भई, तो मैं इसे क्या करूँ ? यह तो कुछ अजीब इत्तफ़ाक़ है कि इसी वक्त मैं बीमार हुआ।"

मिस पाल ने कहा—"और मुझे तो बीमारी भी एक क़िस्म की मालूम होती है, बल्कि अगर मेरा क़यास ग़लत नहीं है तो बीमारी की वजह भी शायद एक ही हो। वरना मेरी समझ में यह बात नहीं आती कि आप दोनों बीमार तो ख़ैर हैं; मगर एक-दूसरे से इतने अलग-अलग खिंचे-खिंचे-से क्यों हैं कि आपके सामने जब उनका ज़िक्र आता है, आप निहायत ख़ूबसूरती से टाल जाते हैं और उनके सामने जब आपका ज़िक्र आता है, वह भी गोल हो जाती हैं। ख़ुद एक-दूसरे का ज़िक्र करना तो दूसरी बात है और अगर कोई दूसरा यह ज़िक्र छेड़े तो आप दोनों टालने की कोशिश करते हैं ?"

हम क्या उत्तर देते ? मगर उत्तर देना भी आवश्यक था; इसलिए मिस पाल को धोखा देना चाहा—"यह आप ख़ाहमख़ाह की बहस में क्यों पड़ गई हैं ? मुझे तो ख़ुदा की कसम हर वक्त अपनी बीमारी से ज्यादा रअना की बीमारी की फ़िक्र है।"

मिस पाल ने कहा—"क्या मैं पूछ सकती हूँ कि आपने कितनी बार उन का हाल मुझसे पूछा ? और हैरत यह है कि वह भी आपका हाल मुझसे

नहीं पूछतीं, बल्कि आज तो ख़ान बहादुर साहब भी यही बातें कर रहे थे।"

हमने अब अधिक दिलचस्पी लेते हुए कहा—"ख़ान बहादुर साहब ? वह क्या कह रहे थे—?"

मिस पाल ने उत्तर दिया—"जो उन्हें कहना चाहिए था, जो सब को महसूस हो रहा है। वह मुझे अलग ले जाकर बहुत ही उदास लहजे में कहने लगे कि यह बात क्या है आख़िर कि फ़रहत मियाँ कुछ खिंचे-खिंचे-से है और इधर रश्ना का भी जैसे उनसे कोई ताल्लुक़ न हो। कहीं इन दोनों में किसी तरह की अनबन या झगड़ा तो नहीं हो गया ?"

हमने पूछा—"फिर आपने क्या कहा ?"

मिस पाल ने कहा—"मैं क्या कह सकती थी। ज़ाहिर है कि मैंने तो यही कहा कि इन दोनों में अनबन तो ख़ैर हो ही नहीं सकती। मगर मुमकिन है कोई ग़लतफ़हमी पैदा हो गयी हो।"

अब हम मिस पाल को क्या बताते कि ग़लतफ़हमी पैदा नहीं हुई है; बल्कि दूर हुई है। कहावत यह है कि 'साँच को आँच नहीं', लेकिन हमारी क़िस्मत से साँच को आँच आकर रही। बहरहाल यह हमारा फ़र्ज़ था जो हमने मुहब्बत की क़ुर्बानी देकर पूरा किया और आज न सही कल सही, खुद रश्ना हमारी इस क़ुर्बानी की क़द्र करेंगी। यह रोग और मानसिक दशा अस्थायी है। समय के साथ कटुता दूर हो जायेगी कि हमने रश्ना को धोखा नहीं दिया। हमने मिस पाल को समझाते हुए कहा—"मगर आपको चाहिए था कि रश्ना से इस बारे में पूछ लेतीं या अपनी इस ग़लतफ़हमी को उनसे बात करके दूर कर देतीं।"

मिस पाल ने कहा—"मैं खुद भी इसे ग़लतफ़हमी समझती थी। मगर जब मैंने एक दिन रश्ना बीबी से यह ज़िक्र छेड़ा तो उनकी तबियत ज़्यादा ख़राब हो गई और मुझे नदामत हुई कि मैंने यह ज़िक्र छेड़ा ही क्यों।"

हमने अब भी झूठ बोला—"बहरहाल मेरी तरफ़ से आप यक़ीन कर लीजिए कि न मेरे और उनके बीच कोई ग़लतफ़हमी पैदा हुई है, न कोई अन-बन है।"

मिस पाल भला इस आसानी से मान सकती थीं। कहने लगीं—"देखिए साहबज़ादे साहब, यह सच है कि आपमें और रअना बीबी में जो मेल-जोल पैदा हो चुका है, इस मेल-जोल में अगर कुछ अनबन की सूरत भी पैदा हो जाये तो सिवाय आप दोनों के कोई दूसरा उसे दूर नहीं कर सकता। अगर कोई बात हुई भी होगी तो आप मुझे न बता सकते हैं और न बतायेंगे। मगर इतना बेवक़ूफ़ आप मुझे न समझिये कि आप कह दें कि कोई बात हुई ही नहीं और मैं उस पर विश्वास कर लूँ।"

हमने कहा—"देखिए मिस पाल, जब आप इतनी समझदार हैं तो आपको मुझसे यह सवाल ही नहीं करना चाहिए था! बात यह है कि अगर कोई बात नहीं हुई है तो मैं यह बताऊँगा क्या! और अगर हुई भी है तो संभवत: आपको मैं कैसे बता सकता हूँ? इसलिए यह जिक्र ही रहने दीजिए। अलबत्ता यह बताइये कि हमारे यहाँ जो नए मेहमान आए हैं, उन्हें भी पढ़ने का आपको मौक़ा मिला है।"

मिस पाल ने उपेक्षा के भाव से कहा—"पढ़ने का शौक़ मुझे ज़रूर है; मगर मैं सिर्फ़ मुस्तनद किताब पढ़ती हूँ। यह नहीं जहाँ कोई कागज़ पड़ा पाया पढ़ने बैठ गई।"

हमने कहा—"अच्छा तो गोया मेरे मामू और उनकी नज्जो बेटी आपके नज़दीक ऐसे गये-गुजरे लोग हैं।"

मिस पाल ने आँखें निकालकर कहा—'मैं तो यह कह रही थी कि मुझे पढ़ने की ज़रूरत ही क्या है? वह आपके रिश्तेदार हैं, मेहमान आये हैं, बस मेरे लिए इतना ही जानना बहुत है।"

हमने कहा—"और अगर आपको यह मालूम हो जाए कि उनकी तशरीफ़-आवरी का बहुत कुछ ताल्लुक़ हमसे है तो?"

मिस पाल ने अब भी उपेक्षा के भाव से कहा—"यह ज़ाहिर है कि वह आपके मामू हैं, आप उनके भानजे हैं। आपही से हो सकता है उनके तशरीफ़ लाने का ताल्लुक़।"

हमने कहा—"अच्छा खैर यह बताइये कि आप इन लोगों को देखकर हैरान नहीं हुई कि ये हमारे इतने करीबी रिश्तेदार कैसे हो सकते हैं?"

मिस पाल ने कहा—"क्यों क्या हुआ होने को ? यह कोई ज़रूरी बात तो नहीं कि ख़ानदान में सभी लोग पढ़े-लिखे और पैसे वाले हों। ख़ुद मेरे घराने में बहुत से लोग ऐसे अमीर हैं कि अगर मैं अपने-आपको उनकी रिश्तेदार कहूँ तो लोगों को मुश्किल से विश्वास आएगा। और बहुत से बेचारे इतने ज़्यादा ग़रीब हैं कि अगर मैं उनसे अपनी रिश्तेदारी ज़ाहिर करूँ तो लोग मज़ाक समझेंगे।"

मिस पाल नियम के विपरीत बहुत ही रूखी-फीकी बातें कर रही थीं। इसलिए हमने उन्हें यह बात जता देना ज़रूरी समझा—"आख़िर आप इस कदर संजीदा बनने की क्यों कोशिश कर रही हैं ? अजब कानूनी से जवाब दे रही हैं आप ?"

मिस पाल ने बड़े दर्दनाक अंदाज़ से कहा—"साहबज़ादे साहब, अगर आप बुरा न मानें तो आपकी ये असंगत बातें मुझे कुछ ज़्यादा पसंद नहीं आ रही हैं। मैं ख़ुद नहीं जानती कि मैं आपकी किसी बात का क्या जवाब दे रही हूँ। मेरा सारा ध्यान उस कोठी के एक ऐसे कमरे की तरफ़ है जहाँ एक सुन्दर फूल मुर्झाया हुआ पड़ा है और दिन-दिन उसका रंग उड़ रहा है। साहबज़ादे साहब, आप तो सोच भी नहीं सकते कि रअना बीबी को क्या हो गया है ? वह क्या-से-क्या होकर रह गई ? आपको नहीं मालूम कि ख़ान बहादुर साहब की आजकल क्या हालत है। मैंने उनकी बेगम साहिबा को ख़ुद छिप-छिप कर रोते हुए देखा है।"

हम एकदम उठकर बैठ गए और मिस पाल इस प्रकार सहमकर रह गई जैसे वह भूल गई हो कि ये बातें हमारे सामने करने की नहीं हैं। मगर वह भावना में बहकर अपने को संयत न कर सकी। हमने तकाज़ा किया—"मिस पाल, आप कहे जाइये मैं वायदा करता हूँ कि अपने कमज़ोर दिल को मज़बूत इरादे से क़ाबू में रखने की कोशिश करूँगा।"

मिस पाल ने कहा—"मैं तो सिर्फ़ यह कह रही थी कि इधर आपका यह हाल है उधर उनका वह हाल। और यह मैं अच्छी तरह जानती हूँ कि आप दोनों एक-दूसरे के लिए क्या कुछ कर सकते हैं। फिर आख़िर यह क्यों है ? अगर बात कोई हो भी गई है तो हिम्मत से काम लेकर उसे भुलाने की

कोशिश क्यों नहीं करते ?"

कितने विवश थे हम कि न मिस पाल को कुछ बता सकते थे, न रअना के इस दर्द का कोई उपचार था हमारे पास। यह थी लगी हुई वह आग जो सच ने लगाई थी। उस सच ने जिसके बारे में प्रसिद्ध है कि यह साँच को आँच नहीं, मगर हम इसका दोष सच को क्यों दे रहे हैं? यह भी तो हो सकता है कि यह आग उस झूठ ने—उस लगातार झूठ ने लगाई हो, जो यहाँ आने के बाद से बोला जा रहा है। यह सब कुछ इसी का नतीजा है कि वालिद साहब ने बदले हुए हालात के साथ अपनी असलियत को बदलने की भी कोशिश की और इस कोशिश में वह इतने सफल हो गए कि यह झूठ दिन-दिन भयानक से भयानकतर बनता चला गया। और आखिर वह दिन आ गया कि इस सारे झूठ और कपट का भेद खुल जाय। हम रअना की निरीहता और सरलता से खेले थे। हमारे परिवार ने ख़ान बहादुर साहब की कुलीनता पर बट्टा लगाया था। और हम उस घृणा और अवज्ञा के पात्र थे जो रअना के मन में हमारे प्रति उत्पन्न हो गया था। मगर दंड तो हमें यह मिल रहा था कि वह घृणा भी नहीं थी। वह तो जैसे घुली जा रही थी। अपने ऊपर सब कुछ झेलकर वह अपनी ही आग में भस्म हो रही थी।

हम इन विचारों में उलझ कर रह गए और मिस पाल ने यह समझा कि उसकी अप्रिय बातचीत ने हमारे दिल पर फिर बहुत बुरा असर किया है। इसलिए उसने सबसे पहले तो हमें एक खुराक दवा की दी और इसके बाद इधर-उधर की बातों से अत्यन्त अभिनय के साथ मन बहलाने और रोचकता पैदा करने का प्रयत्न किया। मगर हमने उससे क्षमा-याचना की कि इस समय मैं आराम चाहता हूँ, अतः वह दबे पाँव कमरे से निकल गई।

: २६ :

हमारी तबियत काफ़ी सँभल चुकी थी और डाक्टर साहब ने हमें टहलने की इजाज़त दे दी थी। उधर रम्रना के स्वास्थ्य के बारे में भी संतोषजनक ख़बरें मिल रही थीं। मगर एक आशंका हमारे मन में थी कि कहीं डाक्टर साहब ने यह सलाह न दी हो कि हम दोनों को एक-दूसरे के स्वास्थ्य के सम्बन्ध में अच्छी ही ख़बरें सुनाई जायें। बहरहाल इसका परिणाम भी अच्छा हो रहा था। यह हालत तो एक तरफ़—मगर हमारे घर में जो मुसीबत आई हुई थी, उसका कोई इलाज समझ में न आता था। रात ही खाने पर वालिद साहब और मामू साहब में काफ़ी मैं-मैं, तू-तू हो गई थी। वह तो ख़ुदा भला करे मिस पाल का, जिनकी उपस्थिति के विचार ने वालिद साहब को क़ाबू में रखा। मगर इस समय वही मिस पाल अत्यन्त सहमी और घबराई हुई भागी हमारे पास आई—"ख़ुदा के लिए जल्दी चलिये। नवाब साहब बन्दूक ढूँढते फिर रहे हैं और मैंने कारतूस की पेटी स्टोर में छिपा दी है।"

हम बहुत ही घबराये हुए घर में जो गये तो दूर ही से वालिद साहब की आवाज़ आई—"तुम अपनी जिस बहन पर फूल रहे हो, मैं उसका ख़ातमा किये देता हूँ। यहाँ जो रुसवाई तुम मेरी करना चाहते हो उसके बाद ज़िंदा रहना तो यों भी बेकार है, मगर मैं अपनी मौत को कारआमद क्यों न बना लूँ? इस औरत को गोली मारकर सूली पर चढ़ जाऊँगा।"

मामू साहब उधर से बोले—"मेरे जीते-जी तो मेरी बहन पर आँच नहीं आ सकती। तुम रईस होगे तो अपने घर के होगे। चार पैसे क्या मिल गये कि दिमाग़ ही ख़राब हो गया। मैं भी तो दुनिया को बताऊँगा कि इस नवाबी के पर्दे में एक नाई अपने कैंची-उस्तरे लिए बैठा है।"

वालिद साहब कड़के—"ज़बान सँभाल कर बात कर, कमीना कहीं का।"

मामू साहब भी शराफ़त पर आ गये—"मैं कमीना हूँ, जो अपने बाप-दादा को नहीं भूला। तुम शरीफ़ हो जो अपना नाई होना भूलकर यहाँ नवाब बने बैठें हो और शरीफ़ों को धोखा देकर उनकी बेटी लाना चाहते हो। मेरी बच्ची पर ज़िन्दगी-भर गाली चढ़ाई और अब चार पैसे के नशे में ऐसे बहके कि उसी को अपनी शान के ख़िलाफ़ समझने लगे।"

वालिद साहब ने कहा—"मैं मेहतरानी व्याह लाऊँगा, भंगन ले आऊँगा अपने लड़के के लिए। मगर तुम्हारी लड़की से क़यामत तक मेरे लड़के की शादी नहीं हो सकती।"

अब ममानी साहिबा भी बोलीं—"तो कौन आपके हाथ जोड़ रहा है। मगर मेरी बेज़बान बच्ची का भी सब्र पड़ेगा कि अगर यह घर न उजड़े तो मेरा ज़िम्मा। इलाही जो मेरी मासूम बच्ची का सब्र समेटे उस पर बिजली गिरे! काला साँप डसे उसे···।"

अब हमने भी आगे बढ़कर इस युद्ध-क्षेत्र में अपनी वीरता का प्रदर्शन बेहतर समझा—"साहब यह क्या तूफ़ान आया हुआ है। जो सुनेगा वह क्या कहेगा?"

वालिद साहब ने उसी प्रकार गरजते हुए कहा—"अब मुझे किसी की परवाह नहीं है। मैं डंके की चोट कहता हूँ कि मैं नाई हूँ, मेरा बाप नाई था, मेरा दादा नाई था। मगर मेरे बेटे की शादी फ़ज़लू (मामू जान) की लड़की से नहीं हो सकती। मुझे यह तो मालूम है कि यह बात खान बहादुर साहब के यहाँ पहुँच कर रहेगी।"

मामू जान ने सीने पर हाथ मारकर कहा—"अजी मैं पहुँचाऊँगा, मैं उन्हें बताऊँगा कि एक नाई के बच्चे ने आपकी शराफ़त का यह मज़ाक उड़ाया है।"

हमने कहा—"आख़िर आप दोनों मेरी बात क्यों नहीं सुनते। मैं यह झगड़ा अभी एक मिनट में ख़त्म किये देता हूँ।"

वालिद साहब ने गरजकर कहा—"नामुमकिन है। यह क़िस्सा अब ख़त्म नहीं हो सकता।"

हमने कहा—"मगर आप मेरी बात तो सुन लीजिये। मुझे न दरअसल ख़ान बहादुर साहब का कोई डर है न किसी का। मैं इख़लाक़ी तौर पर सिर्फ़

रश्ना का कसूरवार था कि मैंने उससे अपनी असलियत क्यों छिपाई । इसलिए कुछ दिन पहले मैं उसे सब-कुछ बता चुका हूँ कि मैं दरअसल क्या हूँ और क्यों मैं अब तक नवाबज़ादा बना रहा । उसके बाद से वह बीमार पड़ी है और इधर मैं बीमार पड़ा हूँ । मैं उसे कह चुका हूँ कि मैं उसके क़ाबिल नहीं और उसका मेरा संयोग नहीं हो सकता ।"

ममानी साहिबा को जैसे मुँह माँगी मुराद मिल गई । एकदम अपना रवैया और अपने तेवर बदल कर बोलीं—"बेटा, तुम क्यों इस झगड़े में अपनी जान गँवा रहे हो ? यह बिरादरी के झगड़े तो होते ही रहते हैं । लाठी मारे कहीं पानी जुदा होता है । भाई साहब को इस वक़्त गुस्सा है थोड़ी देर में ख़ुद सँभल जायेंगे ।"

मामू जान ने अपनी बीवी साहिबा को डाँटा—"तू चुप रह हरामज़ादी ! आई वहाँ से सँभल जायेंगे । मैं नज्जो का गला घोंट दूँगा, मगर अब इनके यहाँ न ब्याहूँगा ।"

वालिद साहब फिर चीख़े—"अंगूर खट्टे हैं । कहने लगे मैं नहीं ब्याहूँगा । यहाँ किस की शामत आई है कि तुम्हारी लड़की लेगा । और मैं तो तुम्हारे ख़ानदान की जो एक लड़की ला चुका हूँ, उसी को तलाक़ दे रहा हूँ । ले जाओ अपने साथ अपनी बहन को भी । उसका गुज़ारा अब इस घर में नहीं है ।"

मामू साहब फिर चीख़े—"तुम मेरी बहन को भी बे-आसरा न समझना और न अपनी दौलत पर फूलना । मैं तो इस दौलत की भी सारी दुनिया में पोल खोलूँगा कि यह तुम्हारे हाथ कैसे लगी । भूल गये वे दिन जब टके-टके की हजामतें बनाते थे ।"

वालिद साहब ने हमसे कहा—"मना कर लो इसे, वरना इस वक्त इस घर में ख़ून हो जायगा ।"

ममानी जान बोलीं—"मैं कह रही हूँ । आप बाहर जाइये, और यह इधर आयें । बे-बात की बात पर झगड़ा हो गया है ।"

हमने कहा—"देखिये साहब, गुस्से से ज़्यादा ज़रूरी यह है कि आप सब ज़रा ठंडे दिल से बैठकर मेरी बात सुन लें । यह जो कुछ हो रहा है इसका सीधा मुझसे ताल्लुक़ है और मेरा ही फ़ैसला आख़िरी फ़ैसला होगा ।"

ममानी जान ने समर्थन किया—"ठीक बात है, वह ग़रीब तो कह रहा है कि ख़ान बहादुर की लड़की से वह इनकार कर चुका है।"

वालिद साहब ने कहा—"तू कह चुका न, क्या कहते हो ? अब तो सब चुप हैं।"

हमने कहा—"देखिये, ख़ान बहादुर के यहाँ मेरी शादी होने का अब कोई सवाल पैदा नहीं होता। इसलिए उनका ज़िक्र तो अब आप सब छोड़ ही दें। रह गया हमारा नाई होना, वह भी कोई ढकी-छिपी बात नहीं है कि इसकी हमें धमकी दी जाय। अब सवाल सबसे बड़ा यह है कि नज्जो बीबी से जो रिश्ता तय हुआ था, उसका क्या बनेगा ? इसका साफ़ जवाब यह है कि यह रिश्ता वालिद साहब ने तय किया था, वही इसके लिए ज़िम्मेदार हैं। जहाँ तक मेरा ताल्लुक है, मैं नज्जो को अपनी बहन समझता हूँ और बहन ही समझता रहूँगा। मेरी और उसकी शादी क़तई नामुमकिन है। मैं साफ़ इनकार कर रहा हूँ।

मामू जान ने दाँत पीसकर बीवी से कहा—"सुन ले हरामज़ादी, सुन ले और मर जा डूबकर। तू ही ये जूते खिलवाने लाई है यहाँ और यह जो बहन है मेरी उन्होंने बुलाया है मुझे यहाँ इस तरह ज़लील करने को।"

वालिदा साहिबा ने रोते हुए कहा—"भैया, मुझे क्या मालूम था कि पेट की औलाद भी मुझ ही को डसने के लिए फन उठायेगी।"

मामू जान ने कहा—"बहरहाल जो कुछ क़िस्मत में लिखा था पूरा हुआ। अब इस घर का दाना-पानी हराम है हम पर।"

ममानी जान ने हमसे कहा—"फ़रहत मियाँ तुमसे यह उम्मीद न थी कि जिस मामी ने तुमको औलाद से ज़्यादा हमेशा यह समझकर चाहा कि बेटी से दामाद प्यारा होता है, तुमने आज उसी के अरमानों का ख़ून कर दिया।"

हमने कहा—"ममानी जान, मेरा क़सूर सिर्फ़ यह है कि मैं अपनी ज़िंदगी हमेशा के लिए दुखी बनाने की बजाय, इस समय सच बोल रहा हूँ। मैं नहीं चाहता कि मेरे साथ मेरी बहन नज्जो भी अपनी ज़िंदगी ख़राब कर ले।"

मामू जान ने बीवी को डाँटा—"क्यों ख़ुशामद कर रही है हरामज़ादी। बाँध अपना बिस्तर और निकल यहाँ से। चली है उन तिलों से तेल निकालने

जो पत्थर के बने हुए हैं। साँप का बच्चा सपोलिया ही होता है।"

वालिद साहब फिर कड़क कर बोले—"फिर ज़बान बेक़ाबू हुई।"

मामू जान ने कहा—"यह गुर्रे किसी और को दिखाना। कसम है परवरदिगार की आँतें ढेर कर दूँगा यहीं अभी।"

हमने कहा—"इस गाली-गलौज से अच्छा तो यही है कि वाक़ई आप तशरीफ़ ले जायें।"

मामूजान ने कहा—"बरखुरदार तुम क्यों निकाल रहे हो? हम अपनी सज़ा पर खुद पहुँच चुके हैं और जा रहे हैं यहाँ से।"

और फिर बीवी से कहा—"अब मुँह क्या देख रही है? उठती है कि उठूं जूता लेकर।"

और ममानी जान ने उठ कर अपना सामान बटोरना शुरू कर दिया। वालिद साहब ने हमें अलग ले जाकर कहा—"ख़ुदा के लिए कोई तरकीब ऐसी निकालो कि यह जो तुम्हारी माँ है यह भी उन्हीं के साथ दफ़ा हो जाय यहाँ से। यह सब इसी लफ़ंगी का किया-धरा है। और मुझे नफ़रत हो गई है इसकी सूरत से। दूसरे, अगर यह घर में रही तो इन लोगों से कोई-न-कोई सिलसिला बराबर चलता रहेगा।"

हमने कहा—"अब आप इस वक्त यह झगड़ा खड़ा न करें। इन लोगों को चले जाने दीजिए। इसके बाद मैं वालिदा साहिबा को सीधे रास्ते पर लाने की कोशिश करूँगा।"

वालिद साहब ने कहा—"फिर वही बचपने की बातें। यह औरत कभी ठीक न हो सकेगी और जब तक यह इस घर में है, इस घर का ढंग यही रहेगा।"

ठीक उसी समय रोने की आवाज़ें आने लगीं। हमने आगे बढ़ कर देखा कि वालिदा साहिबा और ममानी जान गले मिली खड़ी हैं और दोनों रो रही हैं। इस रोने-धोने से निपट कर मामूजान अपनी बीवी-बेटी समेत जाने लगे तो हमने सलाम किया; मगर वह मुँह फेरकर निकल गए। वालिद साहब ने अलबत्ता कहा—"खस कम जहाँ पाक।"

: ३० :

हम शाम की चाय पीकर यह विचार ही कर रहे थे कि आज कहीं बाहर जाकर थोड़ा-सा समय गुज़ारें कि ख़ान बहादुर साहब ने हमारे कमरे में आते हुए कहा—"अस्सलाम एकम, क्या हाल है बरख़ुरदार और भाई साहब कहाँ हैं ?"

जब से रअ़ना की तबियत ख़राब हुई है। आज पहली मर्तबा ख़ान बहादुर हमारे यहाँ यों आए हैं। एक बार हमें देखने आये थे; मगर उस समय रअ़ना के बारे में कोई चिन्ताजनक निर्णय नहीं हुआ था। हमने उन्हें देखकर और इस क़दर प्रसन्न पाकर मन-ही-मन में आश्चर्य तो किया; मगर उन्होंने आश्चर्य करने का भी पूरा अवसर न दिया। फिर बोले—"बरख़ुरदार मैं पूछ रहा हूँ, भाई साहब कहाँ हैं ?"

हमने कहा—"जी वे अपने कमरे में होंगे। मैं ख़बर करता हूँ अभी।"

ख़ान बहादुर साहब ने कहा—"सिर्फ़ ख़बर न कीजिए, बल्कि पकड़ लाइए उन्हें मेरे पास और खुद भी साथ ही तशरीफ़ लाइए।"

और यह कह कर एक-दो ताज़ा पत्रिकायें उठाकर बड़े तरंग से सीटी बजाते हुए कुर्सी पर बैठ गए। हम जाकर थोड़ी ही देर में वालिद साहब को बुला लाए तो ख़ान बहादुर साहब ने बड़े प्रेम से उनका हाथ पकड़ कर कहा—"ज़रा, आप तशरीफ़ लाइए दोनों मेरे साथ।"

ख़ान बहादुर के साथ हम दोनों उनके घर तक गए और वह हम दोनों को लिए हुए उस कमरे में पहुँचे, जहाँ रअ़ना अब तक बीमार पड़ी थी। हम लोगों को देखकर उसने उठने के प्रयत्न में असफल रहकर, सिर्फ़ अपने ऊपर चादर ले ली और आश्चर्य से हमें देखकर नज़रें चुराने लगी। और ख़ान बहादुर साहब ने वालिद साहब को सम्बोधित करते हुए कहा—"भाई साहब, खुदा की क़सम इतने दिनों के बाद आज मेरे चेहरे पर हँसी आई है और आज मैंने दोपहर

का खाना पेट-भर कर खाया है। ज़रा इन दोनों को देखिये कि क्या हाल है इनका। मगर मैं शुक्रगुज़ार हूँ आपके साले फ़ज़लू मियाँ का, जिनकी तशरीफ़-आवरी ने सारी गुत्थी सुलझा दी।"

और वालिद साहब सन्नाटे में आ गए—"फज़लू ! क्या वह यहाँ भी आया था ?"

खान बहादुर साहब ने कहा—"जी हाँ। वह मुझे सब मालूम हो चुका है कि वह आप से नाराज़ होकर आप के यहाँ से चले गए और अब आपके ख़िलाफ मेरे कान भरने आये थे। बहरहाल उनकी तशरीफ़-आवरी ने यह गुत्थी ऐसी सुलझाई है कि सुन लीजिए। उन हज़रत ने आकर आपके ख़ान-दानी हालात पर कुछ ऐसी रोशनी डाली कि मैं सन्नाटे में आ गया। मगर जब एक आदमी खुद यह कहे कि साहब मैं जाति का नाई हूँ और यह मेरे सगे चचेरे भाई भी हैं और बहनोई भी तो आदमी आख़िर कह ही क्या सकता है। उनका तो बहरहाल शुक्रिया अदा करके मैंने उन्हें फिर बुलाया है। मगर जब मैंने यह ज़िक्र इन साहबज़ादी की मौजूदगी में अपनी बीवी से किया और साथ-ही-साथ यह कहा कि इस तमाम क़िस्से में यह बात समझ में नहीं आती कि फ़रहत जैसे सच्चे और खरे आदमी ने इस धोखेबाज़ी में कैसे हिस्सा लिया, तो यह साहबज़ादी एकदम बोल पड़ीं कि उन पर धोखाबाज़ी का इल-ज़ाम ग़लत है और वह यह बात मुझे पहले बता चुके हैं। ज़ाहिर है कि इस पर मुझे और भी ताज्जुब हुआ कि यह मालूम हो जाने के बाद भी यह साहबज़ादी उन हज़रत से मिलती रहीं तो मालूम यह हुआ कि दरअसल इन दोनों की बीमारियों का सबब ही यह है कि यह भेद रअना को बता देने के बाद उधर तो हमारे बरख़ुरदार फ़रहत मियाँ दिल के दौरे लेकर पड़े, इधर यह साहबज़ादी ऐसी पड़ीं बिस्तर पर कि माँ-बाप का दम ही निकाल दिया। भाई साहब आपको नहीं मालूम कि इन साहबज़ादी के थूक और बलग़म के मुआने शुरू हो गए थे और एक डाक्टर साहब ने तो मश्विरा दे दिया था कि इन्हें तुरन्त किसी सैनोटोरियम में पहुँचा दिया जाय। यह तय था कि ख़ुदान-ख़ास्ता तपेदिक़ के पाले पड़ी हैं यह साहबज़ादी। अब मालूम हुआ कि यह क़िस्सा था। अच्छा साहब अब मुझ से सुनिये। फ़रहत मियाँ ज़रा यह दरवाज़ा

बन्द कर दो।"

और हमने जब दरवाज़ा बन्द कर दिया तो खान बहादुर साहब ने वालिद साहब को सिग्रेट पेश करते हुए कहा—"तो कहिए इन बच्चों ने, खुदा इनकी उम्र में बरकत दे, मेरे सिर से अजीब बोझ उतार दिया है। मेरे और आप के घर आने का जब से सिलसिला शुरू हुआ है, मैं बराबर इसी फ़िक्र में था कि इलाही इसका क्या अन्जाम होगा ? मेरा दिल मुझ पर मलामत करता था कि मैं कितना बड़ा रंगा हुआ सियार हूँ और मैं अपने दिल में ऐसा चोर पाता था कि किसी वक्त मुझे इतमीनान हासिल न था। आप के बारे में यह सोचा भी न जा सकता था कि आप यह होंगे जो अब मालूम हुआ है। ज़ाहिरी हालत देख-देख कर मैं डर रहा हूँ कि खुदानखास्ता कभी आप को यह मालूम हो गया कि मैं क्या हूँ तो नतीजा क्या होगा ?"

वालिद साहब ने चौंक कर फ़रमाया—"जी क्या फ़रमाया आप ने ? मैं क्या हूँ ? क्या मतलब है आपका ?"

खान बहादुर साहब ने होंठों में मुसकराते हुए कहा—"अभी ज़रा सुनते जाइए भाई साहब। खुदा की क़सम, यह तो यह बात हुई कि वाक़ई हैरत होती है क़ुदरत के इन्तज़ामात पर। मुझे सबसे ज़्यादा फ़िक्र इन बच्चों की थी कि यह किस उमंग के साथ एक-दूसरे से मिल रहे हैं और आप मासूम दिलों को एक-दूसरे से वाबास्ता रख चुके हैं। इस भेद के मालूम होने के बाद कि मैं भी दरअसल क़ौम का क़नमैलिया हूँ—"

वालिद साहब ने फिर कहा—"जी कनमैलिया ?"

खान बहादुर साहब ने कहा—"भाई साहब बात यह है न कि असल में तो हम और आप सब शेखों में से हैं। आपके यहाँ पेशा यह शुरू हो गया कि बाल बना दिया करते थे, इसलिए आप नाई कहलाने लगे। हमारे बुज़ुर्ग कान का मैल निकाल दिया करते थे, इसलिए उनका यह पेशा उनकी जाति बन गया। अब हम लाख खान बहादुर और नवाब बन गए हैं; मगर जो हमें जानते हैं, वे हमें कनमैलिया और नाई ही समझेंगे न ? तो साहब मैं दिल में डरता रहता था कि अगर यह भेद कभी खुला तो इन दोनों की जुदाई किस क़दर खतरनाक साबित होगी। चुनाँचे देख लीजिए कि साहबज़ादी ने यह

मालूम होते ही अपना क्या हाल कर लिया है। और अगर यही बात मुझे कुछ दिन और न मालूम होती तो ज़ाहिर है कि जिस नामुराद बीमारी का शुबहा किया है सचमुच लग जाती।"

अब वालिद साहब के चेहरे पर भी वह चमक थी। उन्होंने बड़े स्नेह और उत्साह से ख़ान बहादुर साहब का हाथ पकड़कर कहा—"भाई साहब, ख़ुदा की क़सम आपने मुझे नई ज़िन्दगी दे दी है। अल्लाह जानता है कि अब यह उम्मीद तो खैर थी ही नहीं कि शादी हो सकेगी, अब तो फ़िक्र यह थी कि इस पड़ोस का क्या बनेगा ? ख़ुदा की क़सम मेरी समझ में न आता था कि मैं क्योंकर आप से आँखें चार कर सकूँगा। अब आप से क्या चोरी ? कई मर्तबा दिल में ख़याल पैदा हुआ कि आपके सामने शर्मिन्दा होने से बेहतर यही है कि बंदूक-भर के कनपटी पर रखूँ और हलालख़ोरों की यह ज़िंदगी बसर करने से बेहतर यही है कि हराम मौत मर जाऊँ। मुझे किसी का ख़याल न था, सिर्फ़ आपका ख़याल था और आप ही से आँखें चार करने की हिम्मत न होती थी।"

ख़ान बहादुर साहब ने कहा—"और मुझे किसका डर था सिवाय आपके ? ख़ुदा की क़सम अन्दर-ही-अन्दर खून खुश्क हुआ जाता था इस ख़याल से, आख़िर होगा क्या और यह बेड़ा पार कैसे होगा ? कई बार इरादा किया कि फ़रहत मियाँ को अलग ले जाकर समझा दूँ कि बेटा हम तुम्हारे लायक़ नहीं हैं। तुम एक ऊँचे घराने के चश्म-ओ-चिराग़ हो। हमारा-तुम्हारा कोई जोड़ नहीं। बस इतना एहसान करो कि रअना को अपने से इतना बेज़ार कर दो कि तुम्हारा बिछुड़ना उसके लिए खतरनाक साबित न हो। मगर तब इतनी भी हिम्मत नहीं हुई। मगर शाबाश है इस बच्चे को जिसने ऐसा भयानक सच बोलकर यह साबित कर दिया कि बड़े-बड़े शेर-दिल भी इस दुनिया में मौजूद हैं और साथ-ही-साथ यह भी पता चल गया कि फ़रहत चाहे एक ऊँचे ख़ानदान का बच्चा न हो; मगर खुद इतना ऊँचा है। उसने रअना को फ़रेब देना न चाहा पर अपनी मुहब्बत को क़ुर्बान कर दिया; मगर धोखा न दिया उसे जिसे चाहता था।"

वालिद साहब का इस समय ख़ुशी के मारे बुरा हाल था। खिले जा रहे

थे और समझ में न आता था कि क्या करें। कहने लगे—"खुदा की क़सम यक़ीन नहीं आता कि मैं जाग रहा हूँ। कुछ अजीब सपने की हालत महसूस हो रही है।"

ख़ान बहादुर साहब ने कहा—"और सुनिये वह आपके मिर्ज़ा साहब पहले तो यह ख़बर लाये कि वह नामाक़ूल आदमी शिब्बू मियाँ लाहौर ही में मौजूद है। फिर उन हज़रत का सुराग़ लगाकर उनके मुस्तक़िल पैग़ामरसाँ बन गये और उनकी करतूत लाने लगे मेरे पास। उन साहबज़ादे की बराबर यह कोशिश थी कि मैं उन्हें मुआफ़ कर दूँ और उनकी कमीनगी को शरबत का घूँट समझकर पी जाऊँ। मिर्ज़ा साहब भी उसके बड़े सिफ़ारिशी बने हुए हैं। यह क़िस्सा तो चल ही रहा था कि आपके साले आ पहुँचे और उन्होंने यह गुल खिलाया। मगर भाई साहब मैं उनका तो बहरहाल एहसान मानता हूँ कि उनकी बदौलत मुझे इतने बोझों से छुटकारा पाने का मौक़ा मिला। अब जब फ़रहत और रअना के सेहरे के फूल खिलेंगे तो साँप लोटेगा उन लोगों के सीनों पर।"

वालिद साहब ने कहा—"भाई जान इस मुबारक मौक़ा पर हम दोनों शादी की तारीख़ तय ही कर लें इस वक़्त।"

ख़ान बहादुर साहब ने कहा—"मैं तो आपको अख़्त्यार दे ही चुका था; मगर अब तो इन्हीं दोनों को ही तय करना पड़ेगा। जिस क़दर ये अपनी सेहत बहाल करेंगे, उतनी जल्दी शादी हो सकेगी।"

यह कहकर चूँकि आदमी समझदार हैं। वालिद साहब को साथ लेकर बाहर चले गए और बोले—"आप से कुछ ज़रूरी बातें करनी हैं।"

और अब हम दोनों कमरे में तनहा रह गये। मगर अब हालत यह कि—

'मुहब्बत है, मगर इस कशम-कश में,
तक़ाज़ा हुआ इधर से था उधर से।'

देर तक दोनों अपनी जगह ख़ामोश रहे आख़िर हमने पहल की—"यह हाल क्या बना लिया है आपने ?"

रअना ने कहा—"ख़ुद भी कभी आईना देख लिया होता। आधे भी

नहीं रहे ।"

हमने कहा—"बहरहाल अब तो गुज़र गया यह वक़्त भी । अब क्या इरादा है ?"

रअना ने कहा—"सेहत हासिल करने का इरादा है और क्या होता ? मगर मुझे तो ऐसा महसूस हो रहा है जैसे मैं बिलकुल ठीक हूँ । अपनी बीमारी का खुद मुझे तो अब एहसास भी नहीं ।"

हमने कहा—"आपको न होगा, मगर मुझे है आपकी बीमारी का एहसास ।"

रअना ने कहा—"ज़रा मुझे सहारा दीजिए मैं बैठना चाहती हूँ ।"

हमने उसे उठा कर बैठा दिया तो उसने इस बार कहा—"सचमुच मैं अब बीमार नहीं हूँ ।"

: ३१ :

रअना की सेहत बड़ी तेज़ी से बहाल हो रही थी, बल्कि अब सिवाय मामूली-सी कमज़ोरी के बीमारी का उस पर कोई असर न था। और हमारा कमज़ोर दिल तो ऐसे ताक़तवर हुआ था कि अब क्या अर्ज़ करूँ। मगर इस तमाम क़िस्से में जो सबसे ज़्यादा खुश प्राणी था, वह मिस पाल थी। मोर के सदृश नाचती फिरती थी और मालूम होता था कि जैसे यह भी हम दोनों के साथ बीमारी से अभी उठी हैं। और सच यह है कि मिस पाल पर जो गहरा असर था, वह भी किसी बीमारी से कम न था, बल्कि वह खुद कहती थीं कि मुझे भी मानसिक रोग से मुक्ति प्राप्त हुई है। रअना पर मिस पाल की शराफ़त और ख़लूस का इतना गहरा असर था कि वह तो यहाँ तक कह चुकी थीं कि मेरी सगी बहन होती तो शायद वह भी इतनी सावधानी और लगन से तीमारदारी न कर सकती जिस हमदर्दी, मुहब्बत और स्नेह के साथ मिस पाल ने इस बीमारी में मेरी ख़िदमत की है। और यह तो हम भी देख रहे थे कि जब तक यह गुत्थी सुलझी न थी, मिस पाल विचित्र कष्ट में पड़ी मालूम होती थीं। उन्होंने एक साथ हमारी और रअना की तीमारदारी में दिन-को-दिन और रात-को-रात न समझा और फिर स्थायी रूप से इस मानसिक कष्ट में पड़ी रहीं कि आख़िर बात क्या है? यहाँ तक कि एक दिन हमारे सामने अपने-आपको संयत न कर सकीं और उबल पड़ीं। मगर अब वह फूली न समाती थीं।

आज भी जब कि लॉन पर गार्डनचेयर्स डाले हम और रअना बैठे धूप खा रहे थे मिस पाल ने क़रीब आकर कहा—"बेहया हो तो ऐसा, जैसे मेरे सच्चे आशिक़ शिब्बू मियाँ हैं। अजीब क़िस्म के बेहया हैं। वह रोज़ मेरे घर आते हैं और एक ख़त मेरे नौकर को दे जाते हैं। आज नौकर ने यह ताज़ा ख़त लाकर दिया है।"

हमने मिस पाल के हाथ से लिफ़ाफ़ा ले लिया जो इतर में बसा हुआ था। रुख़ना ने भी लिफ़ाफ़ा झपटने की कोशिश की; मगर हमने कहा—"यह ग़लत है। मैं पढ़कर सुनाये देता हूँ।"

और लिफ़ाफ़ा खोल कर पढ़ना शुरू किया—"सरकार, यह मेरा ग्यारहवाँ ख़त है। मैं हर रोज़ ठीक वक़्त पर जाता हूँ और जो अरमान लेकर जाता हूँ, उन्हीं को आहें बनाकर लौटा आता हूँ। यह तो मालूम हो चुका है कि आप फ़रहत और रुख़ना की बीमारियों के कारण से मसरूफ़ हैं, मगर अपने बीमार को किस पर छोड़ा ?

'अच्छे जैसे हो मरीज़ों का खयाल अच्छा है।'

खुदा के लिए सिर्फ़ एक बार वक्त निकाल कर मुझ से मिल लीजिये।

आपका और सिर्फ़ आपका

शहाना।

रुख़ना ने कहा—"मिस पाल, यह क़िस्सा तो बीच ही में रह गया।"

हमने कहा—"भई, आज मिस पाल आप उनसे मिल ही लें। क्या ख़याल है रुख़ना, चलेगी ना ?"

रुख़ना ने कहा—"मेरा ख़याल कुछ और भी है कि आज डैडी और अंकल को भी यह तमाशा दिखा दिया जाय। बात यह है कि जब हमारे बुज़ुर्ग हमारे दोस्त बने हुए हैं तो क्यों न हम उन्हें भी इस तमाशे में शरीक़ करें। लुत्फ़ आ जायगा उन्हें भी।"

हमने कहा—"मगर ख़ान बहादुर साहब के ग़ुस्से से डर लगता है।"

रुख़ना ने कहा—"नहीं, मैं उन्हें समझा दूँगी कि वह सिर्फ़ ख़ामोशी से तमाशा देखें।"

मिस पाल ने कहा—"अगर इन दोनों का जाना भी तय हो जाय तो मुझे पहले से बता दीजियेगा। पहली बार तो मेरे घर जायेंगे। कम-से-कम चाय ही मिल जाय ज़रा ढंग की।"

हमने कहा—"चाय तक तो ख़ैर ग़नीमत है; ढंग-बंग की नहीं बस बिलकुल सादा। असल मक़सद है तमाशा देखना, चाय की दावत थोड़ी है।"

मिस पाल ने कहा—"फिर भी मुझे ज़रा पहले से मालूम हो जाय।"

रअ्ना ने कहा—"बस आप तय समझिये । मैं इन दोनों को ज़रूर ले आऊँगी ।"

यह तय होने के बाद मिस पाल तो अपने घर चली गई और रअ्ना ने पहले तो वालिद साहब को जाकर पूरा क़िस्सा सुनाया, फिर उन्हें साथ लेकर खान बहादुर साहब को सारी कहानी कह सुनाई और यह तय हो गया कि आज ये दोनों बुजुर्ग भी साथ चलेंगे ।

हम लोग जब निश्चित समय पर मिस पाल के यहाँ पहुँचे तो वहाँ बाक़ायदा टी-पार्टी की व्यवस्था थी और निहायत पुर-तकल्लुफ़ नाश्ते से मेज़ सजी हुई थी । ख़ान बहादुर साहब ने यह व्यवस्था देखते ही कहा—"भई यह क्या तकल्लुफ़ किया है तुमने मिस पाल ?"

मिस पाल ने प्रसन्न होकर कहा—"खान बहादुर साहब यह तकल्लुफ़ नहीं, बल्कि मैंने रअ्ना बीवी और साहबज़ादे साहब के ग़ुसले सेहत की खुशी में यह पार्टी की है । और यह मेरी ख़ुशनसीबी है कि इसमें हमारे नवाब साहब और आप भी शरीक़ हो गये हैं ।"

वालिद साहब ने कहा—"भाई साहब, इस लड़की ने मेरे घर मुलाज़िम की हैसियत से आकर अपने को ऐसा घुला-मिला लिया है कि मुझे वाक़ई महसूस होता है कि मेरा सिर्फ़ एक लड़का नहीं, बल्कि एक लड़की भी है ।"

ख़ान बहादुर साहब ने कहा—"मैं यह बात मिस पाल के मुँह पर कहना नहीं चाहता था, मगर यह जिक्र छिड़ गया है तो कहना ही पड़ता है कि मुझे तो यह वाक़ई घर ही की बच्ची मालूम होती है और यह हैसियत उसने अपनी ईमानदारी और मुहब्बत में हासिल की है । वाक़ई बड़ी खूबियों की लड़की है ।"

वालिद साहब ने तो बाक़ायदा स्नेह जताना शुरू कर दिया । सिर पर हाथ फेरकर बोले—"बेटी यह तकल्लुफ़ वाकई ज़रूरत से ज्यादा है । बहरहाल अगर यही तुम्हारी ख़ुशी है तो हम भी तुम्हारी खुशी में शरीक हैं ।"

मिस पाल ने कहा—"अब आप लोग चाय से निपट लीजिये, वरना वह हज़रत आ जायेंगे तो सबका उन्हीं की तरफ़ ध्यान जायेगा ।"

अतः चाय शुरू हो गई और मिस पाल ख़ातिरदारी में लग गईं । अभी

हम लोगों ने चाय ख़त्म भी न की थी कि मिस पाल के नौकर ने आकर कहा कि वह हज़रत एक और साहब के साथ आ गये हैं।

हममें से किसी की समझ में न आ सका कि यह दूसरे कौन साहब हैं। बल्कि अंदेशा यह पैदा हो गया कि इन दूसरे साहब के कारण कहीं रंग-में-भंग न पड़ जाये। बहरहाल मिस पाल ने इस कमरे का दरवाजा बन्द करते हुए उस कमरे का दरवाज़ा खोला तो शिब्बू मियाँ की आवाज़ आई—"तशरीफ़ लाइये।"

और मिस पाल से यह कहते हुए कमरे में दाख़िल हुए—"यह आप मिर्ज़ा साहब से हरगिज़ परेशान न हों, अपने ही आदमी हैं और आपकी बड़ी तारीफ़ करते हैं। इन बेचारे ने इस ज़माने में मेरा बड़ा साथ दिया और मेरा हाथ देखकर मुझे बता चुके हैं कि मुहब्बत में कामयाबी के अलावा और कोई ख़ास बात मेरे हाथ में नहीं है।"

मिस पाल ने कहा—"मगर मुझे मिर्ज़ा साहब से डर ही लगता है। यह हमारे नवाब साहब के दोस्तों में से हैं। अगर इन्होंने वहाँ जाकर यह ख़बर कर दी कि आपका यहाँ आना-जाना है तो मैं वहाँ न रह सकूँगी।"

मिर्ज़ा साहब ने अपने ख़ास ढंग से कहा—"कमाल फ़रमाती हैं आप भी पाल बेगमा।"

और इस पाल बेगमा पर रअना ने अपने मुँह में रूमाल ठूँस लिया। मिर्ज़ा साहब कह रहे थे—"मैं इस क़िस्म का आदमी नहीं हूँ। अव्वल तो मेरा और आपके नवाब साहब का ताल्लुक सिर्फ़ इस कदर है कि वह निहायत बेव-क़ूफ़ किस्म के आदमी हैं और उन्हें कभी-कभी मेरे मशवरों की ज़रूरत होती है।"

शिब्बू मियाँ ने कहा—"आप गोया हर एक के रहनुमा बन जाते हैं।"

मिर्ज़ा साहब ने कहा—"मन आनम कि मन दानम (जो कुछ मैं हूँ मैं ही जानता हूँ।) मैं तो इसलिए इनके साथ आया हूँ कि मैं भी इनकी सिफ़ारिश आपसे करूँ कि अब तो इनकी हालत बख़ुदा देखी नहीं जाती, ख़ुदा के लिए इन पर रहम कीजिये।"

शिब्बू मियाँ ने कहा—"यह क्या रहम करेंगी, आसरा देकर इतने दिन ग़ायब

रहीं। नौकरी का यह मतलब तो नहीं कि आदमी अपने घर पर ही न आये।"

मिर्ज़ा साहब ने कहा—"यह मिस पाल हैं ही निहायत भोली-भाली, इनकी जगह मैं होता तो इस बूढ़े को ऐसा शीशे में उतारता कि सारी दौलत उस घर के बजाय इस घर में नज़र आती। ऐसे बेवक़ूफ़ रईस तो क़िस्मत से मिलते हैं।"

मिस पाल ने कहा—"मगर मुसीबत यह है कि मैं अकेली जान, रुपया भर भी लूँ तो आख़िर किसके लिए?"

शिब्बू मियाँ ने विषय बदला—"यह फ़रमाइये कि अब रंग क्या है वहाँ? सुना है कि हमारे अहमक़ चचा जान ने अपनी साहबज़ादी को किसी दिन नवाब के लौंडे के साथ देखकर वह मरम्मत की है साहबज़ादी की कि वह बिस्तर से लग गई हैं।"

मिस पाल ने कहा—"यह आपसे किसने कहा? वहाँ तो इसके उलट फिर दोनों की शादी तय हो रही है और मैं खुश हूँ कि यह शादी हो जाय तो मुझे आप पर भरोसा पैदा हो।"

शिब्बू मियाँ ने मिर्ज़ा साहब से कहा—"इन्हें एक शुबहा यह पैदा हो गया है ख़ामख़ाह कि मैं कहीं रअना से शादी न कर बैठूँ। हालाँकि भई खुदा लगती कहियेगा मिर्ज़ा साहब, मैं कर सकता हूँ रअना से शादी?"

मिर्ज़ा साहब ने कहा—"अजी, लाहौल विला क़ूवत! और यह गोया इतने बेवक़ूफ़ हैं कि आपके होते हुए रअना को पसन्द करेंगे। इस लौंडिया में धरा ही क्या है? गड़बड़ ज़रूर है। मुझे तो वह पाकबाज़ मालूम होती नहीं।"

और ठीक इसी समय एक बिजली के सदृश कड़कती हुई आवाज़ वातावरण में गूँज उठी—"ख़बरदार! जो एक लफ़्ज़ भी तेरे मुँह से निकला नमकहराम, कमीने, तेरी यह मजाल कि तू रअना के बारे में ऐसी बातें कहे।"

और हमने देखा कि वालिद साहब क्रोध में भरे हुए इस कमरे से निकल कर उस कमरे में पहुँच चुके हैं। मिर्ज़ा साहब की जो दशा हो सकती है वह तो ज़ाहिर है; मगर हम भी आश्चर्य-चकित थे कि यह एकदम हुआ क्या? वालिद साहब के वहाँ पहुँच जाने के बाद ख़ान बहादुर साहब भी उस कमरे में पहुँच गये और बड़े कटु स्वर में शिब्बू मियाँ को सम्बोधित करते हुए कहा—"और तुम तो इस क़ाबिल हो कि चौराहे पर खड़े करके गोली मार दी

जाए तुम्हें । बेग़ैरत अपनी बहन के बारे में इस क़िस्म की बातें एक ग़ैर आदमी से बैठा सुन रहा था।"

वालिद साहब ने कहा—"ये दोनों आज असल रंग में नज़र खूब आये। मैं वाक़ई बेवक़ूफ़ था कि इस ख़तरनाक इनसान को निहायत अहमक क़िस्म का मुसाहिब समझता रहा । अपनी हैसियत ही भूल गया है कि दस्तरख़ान की मक्खी तो है आपकी हक़ीक़त और मशग़ला है, जिस थाली में खायें उसी में छेद करने का।"

और मिर्ज़ा साहब ने कदमों पर गिरकर वालिद साहब के पैर पकड़ लिये। मगर वालिद साहब ने वहाँ से हटकर कहा—"मैं नहीं चाहता कि तू मेरे पैरों को नापाक करे। ख़ैरियत इसी में है कि मैं वाक़ई तेरा खून पी लूँ, दूर हो जा मेरे सामने से।"

ख़ान बहादुर साहब ने कहा—"ख़ैर यह तो है ही ग़लीज़ मक्खी! मगर इस कुत्ते के बच्चे बेहया को देखिये। आया है वहाँ से मिस पाल से मुहब्बत जताने। यह मुँह और मसूर की दाल। जी चाहता है कि जूते मार कर निकालूँ यहाँ से। मिस पाल अपने नौकर से कहिये कि इन दोनों को गर्दन में हाथ देकर निकाल दे यहाँ से।"

हमने आगे बढ़कर कहा—"बस यह अपनी सज़ा को काफ़ी पहुँच चुके हैं। अब यह खुद चले जायेंगे। तशरीफ़ ले जायें आप दोनों।"

शिब्बू मियाँ और मिर्ज़ा साहब दोनों सिर झुकाए हुए कमरे से बाहर निकल गए। और उनके चले जाने के बाद कुछ देर तो उन्हीं दोनों का ज़िक्र होता रहा और आख़िर में वालिद साहब ने कहा—"भई, इस कोफ़त को दूर करने के लिए आज मैं अपनी बेटी मिस पाल के घर में शादी की तारीख का एलान करता हूँ कि हम दोनों ने अगले महीने की दूसरी तारीख़ तय की है।"

रअना इस कमरे से खिसक गई और दूसरे कमरे में जाकर हमें हाथ के इशारे से बुलाया। हम भी वहीं पहुँच गये तो रअना ने आज पहली बार यह चंचलता की कि हमारे कान में चुपके से कहा—"मुबारक हो..."

और हम यह भी न कह सके मारे ख़ुशी के।